

Registered with the Registrar of Newspaper for India
R.N.I. Regd. No.: MPHIN/2006/16946

94251-01132



ISSN-2582-5976

मध्य भारत

कृषक भारती

हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली मासिक पत्रिका

Supported by:

Kisaan
Helpline
+91-7415538151

READ FOR ONLINE EDITION

Website: www.krishakbharti.in

E-mail: bhartikrishak75@gmail.com

वर्ष-21 अंक-2

ग्वालियर, मई -2026

मूल्य 30 रुपए



उत्तर कृषि महोत्सव-2026: प्रदर्शनी एवं प्रशिक्षण

माननीय केंद्रीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्री शिवराज सिंह चौहान ने माननीय केंद्रीय कृषि एवं किसान कल्याण राज्य मंत्री रामनाथ ठाकुर तथा हरियाणा के कृषि मंत्री श्याम सिंह राणा की गरिमामयी उपस्थिति में मध्य प्रदेश के रायसेन में आयोजित 'उत्तर कृषि महोत्सव (प्रदर्शनी एवं प्रशिक्षण)' के अंतर्गत किसानों के हित में आयोजित कृषि विज्ञान केंद्र (KVK) सेमिनार में सहभागिता की तथा किसानों को संबोधित किया।

छत्तीसगढ़: रायपुर को 'सर्वश्रेष्ठ सोयाबीन अनुसंधान केंद्र का राष्ट्रीय पुरस्कार'



इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर में संचालित अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना (सोयाबीन) को राष्ट्रीय स्तर पर वर्ष 2023-2025 की मूल्यांकन अवधि के दौरान उत्कृष्ट प्रदर्शन के लिए 'सर्वश्रेष्ठ केंद्र पुरस्कार' से सम्मानित किया गया है।

मध्यप्रदेश: सीएम ने किया प्रदर्शित स्थानीय उत्पादों का अवलोकन



मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव ने नरयावली में सांदीपनि विद्यालय के लोकार्पण सहित अन्य विकास कार्यों के भूमि-पूजन एवं लोकार्पण समारोह स्थल पर प्रदर्शित स्थानीय उत्पादों का अवलोकन किया।



मध्य भारत कृषक भारती

श्री गणेशाय नमः



किसान कृषि सेवा केंद्र

श्री सौंलिया सेठ



Gmail

Kisankrishisevakendramanasa@gmail.com



7692967419



9109726855

हमारी सेवाएँ:-

सभी तरह के उन्नत बीज- अश्वगंधा, अकरकरा, कलौजी, तुलसी, केमोमाईल, चिया, जीरा, हल्दी, सौप, सर्पगंधा, तरबूज एवं सभी प्रकार की सब्जिया एवं फुलो के बीज, कृषि दवाईया, उर्वरक, वर्मी कम्पोस्ट यूनिट, अजोला यूनिट, किसान के घर पर तैयार वर्मी कम्पोस्ट, जैविक खेती से संबंधित सभी कार्य, सभी फसलो के फोरोमेन ट्रेप, सोयाबीन स्पाईरल ग्रेडर, कृषि एवं किसान संबंधित समस्त प्रकार के ऑर्डर की विश्वास पूर्ण, पूर्ति करना हमारा परम ध्येय है।

कृषि विभाग एवं उद्यानिकी विभाग संबंधित सभी योजनाओं के पंजियन किए जाते है।

उन्नत किस्म के नर्सरी के पौधे, मासिक, साप्ताहिक कृषि साहित्य सभी प्रकार की पत्रिका उपलब्ध है।

स्थान- पुराना टॉकीज, एल.आई.सी. ऑफिस के सामने, रामपुरा रोड़ मन्दासा जिला नीमच (म.प्र.) 458110



कृषि दर्शन

खेत-खलिहान का राजा



श्रेशर 35HP हापर मॉडल



हडम्बा कटर श्रेशर



ऑटोफीडिंग श्रेशर



मक्का श्रेशर



मिनी कम्बाईन श्रेशर



रेज बेड सिड ड्रिल



स्प्रे पंप 500 लि. गन बूम मॉडल



मोटर लिफ्टर



सुदर्शन इण्डस्ट्रीज

विक्रम नगर मौलाना, बड़नगर, जिला-उज्जैन-456771 (म.प्र.)

फोन : 07367-262235, मोबा.: 09827078882

वेब : www.krishidarshan.com, ई-मेल : krishidarshan@rediffmail.com

मई-2026



एमएसपी हकीकत न बनने से मजबूरी में बिक्री

कहने को तो देश डिजिटल क्रांति के दौर में पहुंच चुका है और वित्तीय लेनदेन से लेकर तमाम क्षेत्रों में आधुनिक तकनीक वरदान साबित हो सकती है। लेकिन हमें यह मानकर चलना चाहिए कि देश का परंपरागत किसान डिजिटल सुविधाओं के उपयोग में खुद को सहज महसूस नहीं करता।

आधुनिक डिजिटल तकनीक का प्रयोग नई पीढ़ी की सोच के अनुरूप है, लेकिन पुरानी पीढ़ी इसके उपयोग में खुद को असहज पाती है। कमोबेश किसानों के कल्याण के लिए बनाये गए मंडी पोर्टलों पर भी यही बात लागू होती है। जाहिर तौर पर किसानों के लिये मंडी पोर्टलों का उपयोग आसान होना चाहिए। बाकायदा किसानों को डिजिटल साक्षर बनाने की मुहिम चलाने की जरूरत भी है। सही मायनों में डिजिटलीकरण का मुख्य उद्देश्य कृषि उपजों की खरीद की प्रक्रिया को सरल बनाना था। लेकिन हरियाणा में जमीनी हकीकत इसके विपरीत नजर आ रही है। दरअसल, हम एक आम किसान से यह उम्मीद नहीं कर सकते कि वह शहरी लोगों की तरह पोर्टलों, पासवर्डों और प्रक्रियात्मक पेचीदगियों के जाल का सहजता से उपयोग कर सके। यही वजह है कि न्यूनतम समर्थन मूल्य यानी एमएसपी का लाभ उठाने के लिये उसे एक जटिल प्रक्रिया का सामना करना पड़ता है। उल्लेखनीय है कि राज्य



भर की मंडियों से द ट्रिब्यून में प्रकाशित हालिया रिपोर्टों से एक जैसा पैटर्न नजर आया है। अब राज्य में फसलों की बिक्री के लिये अनिवार्य पोर्टल- ई-खरीद और मेरी फसल, मेरा ब्योरा यानी एमएफएमबी- साइट क्रैश, डेटा विसंगतियों और सत्यापन की विफलताओं से ग्रस्त है। जिससे कई तरह की समस्याओं से किसानों को रूबरू होना पड़ रहा है। यहां तक कि कई जिलों में, किसानों को गेट पास तक नहीं दिए गए हैं। वजह यह बतायी जा रही है कि किसानों का रिकॉर्ड मेल नहीं खा रहा है। कई बार अंतिम व महत्वपूर्ण क्षणों में सर्वर ने काम नहीं किया। जिसका खमियाजा फसल बेचने आने वाले किसानों को उठाना पड़ रहा है।

दरअसल, ऐसी अनेक तकनीकी जटिलताओं के परिणाम तात्कालिक व गंभीर बताये जाते हैं। किसानों की फसल तो बिक्री के लिये तैयार है, लेकिन कतिपय कारणों से उसे मंडियों में प्रवेश करने में दिक्कत का सामना करना पड़ रहा है। यही वजह है कि किसान अपने खून-पसीने की फसल निजी व्यापारियों को बेचने को विवश हो जाते हैं। किसान की मजबूरी ये होती है कि वह जल्द से जल्द फसल बेचना चाहता है। उसे अपने पहले के खर्च निकालने हैं और अगली फसल की तैयारी करनी है। जिसके चलते वह तुरंत भुगतान की आस में कम दाम में भी व्यापारियों को फसल बेचने को बाध्य हो जाता है।



भुइया के भगवान

बचपन के सुने कहानी मा, कहे रही सिया।

भुइया मा होथे दू भगवान, माता-पिता अऊ किसान।

माता-पिता जनम देवईया, अन्न देवईया किसान।

मैं दुनो के कर्जदार रहव, जब तक तन मा प्रान।

दूनो के उपकार बरोबर, बरोबर दूनो के संस्कार।

एक जीवन के सार सिखाए, दुसर भुइया से प्यार।

एक जीवन के निर्माता, ता दुसर हे जीवन दाता। कतका सुधर रचना करे, सोच समझ के विधाता।

दूनो के कर्तव्य बरोबर, दुनो के संघर्ष बरोबर। एक बंजर मन मा ज्ञान उपजाए, दुसर बंजर भुइया हरियाए।



डॉ. प्रफुल्ल कुमार सोनी
 वैज्ञानिक, पौध रोग विभाग
 कृषि महाविद्यालय, रायपुर
 7772970287

सदस्यता ग्रहण करने एवं विज्ञापन प्रकाशन हेतु निम्न प्रतिनिधियों से सम्पर्क करें

छिंदवाड़ा (म.प्र.)	मुंगावली (म.प्र.)	उड़ीसा
रामप्रकाश रघुवंशी	भगवानदास चौबे	समीर रंजन नायक
98272-78063	96854-88453	70422-31678
***	बलिया (उ.प्र.)	***
नरसिंहपुर (म.प्र.)	आर.एन. चौबे-94535-77732	हापड़ (उ.प्र.)
नवीन शुक्ला: 89894-36330	पश्चिम बंगाल	मयंक गौड़: 83848-66823
	राजेश नायक-98831-57482	

Online मंगाएं साहित्य

मध्य प्रदेश एवं छत्तीसगढ़ में अत्यंत लोकप्रिय हिन्दी मासिक समाचार पत्रिका मध्य भारत कृषक भारती द्वारा प्रकाशित कृषि साहित्य अब आप ऑनलाइन भी खरीद सकते हैं। हमारी वेबसाइट www.krishakbharti.in पर जाकर **Purchase** को क्लिक करके ऑनलाइन ऑर्डर कर सकते हैं।

वैज्ञानिक/लेखकों के लिए सूचना

प्रत्येक माह की 20 तारीख तक प्राप्त समाचार/लेख/फोटो फीचर को प्रिंट एडिशन में स्वीकार किया जाता है तथा 21 से 30 तारीख तक प्राप्त समाचार/लेख/फोटो फीचर को डिजिटल एडिशन में सम्मिलित किया जाना संभव हो सकेगा। लेख में मोबाइल नम्बर होना अनिवार्य है।
 -संपादक

मध्य भारत कृषक भारती में प्रकाशित पाठ्य सामग्री में व्यक्त विचार वैज्ञानिकों/लेखकों के हैं। सम्पादक की सहमति अनिवार्य नहीं है। किसी त्रुटि शंका या समाधान के लिये वैज्ञानिकों/लेखकों के पते प्रकाशित किये जाते हैं जिस पर संपर्क किया जा सकता है। सभी प्रकार के विवादों के लिये न्याय क्षेत्र ग्वालियर होगा। सभी पद मानसेवी हैं।



: सम्पादक मण्डल :

प्रधान सम्पादक

राजू गुर्जर (MJC)

94251-01132

94245-22090



प्रसार/मार्केटिंग टीम

डी.के. बरार

91791-85002, 70247-93010

महेश अहिरवार: 94251-48365

: तकनीकी मार्गदर्शन/वैज्ञानिकगण :

डॉ. व्ही.एस. तोमर (पूर्व कुलपति)

राजमाता विजयाराजे सिंधिया
कृषि विश्वविद्यालय

डॉ. अर्पिता श्रीवास्तव

(Assistant Professor)

पशु चिकित्सा एवं पशुपालन
महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)

डॉ. आर.के.एस. तोमर

राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि वि.वि.
ग्वालियर (म.प्र.)

डॉ. अनिल कुमार सिंह (उद्यान वैज्ञानिक)

कृषि विज्ञान केन्द्र, पीपराकोठी (पूर्वी चम्पारण),
ऑ.रा.प्र.के.कृ.वि.वि., पूसा, समस्तीपुर

प्रो. (डॉ.) के. आर. मोर्य

पूर्व कुलपति, राजेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय
पूसा (बिहार), एवं महात्मा ज्योति राव फूले
विश्वविद्यालय जयपुर (राजस्थान)

डॉ. रंजु कुमारी (स.प्र. सह कनीय वैज्ञानिक)

पादप प्रजनन एवं अनुवांशिकी विभाग, नालन्दा उद्यान महाविद्यालय,
नूरसराय (नालन्दा), बिहार कृषि वि.वि., सबौर, भागलपुर

डॉ. भागचन्द्र जैन

प्राध्यापक एवं प्रचार अधिकारी
कृषि महाविद्यालय, इंदिरा गांधी कृषि
विश्वविद्यालय रायपुर (छ.ग.)

डॉ. विश्वनाथ सिंह कंसाना

कृषि वैज्ञानिक (कृषि प्रसार)
कृषि विज्ञान केन्द्र दतिया (म.प्र.)

डॉ. विनीता सिंह, अध्यक्ष

अनुवांशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग
AKS विश्वविद्यालय, सतना (म.प.)

तपस्या तिवारी पीएचडी शोधार्थी, मृदा विज्ञान और
कृषि रसायन विज्ञान विभाग, चंद्रशेखर आज़ाद कृषि
और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

बसंत कुमार दादरवाल

इंस्टीट्यूट ऑफ एग्रीकल्चर साइंस बनारस
हिन्दू यूनिवर्सिटी वाराणसी (उ.प्र.)

श्रीमती रिया ठाकुर (वैज्ञानिक उद्यानिकी)

कृषि विज्ञान केन्द्र, चंदनगांव, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
मोबाइल: 9907279542

डॉ. मोहब्बत सिंह जमरा (असिस्टेंट प्रोफेसर)

पशु चिकित्सा विज्ञान एवं पशुपालन
महाविद्यालय, महु, (म.प्र.)

अंदर के पन्नों पर

मध्यप्रदेश/छत्तीसगढ़

- मध्यप्रदेश में मूंग की खेती: प्रमुख रोग... 07
- प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना 08
- कवक क्रांति: मशरूम की खेती कैसे बदल रही है आजीविका 09
- टिशू कल्चर तकनीक और फल उत्पादन... 10
- लाइव फेसिंग, हरा चारा एवं कार्बन संवचयन ... 11
- गर्मियों में बढ़ते तापमान और पशु शेड... 12
- हरित एवं सतत कृषि: पर्यावरण संरक्षण... 13
- सुरक्षित भण्डारण कर अनाज को कीटों... 14
- छत पर बागवानी: एक स्वस्थ जीवनशैली 15
- न्यूट्री-गार्डन (पोषण उद्यान): महिलाओं की खाद्य ... 16
- (ससम्पर्ण): शहरी हरितकरण में वरदान या उभरता अभिशाप? 17
- टिशू कल्चर में कठिनाइयाँ और नवाचारपूर्ण उपाय 18

उत्तर प्रदेश

- किसान गौरी शंकर ने अपने गांव को बना दिया मिनी इजराइल: ... 19
- यूरिया-डीएपी संकट में गौ-आधारित खेती है एक टिकाऊ ... 20
- मक्का की उन्नत खेती: अधिक उत्पादन की वैज्ञानिक तकनीकें 21

- करकूमा लोंग के राइजोम का जैव-रासायनिक विश्लेषण 22
- अजोला: यूरिया के प्रतिस्थापन के लिए एक प्रभावी जैव उर्वरक 23
- प्रयोगशाला और फ़ील्ड में सीखने की लालसा 24
- मीरिंगा (सहजन) की खेती 25
- फालसा की खेती 26
- कद्दूवर्गीय फसलों में कीट एवं रोग प्रबंधन 27
- गर्मियों में मुर्गियों का समुचित प्रबंधन 28
- काली हल्दी की उत्पादन तकनीकी 29
- युवाओं की कृषि में भागीदारी: नवोन्मेषी प्रसार... 30
- नैनो उर्वरक: फसल उत्पादन में नैनो उर्वरकों ... 31
- दुधारू पशुओं के लिए संतुलित आहार का प्रबंधन 32
- दुधारू पशुओं के लिए संतुलित आहार का प्रबंधन 32
- फील्ड पर प्रयोगात्मक फसल 33
- पशुओं पर आधारित खेती आवश्यकताएं एवं महत्व... 34
- कार्बन फार्मिंग और कृषि वानिकी में प्रसार एजेंटों ... 35
- कृषकों की आय सृजन का महत्वपूर्ण उद्यम: मधुमदखी पालन 36
- एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन की आवश्यकता एवं महत्व 37

राजस्थान

- 'वृक्षायुर्वेद आधारित औषधीय पादपों का समग्र ... 38
- फल विज्ञान में युवाओं के लिए उद्यमिता ... 39

- बायोडायनामिक खेती 40
- वन अधिकार अधिनियम, 2006 और कृषि : ... 41
- फल विज्ञान में युवाओं हेतु उद्यमिता के नए अवसर 42

बिहार

- कटाई उपरांत बाजरा का प्राथमिक प्रसंस्करण एवं भंडारण 43
- जैविक खेती में कार्बनिक मल्लिचंग की भूमिका 44

हरियाणा

- अधिक पैदावार लेने के लिए किसान खेती में ... 45
- दूधिया मशरूम की उन्नत उत्पादन तकनीक 46
- संसाधन प्रबंधन में हरित दृष्टिकोण: एक जिम्मेदार गृह प्रबंधन 47

नई दिल्ली

- गन्ने और स्ट्राबेरी की अंतरफसल खेती... 48

झारखण्ड

- महुआ के फूलों का संग्रहण, सुखाना, भंडारण ... 49

उत्तराखण्ड

- चाउ चाउ (सेचियम एड्यूल) भारत में एक कम उपयोगी... 50

हिमाचल प्रदेश

- भिंडी में येले वेन मोजेक वायरस लक्षण और नियंत्रण उपाय 51
- सब्जी फसलों में पौध प्रबंधन: नर्सरी, हार्डनिंग एवं रोपाई ... 52



सागर के दो युवा वैज्ञानिकों को अंतरराष्ट्रीय मंच पर सम्मान

सागर (मध्यप्रदेश)। सागर स्थित Gyanveer University के लिए गर्व का क्षण है, जहाँ के दो युवा वैज्ञानिकों—डॉ. शिखा जैन एवं डॉ. शुभम जैन को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर "Young Scientist Award" से सम्मानित किया गया। यह सम्मान "1st International

ज्ञानवीर यूनिवर्सिटी के लिए गर्व का क्षण दो युवा वैज्ञानिक डॉ. शिखा जैन को महिला वैज्ञानिक अवार्ड एवं डॉ. शुभम जैन को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर युवा वैज्ञानिक अवार्ड से नवाजा गया

Conference on Research, Innovation & Women Empowerment in Sustainable Agricultural Development (ICRIWESA-2026)" के दौरान प्रदान किया गया। सम्मेलन का आयोजन विगत 12 से 14 मार्च 2026 के बीच AKS University, सतना (म.प्र.) में किया गया, जिसमें देश-विदेश के वैज्ञानिकों ने भाग लिया। डॉ. शिखा जैन को "Young Women Scientist Award" से सम्मानित किया गया, वहीं डॉ. शुभम जैन को "Young Scientist Award" प्रदान किया गया। दोनों ही Gyanveer University, सागर में सहायक प्राध्यापक के रूप में कार्यरत हैं और कृषि एवं संबंधित क्षेत्रों में उनके उत्कृष्ट योगदान के लिए यह सम्मान दिया गया। यह सम्मेलन Edu-Mentors Society of Agriculture & Rural Development (EDSARD), पंजाब के सहयोग से आयोजित किया गया, जिसमें सतत कृषि विकास, नवाचार एवं महिला सशक्तिकरण जैसे महत्वपूर्ण विषयों पर चर्चा हुई।

इस उपलब्धि से विश्वविद्यालय का नाम राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय स्तर पर गौरवान्वित हुआ है। विश्वविद्यालय परिवार एवं सहयोगियों ने दोनों वैज्ञानिकों को इस उपलब्धि पर हार्दिक बधाई देते हुए उनके उज्वल भविष्य की कामना की है।

कृषि, परंपरा और नवाचार के समन्वय से मध्यप्रदेश बना कृषि विकास का अग्रणी राज्य : सीएम



भोपाल। मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव ने कहा है कि प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में देश हर क्षेत्र में प्रगति कर रहा है। मध्यप्रदेश में कृषि और कृषि से जुड़े व्यवसायों को सह अस्तित्व की दृष्टि से बड़े सम्मान के साथ देखा गया है। समृद्ध किसान-समृद्ध मध्यप्रदेश की थीम के साथ पूरे वर्ष प्रदेश में कृषि उत्सव मनाया जा रहा है। कृषि के माध्यम से हमें प्रकृति के साथ जीने का अवसर मिलता है। देश में कृषि की परंपरा लाखों साल पुरानी है। भीम बैठिका में पुरातन काल से कृषि की परंपरा के शैलचित्र देखने को मिलते हैं। हमारे ऋषि-मुनियों ने हजारों सालों से कृषि के साथ जीने का मार्ग दिखाया है। भारतीय संस्कृति में खेती के प्रति आदर का भाव है। देश की धरती अन्न के रूप में सोना उगल रही है। देश में कभी अनाज का संकट आया था, लेकिन आज हमारे कृषि वैज्ञानिक नई-नई किस्में विकसित कर अनाज उत्पादन को बढ़ा रहे हैं। राज्य सरकार खेती को लाभकारी बनाने के लिए संकल्पित भाव के साथ आगे बढ़ रही है। पूर्व प्रधानमंत्री स्व. अटल बिहारी वाजपेयी की भावना के अनुरूप जय किसान, जय जवान में जय विज्ञान जोड़ा गया था, वर्तमान दौर में हम, इसमें जय अनुसंधान भी जोड़ रहे हैं। प्रदेश में किसानों को हम केवल बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध कराने तक सीमित नहीं हैं, बल्कि किसानों को आधुनिक तकनीक, वैज्ञानिक खेती और बेहतर मार्केट लिंकेजेंस से भी सशक्त बना रहे हैं। कृषि मंथन कार्यशाला किसानों के अनुभव, विज्ञान के नवाचार, सरकार की नीतियों और बाजार की संभावनाओं को एक सूत्र में पिरोने का सशक्त प्रयास है। मुख्यमंत्री डॉ. यादव बुधवार को जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय जबलपुर में कृषि मंथन कार्यशाला को संबोधित कर रहे थे। मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने दीप प्रज्वलित कर तथा गौमाता का पूजन कर कार्यशाला का विधिवत शुभारंभ किया।

प्रो. बालिक दास राय

बन्टी राय

98276-11495

88715-18885



अमित राय

मै. माँ उर्वरक केन्द्र

रसायनिक एवं
जैविक खाद बीज
एवं दवाई के विक्रेता



पता: भितरवार रोड, डबरा (म.प्र.)



निर्माण बाधाओं को दूर कर किसानों के खेतों तक पानी पहुँचाने के लिए निर्देश



भोपाल। उप मुख्यमंत्री श्री राजेंद्र शुक्ल ने सर्किट हाउस रीवा में विभिन्न नहर परियोजनाओं के निर्माण कार्यों की प्रगति की समीक्षा की। उप मुख्यमंत्री श्री शुक्ल ने कहा कि नहर परियोजनाओं के क्रियान्वयन में आ रही सभी तकनीकी एवं प्रशासनिक बाधाओं को तत्काल दूर किया जाए, जिससे किसानों के खेतों तक सिंचाई के लिए अविलंब पानी पहुँचाया जा सके। सिंचाई परियोजनाओं का उद्देश्य अंतिम छोर तक के किसानों को लाभान्वित करना है। निर्माण कार्य में अनावश्यक विलंब बर्दाश्त नहीं किया जाएगा। अधिकारी समन्वय के साथ काम करें और सुनिश्चित करें कि परियोजनाएं निर्धारित समय-सीमा के भीतर पूरी हों। भू-अर्जन, वन विभाग की अनुमति या अन्य स्थानीय स्तर की समस्याओं को प्राथमिकता के आधार पर सुलझाएं। कार्यों की गुणवत्ता और गति की नियमित निगरानी करें। आगामी सीजन को देखते हुए जल वितरण तंत्र को सुदृढ़ बनाएं। बैठक में बहुती नहर परियोजना, त्योथर बहाव परियोजना, नईगढ़ी माइक्रो सिंचाई परियोजना सहित अन्य नहर परियोजनाओं की प्रगति की समीक्षा की गई। बैठक में अध्यक्ष नगर निगम व्यंकटेश पाण्डेय, जल संसाधन विभाग के अधिकारी एवं संबंधित परियोजनाओं के कार्यपालन यंत्री उपस्थित रहे।

विद्यार्थियों को किया गया जैविक खाद के उपयोग का प्रयोग प्रदर्शन

कटनी। प्रधानमंत्री कॉलेज आफ एक्सीलेंस शासकीय तिलक स्नातकोत्तर महाविद्यालय कटनी में विद्यार्थियों को कम लागत तकनीकी जीरो बजट फार्मिंग के अंतर्गत प्राचार्य डॉक्टर सुनील कुमार बाजपेई के मार्गदर्शन एवं डॉक्टर व्ही के द्विवेदी के सहयोग से जैविक कृषि विशेषज्ञ रामसुख दुबे द्वारा जैविक खेती का प्रशिक्षण दिया गया। प्रशिक्षण के अंतर्गत महाविद्यालय के वनस्पति उद्यान में बन रही केंचुआ खाद का उपयोग विद्यार्थियों द्वारा सब्जियों में डालकर प्रायोगिक कार्य किया गया। जिससे विद्यार्थी अपने खेतों में सब्जियां एवं फसलों को लगाकर विभिन्न जैविक खादों, गोबर, कंपोस्ट, केंचुआ खाद, हरी खाद, जैव उर्वरक, बायोगैस, स्लरी, शीघ्र खाद, मटका खाद, जीवामृत, घन जीवामृत तथा जैविक बीज उपचार, तथा फसल अवशेष प्रबंधन का उपयोग कर जैविक कृषि उत्पाद, अनाज, दलहन, तिलहन, सब्जी, फल आदि तैयार करके स्वयं उपयोग करें तथा बाजार में विक्रय करके अतिरिक्त पैसा कमा सकते हैं।

वर्षा से गेहूं की फसल के नुकसान, चमक,

गुणवत्ता का तत्काल करें आंकलन

ग्वालियर। समर्थन मूल्य पर गेहूं उपजर्जन के संबंध में कलेक्टर श्रीमती रूचिका चौहान ने बैठक ली। बैठक में उन्होंने निर्देश दिए हैं कि हाल ही में हुई वर्षा के कारण गेहूं की फसल के नुकसान का तत्काल आंकलन किया जाए। साथ ही यह भी देखा जाए कि गेहूं की चमक एवं उनकी गुणवत्ता पर कितना असर पड़ा है। उन्होंने आंकलन कर रिपोर्ट जल्द से जल्द देने के निर्देश अधिकारियों को दिए हैं। बैठक में अपर कलेक्टर कुमार सत्यम व अपर जिला मजिस्ट्रेट सीबी प्रसाद एवं खाद्य, सहकारिता, कृषि सहित अन्य संबंधित विभागों के जिला अधिकारी उपस्थित रहे।

बैठक में कलेक्टर श्रीमती रूचिका चौहान ने एसडीएम एवं तहसीलदार को निर्देश दिए हैं कि गेहूं उपजर्जन हेतु कृषकों द्वारा कराए गए पंजीयन के रकबा एवं फसल के सत्यापन कार्य तत्काल पूर्ण किए जाए। कलेक्टर ने उप संचालक कृषि आरबीएस जाटव को निर्देश दिए हैं कि हाल ही में हुई वर्षा के कारण गेहूं की फसल के नुकसान, गेहूं की चमक एवं गुणवत्ता आदि के आंकलन की कार्यवाही तत्काल की जाए। इसके साथ ही उपजर्जन केन्द्रों पर केन्द्रवार नोडल अधिकारियों को नियुक्त किए जाने हेतु कर्मचारियों का चयन कर सूची उपलब्ध कराई जाए।



नरेन्द्र रावत
(राजपुर वाले)

9977847628

हरियाणा
कृषि सेवा केन्द्र

खाद, बीज एवं कीटनाशक दवाईयों के विक्रेता



पता :- पशु अस्पताल के सामने, भितरवार रोड, डबरा (म.प्र.)



✍ प्रथम कुमार सिंह (पीएचडी स्कॉलर)

✍ डॉ. रजनी सिंह ससोदे (एचओडी
डिपार्टमेंट ऑफ प्लांट पैथोलॉजी)

✍ डॉ. सुचरिता महापात्रा, डॉ. प्रद्युम्न सिंह
आर.वी.एस.के.वी.वी. ग्वालियर (म.प्र.)

मध्य प्रदेश की 'सुनहरी फसल' - मूंग

मूंग, जिसे 'हरा चना' भी कहा जाता है, भारतीय कृषि और खान-पान का एक अभिन्न हिस्सा है। मध्य प्रदेश, विशेष रूप से होशंगाबाद (नर्मदापुरम), हरदा, सीहोर और रायसेन जैसे जिलों में मूंग की खेती एक क्रांति बनकर उभरी है। यह फसल न केवल कम समय (60-65 दिन) में तैयार होती है, बल्कि मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने (नाइट्रोजन स्थिरीकरण) में भी सहायक है। हालांकि, मूंग की खेती में सबसे बड़ी बाधा रोगों का प्रकोप है। वैज्ञानिकों के अनुसार, यदि रोगों का समय पर प्रबंधन न किया जाए, तो फसल की पैदावार में 30% से 70% तक की गिरावट आ सकती है। मध्य प्रदेश की गर्म और आर्द्र जलवायु कई विषाणुजनित और कवकजनित रोगों के लिए अनुकूल होती है। इस लेख में हम मूंग के प्रमुख रोगों, उनकी पहचान और बचाव के उपायों पर विस्तार से चर्चा करेंगे।

1. मूंग का पीला मोजेक वायरस

यह मध्य प्रदेश में मूंग का सबसे खतरनाक रोग है। यह एक विषाणु है जिसे सफेद मक्खी एक पौधे से दूसरे पौधे तक फैलाती है।

पहचान:

* शुरुआत में पत्तियों पर छोटे-छोटे पीले धब्बे दिखाई देते हैं।

* धीरे-धीरे पूरी पत्ती पीली पड़ जाती है, लेकिन नसें (veins) हरी रहती हैं।

* गंभीर अवस्था में पूरी फसल सुनहरी पीली दिखने लगती है और फलियां नहीं बनती।

निवारण व प्रबंधन

* **प्रतिरोधी किस्में:** हमेशा रोगरोधी किस्में जैसे ब्रह्मरू-139 (सम्राट), SML-668, या शिखा ही बोएं।

* **सांस्कृतिक उपाय:** खेत से खरपतवार हटाते रहें क्योंकि सफेद मक्खी इन्हीं पर पनपती है।

रासायनिक नियंत्रण

यदि खेत में सफेद मक्खी दिखाई दे, तो तुरंत इनका छिड़काव करें:

1. इमिडाक्लोप्रिड 17.8% SL (Imidacloprid): 0.5 मिली प्रति लीटर पानी।

2. थियामेथोक्सम 25% WG (Thiamethoxam): 100 ग्राम प्रति हेक्टेयर (लगभग 0.5 ग्राम प्रति लीटर)।

2. चूर्णी फफूंद

यह रोग अधिकतर फसल पकने की अवस्था में आता है, जब तापमान में उतार-चढ़ाव होता है।

पहचान * पत्तियों, तनों और फलियों पर सफेद रंग का

मध्यप्रदेश में मूंग की खेती: प्रमुख रोग एवं उनका वैज्ञानिक प्रबंधन



पाउडर (आटे जैसा) जमा हो जाता है। * पत्तियां पीली होकर सूख जाती हैं और दाने छोटे रह जाते हैं।

रासायनिक नियंत्रण: * घुलनशील गंधक (Wettable Sulphur 80% WP): 2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। * हेक्साकोनाजोल 5% EC (Hexaconazole): 2 मिली प्रति लीटर पानी।

3. सर्कोस्पोरा लीफ स्पॉट - यह कवक के कारण होता है और नमी वाले मौसम में तेजी से फैलता है।

पहचान: * पत्तियों पर छोटे, गोल, भूरे रंग के धब्बे बनते हैं जिनके किनारे लाल-भूरे होते हैं। * धब्बों के बीच का हिस्सा बाद में गिर जाता है, जिससे पत्तियों में छेद हो जाते हैं।

रासायनिक नियंत्रण: कार्बेन्डाजिम 12% + मैनकोजेब 63% WP (Saaf): 2 ग्राम प्रति लीटर पानी का छिड़काव अत्यंत प्रभावी है।

4. शुष्क जड़ सड़न - मध्य प्रदेश के शुष्क क्षेत्रों में जहां सिंचाई की कमी होती है, वहां यह रोग अधिक देखा जाता है।

पहचान: * पौधा अचानक सूखने लगता है। जड़ें उखाड़ने पर वे काली और सूखी दिखाई देती हैं। * तने का निचला हिस्सा छीलने पर काला दिखाई देता है।

प्रबंधन

बीज उपचार: बुवाई से पहले बीज को कार्बेन्डाजिम + मैकोजेब (2 ग्राम/किग्रा बीज) या ट्राइकोडर्मा विरिडी (5 ग्राम/किग्रा बीज) से उपचारित जरूर करें।

5. लीफ क्रिकल वायरस- यह वायरस मुख्य रूप से बीज और एफिड्स (चेपा) द्वारा फैलता है।

पहचान: संक्रमित पौधे की पत्तियां सामान्य से काफी बड़ी, मोटी और झुर्रीदार हो जाती हैं। पत्ती का सिरा नीचे की ओर मुड़ जाता है। पौधा झाड़ीनुमा हो जाता है।

प्रबंधन: प्रभावित पौधों को देखते ही जड़ से उखाड़कर गड्डे में दबा दें। इसके वाहक कीट 'एफिड' को मारने हेतु डाइमिथोएट 30% EC का 1.5 मिली/लीटर की दर से छिड़काव करें।

रासायनिक दवाओं के प्रयोग में सावधानियां

खेती में रसायनों का उपयोग करते समय सुरक्षा सबसे महत्वपूर्ण है। निम्नलिखित बातों का ध्यान रखें:

1. तैयारी: दवा को कभी भी हाथ से न घोलें, लकड़ी की छड़ी का उपयोग करें। घोल बनाने के लिए हमेशा साफ पानी का प्रयोग करें।

2. सुरक्षा किट: छिड़काव करते समय शरीर पर सुरक्षा कवच, दस्ताने, चश्मा और मास्क जरूर लगाएं।

3. समय: छिड़काव हमेशा सुबह (10 बजे से पहले) या शाम (4 बजे के बाद) करें जब हवा शांत हो। हवा के विपरीत दिशा में स्प्रे न करें।

4. मिश्रण: दो अलग-अलग प्रकार के कीटनाशकों या फफूंदनाशकों को बिना विशेषज्ञ की सलाह के न मिलाएं।

5. संग्रहण: दवाओं को बच्चों और पालतू जानवरों की पहुंच से दूर, ठंडी और सूखी जगह पर रखें।

6. प्रतीक्षा अवधि: अंतिम छिड़काव और फसल कटाई के बीच कम से कम 10-15 दिनों का अंतर रखें ताकि फसल में विषैले तत्व न रहें।

दिनेश शिवहरे

Mob. : 98263-55396

मध्य प्रदेश का पहला

श्री दयाल बन्धु केन्द्र

(हिन्दीतिया वालों की दुकान)

सभी प्रकार की कीटनाशक दवाईयां, जिन्क एवं बीज आदि के थोक एवं खेरीज विक्रेता

गायत्री मंदिर के पास, जवाहर गंज, डबरा जिला ग्वालियर (म.प्र.)

E-mail : shridayalbandhu@gmail.com, dineshshivhare66@yahoo.com



✍ साक्षी चोरनेले, डॉ. नवनीत मौर्य
✍ योगेश मेश्राम, आरती घेरने

सरदार पटेल विश्वविद्यालय, बालाघाट (म.प्र.)

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना
भारत सरकार द्वारा 18 फरवरी 2016 में शुरू हो गई थी। इसका उद्देश्य किसानों को प्राकृतिक आपदाओं, कीटों व रोगों के कारण होने वाले फसल नुकसान से भी आर्थिक सुरक्षा देना है, जिससे किसान सुरक्षित रहे।

1. योजना का उद्देश्य

- * फसल खराब होने पर किसानों को मुआवजा/ बीमा राशि प्रदान करना।
- * कृषि को जोखिम मुक्त या सुरक्षित बनाना।
- * किसानों की आर्थिक स्थिति मजबूत करना
- * प्राकृतिक आपदा से होने वाले नुकसान को कम करना।

2. योजना प्रमुख विशेष

- * किसानों के लिए बहुत कम प्रीमियम।
- * नुकसान का मुआवजा सीधे किसान के खाते में।
- * कटाई से पहले या कटाई के बाद होने वाले नुकसान की भी भरपाई।
- * सभी छोटे या सीमांत किसान पात्र।
- * फसल बीमा की प्रकृति को डिजिटल या पारदर्शी बनाना।

3. किसानों द्वारा दी जाने वाले प्रीमियम राशि

- सरकार प्रीमियम का बड़ा हिस्सा देती है, किसानों को केवल फसल का एक छोटा हिस्सा ही देना होता है।
- * खरीफ फसल 2%
 - * रबी फसल 1.5%
 - * बागवानी/व्यवसायिक फसल 5%

4. बीमा कवर मिलने वाली फसलें

- खरीफ फसल:** धान, मक्का, सोयाबीन, बाजरा, मूंग, उड़द आदि।
रबी फसल: गेहूँ, चना, मसूर, जौ, सरसों, आदि
व्यवसायिक/बागवानी फसलें: कपास, गन्ना, आलू, प्याज आदि।

5. योजना के क्या-क्या नुकसान कवर होते हैं

1. बीज बुवाई से पहले के नुकसान- * सुखा *

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना



भारी वर्षा * बाढ़

II. फसल बढ़ते समय- * कीट व रोग * तूफान

* तेज बारिश * बाढ़, ओलावृष्टि

III. कटाई के बाद 14 दिनों तक- * बारिश * तूफान * ओला

IV. स्थानीय आपदाएँ

* बिजली गिरना * भूमि धसना * नदी कटाव

6. योजना की पात्रता वाले किसान

- * सभी भूमिधारक किसान * किराय पर जमीन लेकर खेती करने वाले किसान * बटाई/लीज पर खेती करने वाले किसान

7. आवेदन करने का तरीका

1. ऑनलाइन तरीका

* आधिकारिक वेबसाइट pmfbsy.gov.in पर आवेदन कर सकते हैं

* मोबाइल ऐप से लाभ उठा सकते हैं

* जन सुविधा केन्द्र/जनसेवा से जागरूकता कर सकते हैं

II. ऑफलाइन तरीका

* नजदीकी बैंक से आवेदन * सहकारी समिति से आवेदन * कृषि विभाग कार्यालय से आवेदन

8. आवेदन के लिए जरूरी दस्तावेज/कागज

- * आधार कार्ड * बैंक पासबुक
- * जमीन के कागज * फसल बुआई का प्रमाण
- * मोबाइल नंबर
- * किरायदारी का प्रमाण (अगर किसान किरायदार है तो)

9826067379
9826589704

Krishi Sewa Sadan

Deals in : Pesticides, Seeds, Fertilizers & Agricultural Equipments

Sumit Singh Prop.

Bhitarwar Road, Jawahar Ganj, Dabra, Distt. Gwalior



डॉ. सुनील नरबरिया विभागाध्यक्ष, कृषि विस्तार
शिक्षा विभाग, कृषि महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) 452001

डॉ. एन. बी. पटेल सहायक प्राध्यापक, कृषि
महाविद्यालय एवं अनुसंधान केंद्र, महासमुंद्र (छ.ग.)

भारत में मशरूम उत्पादन आर्थिक विकास के एक पावरहाउस के रूप में उभरा है, जो ग्रामीण जरूरतों और शहरी मांग के बीच की खाई को पाट रहा है। कम निवेश, उच्च लाभ की संभावना और 'न्यूनतम इनपुट, अधिकतम आउटपुट' मॉडल के साथ, इस बहुमुखी कृषि व्यवसाय के 2025 तक विश्व स्तर पर 50 मिलियन टन से अधिक होने का अनुमान है।

1. मशरूम भविष्य का 'सुपरफूड' क्यों है?

आर्थिक लाभ से परे, मशरूम एक स्वस्थ समाज और स्वच्छ ग्रह में योगदान देते हैं-

सामाजिक सशक्तिकरण: मशरूम की खेती महिलाओं के लिए "आंगन की क्रांति" है। स्वयं सहायता समूहों (SHGs) से जुड़कर महिलाएं घरेलू दिनचर्या में बाधा डाले बिना वित्तीय स्वतंत्रता प्राप्त कर रही हैं।

स्वास्थ्य लाभ: शूय कोलेस्ट्रॉल और उच्च प्रोटीन (15-35% शुष्क भार) के साथ, ये उच्च रक्तचाप और हृदय स्वास्थ्य के प्रबंधन के लिए महत्वपूर्ण हैं।

पर्यावरणीय चक्र: उपयोग किया गया मशरूम सबस्ट्रेट (SMS) व्यर्थ नहीं जाता-इसे उच्च गुणवत्ता वाली जैविक खाद या पशु आहार के रूप में पुनर्चक्रित किया जाता है।

2. दो परिदृश्यों की कहानी: ग्रामीण बनाम शहरी प्रभाव

मशरूम की खेती अपने परिवेश के अनुसार ढल जाती है, चाहे वह गांव का शेड हो या शहर का बेसमेंट।

ग्रामीण समुदायों में: कचरे से कंचन संसाधन उपयोग: किसान धान और गेहूँ के पुआल जैसे प्रचुर कृषि कचरे का उपयोग करते हैं, जिससे फसल अवशेष जलाने से होने वाले प्रदूषण पर रोक लगती है।

आय का विविधीकरण: भारत में छोटे पैमाने के परिवार छोटी इकाइयों से औसतन ₹20,000 प्रति वर्ष की शुद्ध आय अर्जित करते हैं, जो खेती के खाली सीजन में एक सुरक्षा जाल प्रदान करता है।

पोषण सुरक्षा: प्रोटीन और विटामिन से भरपूर मशरूम कुपोषण से लड़ने में मदद करते हैं।

शहरी केंद्रों में: हाई-टेक वर्टिकल फार्मिंग स्थान की दक्षता: शहरी लोग छतों और बेसमेंट जैसे सीमित स्थानों में वर्टिकल फार्मिंग (खड़ी खेती) का उपयोग करते हैं।

बाजार से निकटता: स्वास्थ्य के प्रति जागरूक शहरी लोगों और बड़े रिटेलर्स तक सीधी पहुंच से ताजी किस्मों को प्रीमियम कीमतों पर बेचना आसान होता है।

कुटीर उद्योग का विकास: उद्यमी कच्चे मशरूम से

कवक क्रांति : मशरूम की खेती कैसे बदल रही है आजीविका

आगे बढ़कर अचार, बिस्कुट और पाउडर जैसे मूल्यवर्धित उत्पाद बना रहे हैं।

3. सफलता की कहानियां: 2025 के अग्रदूत

पूरे भारत में लोग छोटे प्रयोगों को करोड़ों के उद्यम में बदल रहे हैं:

उत्पादक, स्थान एवं उपलब्धि
हिरेशा वर्मा- उत्तराखंड: आईटी की नौकरी छोड़ रु. 1.5 करोड़ का सालाना टर्नओवर।

राहुल गोविंद-केरल: मर्चेट नेवी के पूर्व अधिकारी, 8 फार्म और रु. 2 करोड़ का टर्नओवर।

पूजा दुबे पांडे-इंदौर: बायोटेक्नोलॉजिस्ट, रु. 20 लाख का मासिक टर्नओवर।

डॉ. सोनिया दहिया-हरियाणा: प्रोफेसर, प्रतिमाह 10,000 किलो उत्पादन और रु. 12 लाख का टर्नओवर।

प्रतिभा झा-बिहार: मात्र रु. 1,000 से शुरुआत; अब रु. 2 लाख मासिक आय।

4. सहायता तंत्र: विस्तार और विपणन

मशरूम उद्योग की स्थिरता ICAR और KVK जैसी सरकारी एजेंसियों के सहयोग पर निर्भर है।

स्मार्ट मार्केटिंग सिस्टम

डायरेक्ट-टू-कंज्यूमर (D2C): आधुनिक किसान खरीदारों तक सीधे पहुंचने के लिए इंस्टाग्राम और व्हाट्सएप का उपयोग कर रहे हैं।

होरेका (HORECA) क्षेत्र: होटल, रेस्तरां और



कैटरिंग सेवाएं बटन और ऑयस्टर मशरूम की साल भर मांग बनाए रखते हैं।

नवोन्मेषी लॉजिस्टिक्स: कुछ उत्पादक दूध वितरण प्रणाली के माध्यम से घरों तक मशरूम के पैकेट पहुंचा रहे हैं।

विस्तार सेवाएं

तकनीकी प्रशिक्षण: स्पॉन (बीज) उत्पादन और रोग नियंत्रण पर कार्यशालाएं।

सब्सिडी: राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड ड्रायर और चाफ-कटर के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करता है।

रेडी-टू-गो किट: शहरी खेती को बढ़ावा देने के लिए 'तैयार खाद बैग' उपलब्ध कराए जा रहे हैं।

निष्कर्ष

2025 में मशरूम उत्पादन टिकाऊ कृषि व्यवसाय के एक प्रतीक के रूप में खड़ा है। चाहे वह बिहार के गांव में रु. 1,000 का स्टार्टअप हो या दिल्ली में एक हाई-टेक इकाई, यह साधारण कवक भारत की अर्थव्यवस्था के लिए सोने की खान साबित हो रहा है।



शीतला कृषि सेवा केन्द्र

बंटी सिंह गुर्जर (बामौर वाली)

99267-31867, 83055-69923

खाद, बीज एवं कीटनाशक दवाओं के थोक एवं खेरिज विक्रेता



हमारे यहां धान, गेहूँ, सोयाबीन, सरसों, तिली एवं सब्जियों के बीज, खाद एवं उच्चकोटि की कीटनाशक दवाईयां उचित मूल्य पर मिलती है।

पता : पशु अस्पताल के सामने, भितरवार रोड, डबरा ग्वालियर (म.प्र.)



सुनित भदरगे पीएच.डी. शोध छात्र, (फल विज्ञान) बागवानी विभाग, स्कूल ऑफ एग्रीकल्चर, आई.टी.एम. विश्वविद्यालय, ग्वालियर-475001 (म.प्र.)

टिशू कल्चर तकनीक और फल उत्पादन में इसका उपयोग

प्रस्तावना

आधुनिक कृषि और बागवानी में नई तकनीकों का तेजी से विकास हो रहा है। इन्हीं में से एक महत्वपूर्ण तकनीक है टिशू कल्चर (Tissue Culture), जिसे हिंदी में ऊतक संवर्धन कहा जाता है। यह एक वैज्ञानिक विधि है जिसके द्वारा पौधों के छोटे-छोटे भाग (कोशिका, ऊतक) से प्रयोगशाला में नए पौधे तैयार किए जाते हैं। फल उत्पादन में यह तकनीक तेजी से लोकप्रिय हो रही है क्योंकि इससे कम समय में अधिक, शुद्ध और रोगमुक्त पौधे तैयार किए जा सकते हैं।

टिशू कल्चर क्या है?

टिशू कल्चर एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें पौधे के किसी भाग (जैसे पत्ती, जड़, तना या कली) को पोषक माध्यम (Nutrient Medium) में नियंत्रित वातावरण (Controlled Conditions) में उगाकर नया पौधा तैयार किया जाता है। यह पूरी प्रक्रिया प्रयोगशाला में की जाती है, जहाँ तापमान, प्रकाश और नमी को नियंत्रित किया जाता है।

स्वस्थ पौधे का चयन

- * एक्सप्लान्ट (पौधे का छोटा भाग)
- * निर्जीवीकरण (Sterilization)
- * पोषक माध्यम में संवर्धन (Culture Media)
- * शूट (तना) विकास
- * रूट (जड़) विकास
- * हार्डनिंग (बाहरी वातावरण में अनुकूलन)

खेत में रोपण

टिशू कल्चर की प्रक्रिया (Steps)

1. चयन (Selection of Explant)

स्वस्थ और रोगमुक्त पौधे का छोटा भाग लिया जाता है।

2. निर्जीवीकरण (Sterilization)

पौधे के भाग को कीटाणुओं से मुक्त किया जाता है।

3. संवर्धन (Culturing)

उसे पोषक माध्यम में रखा जाता है, जहाँ कोशिकाएँ बढ़ने लगती हैं।

4. शूट और रूट विकास

नए पौधे में तना और जड़ विकसित होते हैं।

5. हार्डनिंग (Hardening)

पौधों को धीरे-धीरे बाहरी वातावरण के अनुकूल



बनाया जाता है।

फल उत्पादन में टिशू कल्चर का उपयोग

यह तकनीक कई फल फसलों में उपयोगी है-

1. केला (Banana)

- * सबसे अधिक उपयोग टिशू कल्चर से
- * एक समान और उच्च गुणवत्ता वाले पौधे

2. अनानास (Pineapple)

- * तेजी से पौध उत्पादन

3. स्ट्रॉबेरी (Strawberry)

- * रोगमुक्त पौधे तैयार

4. सेब (Apple)

- * उन्नत किस्मों का तेजी से प्रसार

5. अंगूर (Grapes)

- * उच्च गुणवत्ता और समान उत्पादन

6. टिशू कल्चर के लाभ

- * तेजी से पौध उत्पादन
- कम समय में हजारों पौधे तैयार किए जा सकते हैं।
- * रोगमुक्त पौधे
- कीट और रोगों से मुक्त पौधे प्राप्त होते हैं।
- * समान गुणवत्ता (uniformity)

सभी पौधे एक जैसे होते हैं, जिससे उत्पादन समान रहता है।

- * साल भर उत्पादन

मौसम पर निर्भरता कम होती है।

- * दुर्लभ प्रजातियों का संरक्षण

लुप्त होती प्रजातियों को सुरक्षित रखा जा सकता है।

- * अधिक उत्पादन और लाभ

उच्च गुणवत्ता के कारण किसानों को अधिक आय मिलती है।

- * टिशू कल्चर की सीमाएँ (Limitations)

- * प्रारंभिक लागत अधिक होती है

- * तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता

- * प्रयोगशाला सुविधाएँ जरूरी

- * गलत प्रक्रिया से पौधे खराब हो सकते हैं

भविष्य की संभावनाएँ

- * बड़े स्तर पर नर्सरी विकास

- * निर्यात गुणवत्ता के फल उत्पादन

- * जैव प्रौद्योगिकी (Biotechnology) के साथ समन्वय

- * स्मार्ट कृषि और आधुनिक बागवानी में बढ़ता उपयोग

निष्कर्ष

टिशू कल्चर तकनीक फल उत्पादन में एक क्रांतिकारी परिवर्तन ला रही है। यह तकनीक न केवल उत्पादन बढ़ाती है बल्कि गुणवत्ता और रोगमुक्त पौधे उपलब्ध कराती है। हालांकि इसकी लागत और तकनीकी जटिलता एक चुनौती है, लेकिन सही प्रशिक्षण और सरकारी सहयोग से यह तकनीक किसानों के लिए अत्यंत लाभकारी साबित हो सकती है।

जय माता दी

जीतू **प्रो. लाखन कुशवाह**

☎ 8770232968 ☎ 9754564727
7987081441

मै. जय माँ खाद एवं बीज भण्डार

हमारे यहाँ सभी प्रकार के
सब्जी बीज एवं कीटनाशक दवाईयाँ
उचित रेट पर मिलती है।

मेन रोड़, बस स्टेण्ड के पास, छीमक जिला-ग्वालियर



हेमन्त कुमार सिन्हा (कृषि वैज्ञानिक) कृषि
विज्ञान केन्द्र नौगांव छतरपुर (म.प्र.)

लाइव फेंसिंग, हरा चारा एवं कार्बन संचयन का स्मार्ट समाधान कैक्टस

3. कार्बन संचयन में सहायक

आज विश्वभर में कार्बन उत्सर्जन को कम करने हेतु पौधों की भूमिका महत्वपूर्ण मानी जा रही है। कैक्टस इसमें भी विशेष योगदान देता है।

- यह CAM Photosynthesis प्रक्रिया द्वारा कार्य करता है, जिसमें रात में कार्बन डाइऑक्साइड अवशोषित करता है और दिन में उसका उपयोग करता है।
- इस प्रक्रिया से जल की बचत अधिक होती है तथा कार्बन संग्रहण क्षमता बेहतर होती है।
- शुष्क क्षेत्रों में भी हरित आवरण बढ़ाकर वातावरणीय CO_2 को कम करने में मदद करता है।
- भूमि में जैविक पदार्थ बढ़ाकर मिट्टी की गुणवत्ता सुधारता है।
- जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने हेतु उपयोगी पौधा है।

4. आर्थिक एवं पर्यावरणीय लाभ

- लागत में अधिक उपयोगिता।
- सूखा एवं गर्मी सहनशील पौधा होने से जोखिम कम।
- जैव विविधता संरक्षण में सहायक।
- मधुमक्खी पालन हेतु फूलों से पराग स्रोत उपलब्ध।
- बंजर भूमि को उत्पादक बनाने में उपयोगी।

कैक्टस के प्रमुख उपयोग एवं लाभ

उपयोग क्षेत्र	प्रमुख लाभ	विशेष महत्व
लाइव फेंसिंग	खेत की सुरक्षा, पशु रोकथाम	कम लागत में प्राकृतिक बाड़
हरा चारा	जलयुक्त एवं पोषक पशु आहार	सूखे समय में चारे की उपलब्धता
कार्बन संचयन	CO_2 अवशोषण एवं ऑक्सीजन संतुलन	जलवायु परिवर्तन नियंत्रण में सहायक
भूमि संरक्षण	मिट्टी कटाव रोकना	भूमि की उर्वरता बनाए रखना
पर्यावरणीय लाभ	हरित आवरण वृद्धि	जैव विविधता संरक्षण

1. लाइव फेंसिंग के रूप में कैक्टस

कैक्टस की काटेदार एवं घनी संरचना इसे खेतों की प्राकृतिक सुरक्षा के लिए उपयुक्त बनाती है। किसान इसे खेत की मेड़ों पर लगाकर जीवित बाड़ तैयार कर सकते हैं।

- इसके तीखे काटे आवारा पशुओं एवं जंगली जानवरों को खेत में प्रवेश करने से रोकते हैं।
- एक बार स्थापित होने के बाद वर्षों तक सुरक्षा प्रदान करता है।
- लोहे या तारबंदी की तुलना में इसकी लागत बहुत कम होती है।
- यह तेज हवा एवं मिट्टी कटाव को भी रोकने में सहायक है।
- खेत की सुंदरता बढ़ाने के साथ पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखता है।

2. हरे चारे का उत्कृष्ट स्रोत

कैक्टस विशेष रूप से ऑपुन्टिया (Opuntia) प्रजाति पशु आहार के लिए उपयोगी मानी जाती है। सूखा प्रभावित क्षेत्रों में इसे "डेजर्ट फॉडर" भी कहा जाता है।

- इसकी पत्तियों/क्लैडोड्स में 80-90% तक जल होता है, जिससे पशुओं को पानी की पूर्ति भी होती है।
- इसमें कैल्शियम, मिनरल्स एवं ऊर्जा पर्याप्त मात्रा में पाई जाती है।
- गर्मी एवं सूखे के मौसम में जब अन्य चारे उपलब्ध नहीं होते, तब यह विकल्प बनता है।
- दुग्ध उत्पादन में सहायक तथा पशुओं की पाचन क्षमता सुधारने में उपयोगी।
- कम पानी में तेजी से बढ़ने के कारण वर्षभर चारा उपलब्ध कराता है।

निष्कर्ष

कैक्टस केवल एक काटेदार पौधा नहीं, बल्कि आधुनिक कृषि के लिए बहुउपयोगी एवं जलवायु-स्मार्ट समाधान है। यह किसानों को खेत सुरक्षा, पशु चारा, पर्यावरण संरक्षण और अतिरिक्त आय के अवसर एक साथ प्रदान करता है। विशेषकर बुदेलखंड जैसे अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में कैक्टस की खेती एवं उपयोग भविष्य की टिकाऊ कृषि प्रणाली का महत्वपूर्ण हिस्सा बन सकता है। अतः किसानों को चाहिए कि वे पारंपरिक फसलों के साथ कैक्टस आधारित कृषि मॉडल अपनाकर अपनी खेती को अधिक लाभकारी एवं जलवायु अनुकूल बनाएं।



विनीत पारसरागानी
9977903099

SBB

शक्ति बीज भण्डार

सभी प्रकार के कीटनाशक • खरपतवार दवाईयाँ • रासायनिक खाद एवं उच्च क्वालिटी के बीज व स्प्रे पम्प मिलने का एक मात्र स्थान।

ए.बी. रोड, न्यू सब्जी मण्डी, लश्कर-ग्वालियर (म.प्र.) फोन : 0751-2448911

नोट : सभी प्रकार के स्प्रे पम्प (बैट्री/पेट्रोल/नेप्सिक) रिपेयर भी किये जाते हैं।



✍ सचिन राठौर एम.एससी. (कृषि),
मंदसौर विश्वविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

✍ नरेन्द्र पाटीदार एम.एससी. (कृषि),
मंदसौर विश्वविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

प्रस्तावना

भारत में गर्मियों का मौसम अप्रैल से जून तक अपने चरम पर होता है। इस दौरान तापमान कई राज्यों में 45°C से भी ऊपर चला जाता है। इंसानों की तरह पशुओं पर भी इस भीषण गर्मी का गहरा असर पड़ता है। गाय, भैंस, बकरी, भेड़, मुर्गी और अन्य पशु-पक्षी इस तपती धूप में बेहाल हो जाते हैं। ऐसे में पशुपालकों की जिम्मेदारी बनती है कि वे अपने पशुओं को उचित छाया और ठंडा वातावरण प्रदान करें।

गर्मियों में तापमान क्यों बढ़ता है?

1. जलवायु परिवर्तन का प्रभाव

पिछले कुछ दशकों में वैश्विक तापमान में लगातार वृद्धि हो रही है। कार्बन डाइऑक्साइड और अन्य ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन से पृथ्वी का औसत तापमान बढ़ रहा है, जिससे गर्मियों में और भी अधिक गर्मी पड़ती है।

2. शहरीकरण और वनों की कटाई

पेड़-पौधों की कमी और कंक्रीट के जंगलों ने "हीट आइलैंड" प्रभाव पैदा किया है। इससे ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में गर्मी का स्तर बढ़ा है।

3. भौगोलिक स्थिति

राजस्थान, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, गुजरात जैसे राज्यों में मैदानी भूभाग होने के कारण गर्म हवाएं (लू) तेज गति से चलती हैं, जो तापमान को और बढ़ा देती हैं।

पशुओं पर गर्मी का प्रभाव

शारीरिक प्रभाव

हीट स्ट्रेस (ताप तनाव): शरीर का तापमान सामान्य से अधिक हो जाता है।

दूध उत्पादन में कमी: गाय-भैंस में 20-30% तक दूध उत्पादन घट सकता है।

भूख न लगना: पशु चारा कम खाते हैं, जिससे कमजोरी आती है।

प्रजनन क्षमता में कमी: मादा पशुओं में गर्भधारण की दर घट जाती है।

श्वास संबंधी समस्याएं: मुर्गियों और छोटे पशुओं में सांस फूलना आम हो जाता है।

मृत्यु दर में वृद्धि: अत्यधिक गर्मी से पशुओं की मौत भी हो सकती है।

पशु शेड में तापमान कैसे नियंत्रित करें?

1. शेड का सही निर्माण

दिशा और स्थान का चयन:

* शेड हमेशा पूर्व-पश्चिम दिशा में बनाएं ताकि सूर्य की सीधी किरणें कम से कम पड़ें।

गर्मियों में बढ़ते तापमान और पशु शेड में तापमान प्रबंधन

* शेड के आसपास घने पेड़ लगाएं जैसे नीम, पीपल, बरगद – ये प्राकृतिक छाया प्रदान करते हैं।

छत की सामग्री:

* एस्बेस्टस या टिन की छत से बचें – ये गर्मी को अवशोषित करके शेड को और गर्म कर देती हैं।

* थैच (फूस/पुआल) की छत सबसे अच्छी रहती है – यह प्राकृतिक रूप से ठंडी रहती है।

* अगर पक्की छत हो तो उस पर सफेद रंग का चूना पोतें या थर्मल इंसुलेशन शीट लगाएं।

* छत की ऊंचाई कम से कम 10-12 फीट रखें ताकि हवा का प्रवाह बना रहे।

वेंटिलेशन (हवा का प्रवाह):

* शेड की दोनों दीवारों में जालीदार खिड़कियां बनाएं।

* रिजवेंट (Ridge Vent) – छत के शीर्ष पर खुलाव रखें ताकि गर्म हवा ऊपर से निकल सके।

* शेड की दीवारें बहुत ऊंची न हों, जिससे क्रॉस वेंटिलेशन मिले।

2. पानी का प्रबंधन

* **पर्याप्त पानी:** गर्मियों में पशुओं को सामान्य से 50% अधिक पानी की जरूरत होती है।

* **ठंडे पानी की व्यवस्था:** पानी की टंकी को छांव में रखें या उस पर गीला बोरा ढकें।

* **फॉगर या स्प्रींकलर सिस्टम:** शेड में पानी की बौछार करने वाले उपकरण लगाएं – ये तापमान 5-8°C तक कम कर सकते हैं।

* पशुओं को दिन में 3-4 बार नहलाएं या उन पर पानी डालें।

* इलेक्ट्रोलाइट्स (नमक, गुड़, पानी का मिश्रण) पिलाएं ताकि शरीर में नमक की कमी न हो।

3. पंखे और कूलिंग उपकरण

* **बड़े पंखे (Industrial Fans):** शेड में बड़े पंखे लगाएं जो हवा को सर्कुलेट करें।

* **कूलिंग पैड:** एक दीवार पर कूलिंग पैड और दूसरी तरफ पंखे लगाएं—यह "इवैपोरेटिव कूलिंग" सिस्टम बनाता है।

* **मिस्टर (Mister/Fogger):** महीन पानी की धुंध बनाने वाले उपकरण तापमान में 10°C तक कमी ला सकते हैं।

4. हरी छाया और वृक्षारोपण

* शेड के चारों ओर नीम, पीपल, जामुन, अमलतास जैसे घने पेड़ लगाएं।

* बाहरी छप्पर या शेड नेट लगाएं – ये 30-40% सौर ताप को रोकते हैं।

* **घास का आवरण:** शेड के आसपास की जमीन पर घास उगाएं – यह जमीन को ठंडा रखती है।

5. चारे और आहार में बदलाव

* गर्मियों में पशुओं को हरा चारा जैसे लोबिया, मक्का,

ज्वार अधिक दें।

* भारी आहार सुबह और शाम को दें, दोपहर में कम दें।

* विटामिन E और सेलेनियम युक्त आहार दें जो हीट स्ट्रेस से लड़ने में मदद करता है।

* अनाज की मात्रा कम करें क्योंकि पाचन में अधिक ऊष्मा उत्पन्न होती है।

6. दैनिक दिनचर्या में बदलाव

समय

सुबह 5-8 बजे

सुबह 8-11 बजे –

दोपहर 11-4 बजे

शाम 4-7 बजे

रात 7 बजे के बाद

गतिविधि

चराई/बाहर जाने दें

पानी पिलाएं, नहलाएं

शेड में आराम, पंखा चलाएं

चराई/बाहर जाने दें

खुले में बांधें या हवादार शेड में

7. मुर्गी पालन (Poultry) के लिए विशेष उपाय

* मुर्गी के शेड में शेड नेट जरूर लगाएं।

* पीने के पानी में बर्फ मिलाएं या पानी बार-बार बदलें।

* घनत्व कम करें – एक वर्गमीटर में कम मुर्गियां रखें।

* एस्कॉर्बिक एसिड (विटामिन C) पानी में मिलाने से हीट स्ट्रेस कम होती है।

आपातकालीन उपाय — लू लगने पर अगर कोई पशु लू की चपेट में आ जाए तो:

1. तुरंत ठंडी जगह पर ले जाएं।

2. पूरे शरीर पर ठंडा पानी डालें (बर्फ का पानी नहीं – झटका लग सकता है)।

3. ओआरएस घोल या नमक-गुड़-पानी पिलाएं।

4. पशु चिकित्सक को तुरंत बुलाएं।

5. पशु को एकांत में न छोड़ें।

सरकारी सहायता और योजनाएं

* राष्ट्रीय पशुधन मिशन के अंतर्गत पशु शेड निर्माण पर सब्सिडी मिलती है।

* KCC (किसान क्रेडिट कार्ड) से पशुपालन के लिए ऋण लिया जा सकता है।

* राज्य सरकारें गर्मियों में पशु राहत शिविर लगाती हैं।

* नजदीकी पशु चिकित्सा केंद्र से निःशुल्क परामर्श लें।

निष्कर्ष

गर्मियों में बढ़ता तापमान पशुपालन के लिए एक बड़ी चुनौती है, लेकिन सही प्रबंधन से इस चुनौती से आसानी से निपटा जा सकता है। पशु शेड का सही निर्माण, पर्याप्त पानी की व्यवस्था, उचित वेंटिलेशन, और दैनिक देखभाल से न केवल पशुओं को गर्मी से बचाया जा सकता है, बल्कि उनकी उत्पादकता भी बनाए रखी जा सकती है।

याद रखें — स्वस्थ पशु ही समृद्ध पशुपालक की पहचान है।



डॉ. मुकेश कुमार धाकड़ (सहायक प्राध्यापक) पादप रोग विज्ञान विभाग, कृषि संकाय, आरएनटीयू, रायसेन (म.प्र.)

डॉ. दिनेश सिंह तोमर अधिष्ठाता, (पादप रोग विज्ञान), कृषि महाविद्यालय, जेएनकेवीवी, टीकमगढ़

डॉ. एच.डी. वर्मा अधिष्ठाता, (सस्य विज्ञान), कृषि संकाय, आरएनटीयू, रायसेन (म.प्र.)

अशोक कुमार वर्मा सह-अधिष्ठाता, कृषि अर्थशास्त्र विभाग, कृषि संकाय, आरएनटीयू, रायसेन

डॉ. ऋषिकेश मंडलोई सहायक प्राध्यापक, कृषि कीट विज्ञान विभाग, कृषि संकाय, आरएनटीयू, रायसेन

परिचय (Introduction)- भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहाँ कृषि न केवल आजीविका का प्रमुख साधन है, बल्कि देश की अर्थव्यवस्था की रीढ़ भी है। वर्तमान समय में बढ़ती जनसंख्या, जलवायु परिवर्तन, मृदा क्षरण और जल संकट जैसी समस्याएँ कृषि क्षेत्र के सामने बड़ी चुनौतियाँ बनकर उभरी हैं। ऐसे में हरित एवं सतत कृषि की आवश्यकता पहले से कहीं अधिक बढ़ गई है।

हरित एवं सतत कृषि का तात्पर्य ऐसी कृषि पद्धति से है, जिसमें पर्यावरण का संरक्षण करते हुए प्राकृतिक संसाधनों का संतुलित एवं विवेकपूर्ण उपयोग किया जाए। इसका मुख्य उद्देश्य है कि वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं को पूरा करते हुए भविष्य की पीढ़ियों के लिए भी संसाधनों को सुरक्षित रखा जाए। पर्यावरण संरक्षण सतत कृषि का एक महत्वपूर्ण आधार है। अत्यधिक रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के उपयोग से मिट्टी की उर्वरता में कमी आती है और जल स्रोत भी प्रदूषित होते हैं। इसके समाधान के रूप में जैविक खेती, प्राकृतिक खेती, एकीकृत कीट प्रबंधन (IPM) और एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन (INM) जैसे उपायों को अपनाया जा रहा है, जो पर्यावरण के अनुकूल होने के साथ-साथ दीर्घकालिक लाभ भी प्रदान करते हैं। संसाधनों का संतुलित उपयोग भी उतना ही महत्वपूर्ण है। जल संरक्षण के लिए सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली जैसे ड्रिप और स्प्रींकलर का उपयोग, वर्षा जल संचयन, और ऊर्जा के लिए सौर तकनीकों का प्रयोग आज की आवश्यकता बन गया है। इससे न केवल उत्पादन लागत में कमी आती है, बल्कि संसाधनों का संरक्षण भी सुनिश्चित होता है। इसके साथ ही, आधुनिक तकनीकों और नवाचारों का समावेश कृषि को अधिक लाभकारी बना रहा है। उन्नत बीज, कृषि यंत्रकरण, डिजिटल कृषि और स्मार्ट खेती जैसी तकनीकों से उत्पादन में वृद्धि के साथ-साथ किसानों की आय में भी सुधार हो रहा है।

अंततः, हरित एवं सतत कृषि केवल एक विकल्प नहीं, बल्कि समय की मांग है। यह न केवल

आज के समय में कृषि केवल खाद्य उत्पादन का साधन नहीं है, बल्कि यह आर्थिक विकास, पर्यावरण संरक्षण और सामाजिक स्थिरता का आधार भी है। बढ़ती जनसंख्या,

'हरित एवं सतत कृषि: पर्यावरण संरक्षण, संतुलित संसाधन और किसान समृद्धि की ओर'

जलवायु परिवर्तन और प्राकृतिक संसाधनों की कमी के कारण सतत (Sustainable) कृषि की आवश्यकता पहले से अधिक महत्वपूर्ण हो गई है।

इसलिए "Powering the Future of Sustainability" का अर्थ है- ऐसी कृषि प्रणाली विकसित करना जो पर्यावरण के अनुकूल हो, संसाधनों का संरक्षण करे और किसानों की आय बढ़ाए।

सतत कृषि (Sustainable Farming) क्या है?- सतत कृषि वह प्रणाली है जिसमें: सतत कृषि एक ऐसी कृषि प्रणाली है जो वर्तमान की आवश्यकताओं को पूरा करते हुए भविष्य की पीढ़ियों के लिए प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करती है। इसमें पर्यावरण संतुलन को बनाए रखते हुए उत्पादन को दीर्घकालिक और लाभकारी बनाए रखने पर जोर दिया जाता है। * प्राकृतिक संसाधनों (मिट्टी, जल, जैव विविधता) का संरक्षण किया जाता है * रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का सीमित और संतुलित उपयोग किया जाता है * उत्पादन को लंबे समय तक स्थिर और टिकाऊ बनाए रखा जाता है * मिट्टी की उर्वरता और स्वास्थ्य को बनाए रखा जाता है * जल संरक्षण और कुशल सिंचाई तकनीकों का उपयोग किया जाता है * पर्यावरण प्रदूषण को कम करने पर विशेष ध्यान दिया जाता है * किसानों की आय और आजीविका को दीर्घकालिक रूप से सुदृढ़ किया जाता है

जलवायु परिवर्तन के प्रभावों का अध्ययन

1. **जलवायु परिवर्तन के प्रभावों का अध्ययन (विज्ञान और प्रौद्योगिकी के दृष्टिकोण से)** - * जलवायु परिवर्तन के प्रभावों का विश्लेषण किया गया है जो मानव जीवन और पारिस्थितिकी तंत्र पर पड़ते हैं। * इसमें जलवायु परिवर्तन के कारणों, परिणामों और संभावित समाधानों पर चर्चा की गई है। * यह अध्ययन जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को समझने में सहायक है।

2. **जल संसाधन प्रबंधन (Water & Resource Management)** - * इस विषय में जल संसाधनों के प्रबंधन की विधियों और तकनीकों का अध्ययन किया गया है। * यह अध्ययन जल की उपलब्धता, उपयोग और संरक्षण के तरीकों पर केंद्रित है। * जल संसाधनों के प्रबंधन में चुनौतियों और अवसरों का विश्लेषण किया गया है।

3. **जलवायु परिवर्तन के प्रभावों का अध्ययन** * इस अध्ययन में जलवायु परिवर्तन के प्रभावों का गहन विश्लेषण किया गया है। यह अध्ययन जलवायु * परिवर्तन के कारणों और इसके प्रभावों को समझने में सहायक है। * इसमें जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के विभिन्न पहलुओं पर चर्चा की गई है।

4. **आधुनिक तकनीक एवं नवाचार** * उन्नत बीज, कृषि यंत्रकरण एवं स्मार्ट खेती तकनीक। * डिजिटल कृषि एवं मौसम आधारित सलाह। * उत्पादन वृद्धि के साथ संसाधनों का संरक्षण।



सतत कृषि प्रणाली

सतत कृषि (Sustainable Farming)

ग्राफ: पारंपरिक vs सतत कृषि

सतत कृषि के लाभ (Advantages)- * मिट्टी की उर्वरता और स्वास्थ्य लंबे समय तक बनाए रखा जाता है * पर्यावरण प्रदूषण में कमी आती है * किसानों की आय और आजीविका में वृद्धि होती है * जल और ऊर्जा संसाधनों की बचत होती है * जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभावों को कम करने में मदद मिलती है * उत्पादन की स्थिरता बनी रहती है और जोखिम कम होता है * रासायनिक इनपुट पर निर्भरता कम होती है * जैव विविधता और प्राकृतिक संतुलन का संरक्षण होता है * कृषि लागत में कमी और लाभ में वृद्धि होती है * भविष्य की पीढ़ियों हेतु संसाधनों का संरक्षण सुनिश्चित होता है

सतत कृषि की प्रमुख चुनौतियां (Challenges)

* किसानों में जागरूकता एवं आवश्यक जानकारी का अभावप्रारंभिक निवेश (लागत) का अधिक होना * आधुनिक तकनीकी ज्ञान एवं प्रशिक्षण की कमी * छोटे एवं सीमांत किसानों के लिए अपनाने में कठिनाई * उन्नत संसाधनों एवं तकनीकों की सीमित उपलब्धता * विपणन व्यवस्था एवं उचित मूल्य प्राप्त करने में कठिनाई * सरकारी योजनाओं एवं सहायता तक सीमित पहुँच * पारंपरिक खेती से बदलाव के प्रति संकोच

भविष्य की दिशा (Future Prospects)- * स्मार्ट फार्मिंग (AI एवं IoT आधारित कृषि प्रणाली) * प्रिंसीजन एग्रीकल्चर (सटीक कृषि तकनीक) * ड्रोन आधारित कृषि तकनीक * डिजिटल कृषि प्लेटफॉर्म का विस्तार

ये सभी तकनीकें सतत, उन्नत एवं लाभकारी कृषि प्रणाली को प्रोत्साहित करेंगी।

निष्कर्ष (Conclusion)- * सतत कृषि का मुख्य लक्ष्य केवल उत्पादन में वृद्धि करना नहीं है, बल्कि पर्यावरण की रक्षा, प्राकृतिक संसाधनों का संतुलित उपयोग और किसानों की समृद्धि को सुनिश्चित करना भी है। * यह कृषि पद्धति दीर्घकालिक दृष्टिकोण से उत्पादन को स्थिर बनाए रखते हुए भूमि की उर्वरता को सुरक्षित रखती है, जबकि पारंपरिक खेती में समय के साथ उत्पादन में कमी आ जाती है।

* इसलिए, सतत कृषि को अपनाकर हम भविष्य की पीढ़ियों के लिए एक सुरक्षित, संतुलित और समृद्ध कृषि प्रणाली का निर्माण कर सकते हैं।


डॉ. अखिलेश कुमार

कृषि विज्ञान केन्द्र, रीवा (म. प्र.)

सुरक्षित भण्डारण कर अनाज को कीटों एवं चूहों से बचाएं

अनाज भण्डार को दौरान कीटों के अक्रमण से 15-20% तक अनाज पूरी तरह नष्ट हो जाता है या अवांक्षणीय दुर्गंध से भर कर उसकी गुणवत्ता को नष्ट कर देता है। अनाज भण्डारण के लिए यह उपयुक्त समय है जो प्रथम मानसून आने के पूर्व अनाज का भण्डारण हो जाना चाहिए। अनाज में नमी 8-10% से ज्यादा होने पर भंडारित खाद्यान्नों को मुख्य रूप से दीमक, घुन, खपरा विरिक्त, अनाज की सुंडी के साथ जीवाणु एवं फफूंदी लगने से अनाज में 10-15 प्रतिशत तक की क्षति होती है। इसका मुख्य कारण आक्सीजन, जल नमी ताप अथवा लापरवाही पूर्वक भण्डारण है। अनाज भण्डारण के कुछ मुख्य कीट निम्न हैं:-

खपरा भृंग

यह कीट मानसून के नम वातावरण में गेहूँ, चना, चावल, मक्का व दालों के ऊपर आक्रमण करता है इसका वयस्क कीट प्रतिकूल वातावरण में 4 वर्ष तक चुपचाप पड़ा रहता है व अनुकूल वातावरण में सक्रिय हो जाता है इसका वयस्क भण्डारित अनाज में सीधे आक्रमण नहीं कर पाता परन्तु इसकी बालदार सुण्डी दानों के जमने वाले भाग में आक्रमण कर भ्रूण नष्ट कर देते हैं और दाना खोखला हो जाता है और मात्र दाने का खोल बचता है खपरा भृंग साफ सुथरे अनाज में यदि पूरी सावधानी न ली जाए, (खुले में रखे अनाज पर) तो 24 घंटे के अन्दर ही आक्रमण शुरू कर देते हैं।

गेहूँ चावल की घुन

यह गहरे भूरे लाल रंग का थूथन वाला कीट है जो मुख्य रूप से चावल में देखा गया है इसी कारण इसे चावल की घुन कहते हैं, इस कीट के वयस्क व सुण्डियाँ अनाज के दानों को खाकर खोखला कर देती हैं। इस कीट की मादा एक बार में 400 अण्डे देती है जो कि सप्ताह भर में सफेद रंग की सुण्डियाँ बाहर निकल आती हैं और आक्रमण करती हैं। इनका प्रकोप नम वातावरण में जून से अक्टूबर माह में ज्यादा मिलता है।

लाल भृंग

यह कीट भी गृहणियों का जाना-पहचाना कीट है जिसकी मादा एक बार में 1000 संख्या तक में अण्डा देती है जिससे 7 दिन में 6 मि.ली. लम्बी सुण्डियाँ बाहर आती हैं जो कि आटा, मैदा, बेसन एवं सूजी में आक्रमण करती हैं एवं नम उपयुक्त वातावरण मिलने पर भयंकर रूप में आक्रमण कर

पूरा आटा में अपना विष्टा भी मिला देती हैं जिससे आटा बदबूदार हो जाता है इसके वयस्क साबूत दाना भेदने में अक्षम होते हैं।

फ्लोर बीटल (आटा भृंग)

यह अपने समुदाय का अति भयंकर कीट है जो कि भण्डारित आटा, मैदा, बेसन, डबल रोटी एवं सूजी में आक्रमण करता है। इस कीट की मादा एक बार में 600



अण्डे देती है जो कि 2 सप्ताह में 13 खण्डीय लारवा निकल आता है, इसका वयस्क चपटा, गोल काला रंग का 12-25 मि. ली. लंबा एवं लार्वा धूल रंग या मटमैले रंग का होता है। इसका फैलाव पूरे विश्व के हर रसोई घर में है यह कीट, एक वर्ष से अनुकूल वातावरण में 2 वर्ष तक जीवित रहता है।

अनाज का पतंगा

यह हल्के कथई पीले रंग का पंखयुक्त कीट होता है इसके पंखों के निचले किनारों पर लंबे बाल होते हैं यह अपने पंखों से लंबी उड़ान भरता है मादा कीट एक बार में 150 अण्डे देती है जिससे एक सप्ताह के भीतर पीले-भूरे सिर की सफेद सुण्डी निकलती है ये सुण्डियाँ गेहूँ-चावल, मक्का, ज्वार आदि के दानों में घुस जाती हैं तथा उन्हें खोखला कर अपने मल मूत्र से भरकर बदबूदार बना देती हैं।

सुरक्षित भंडारण के लिए निम्न उपाय

- जहां पर भंडारण करना है वहां की सफाई होनी चाहिए।
- भंडारण कक्ष की टूटी-फूटी दीवारों की मरम्मत करना चाहिए।
- अगर पूरब की तरफ से हवा चल रही हो तो उस समय अनाज का भंडारण नहीं करना चाहिए।

- अनाज लाने वाले वाहन को भी कीटनाशकों से उपचारित कर लेना चाहिए।
- भण्डार गृह की दीवारों पर 10 मिली. प्रोपेनोफास 40 प्रतिशत .सायपरमेथ्रिन 4 ई.सी. प्रति लीटर पानी का घोल 3 लीटर प्रति 100 वर्गमीटर की दर से दीवार तथा फर्श पर छिड़काव करें।
- तेज धूप में सर्वप्रथम अनाज को सुखा लें और निश्चित कर लें कि अनाज में 8-10 प्रतिशत से ज्यादा नमी ना हो जो दांत से काटने पर अगर कट्ट की आवाज आती है तो निश्चित ही कीटों एवं अन्य रोगों से बचा जा सकता है।
- अनाज को बोरियों में रखकर भंडारण करना है तो नीचे भूसे की एक तह बिछा लेना चाहिए और बोरियों को दीवाल से 50 सेंटीमीटर की दूरी पर रखना चाहिए।
- यदि ऐसा लगता है कि कीटों का आक्रमण पहले से हो गया है तो उसे पहले ही उपचारित कर लेना चाहिए।
- एल्युमिनियम फास्फाइड की 21 ग्राम (7 गोलिएँ) प्रति 28 घनमीटर स्थान की दर से प्रयोग करना चाहिए।
- फिप्रोनिल 5 एस सी. 25 मिली का घोल बनाकर 3 लीटर प्रति वर्गमीटर की दर से गोदाम में छिड़काव करना चाहिए।
- अनाज को जैविक विधि से भी भंडारित कर सकते हैं जिसके लिए नीम सीड कर्नल पाउडर (100: 1 के अनुपात) के साथ मिलाकर रख सकते हैं।
- भंडारण में नीम की पत्ती का प्रधुमन करके भंडारण गृह को अच्छी तरह से बंद कर देना चाहिए जिससे भंडारण गृह में छुपे हुए कीट नष्ट हो जाते हैं।
- नीम की पत्ती को पानी में खौलाकर उसमें बोरियों को उपचारित कर सुखा लेना चाहिए।
- सुरक्षित भंडारण के लिए पूसा बिन, पंतनगर कुठला, हापुड़ बिन, पक्का बिन (एल्युमीनियम/स्टील की चादरों से बने), साईलो बिन इत्यादि का प्रयोग करना चाहिए।
- चूहों के नियंत्रण के लिए चूहेदानी गोदाम में रखना चाहिए।
- चूहों का प्रकोप अधिक होने पर विषाक्त चारा जैसे 2 प्रतिशत जिंक फास्फाइड का प्रयोग करना चाहिए जिसमें गोदाम के अंदर व बाहर जहां पर चूहों के आने जाने का रास्ता हो वहां पर गोली बनाकर व्यवस्थित ढंग से रखना चाहिए।



अरुण एम.एस.सी. (कृषि) शस्य विज्ञान मंदसौर विश्वविद्यालय (म.प्र.)

श्वेता शर्मा एम.ए. (राजनीति विज्ञान) दिल्ली विश्वविद्यालय

प्रकाश रेगर एम.एस.सी. (कृषि) शस्य विज्ञान, मंदसौर विश्वविद्यालय

डॉ. विपुल सिंह सहायक प्रोफेसर, मंदसौर विश्वविद्यालय

पहले ये समझ लो : "सब एक साथ नहीं करना" हम अक्सर सोचते हैं कि एक दिन में पूरी छत बगीचा बना देंगे। ऐसा नहीं होता। बागवानी धीरे-धीरे सीखने का नाम है। पहले 2-4 गमलों से शुरू करो, फिर धीरे-धीरे बढ़ाओ।



चरण 1: बिना पैसे खर्च किए शुरुआत (Zero Cost Start)

आपको शुरू में कुछ खरीदने की जरूरत नहीं है। घर में जो है, उसी से शुरू करो-क्या चाहिए?

* **बर्तन:** पुराने प्लास्टिक के बाल्टी, कटोरे, कूलर के बर्तन, या जो भी खाली पड़ा है। बस नीचे एक छेद कर दो (पानी निकलने के लिए)।

* **मिट्टी:** किसी पार्क या खाली जगह से थोड़ी मिट्टी ले आओ (बस ये देख लो कि कहीं कचरा तो नहीं)।

* **बीज:** रसोई से धनिया, मिर्च, सरसों, चने या राजमा के बीज निकाल लो। हाँ, जो दाल में मिलते हैं, वही चलेगें!

बिना मिट्टी वाला तरीका (सबसे आसान): एक प्लेट में रुई बिछाओ, उस पर थोड़ा पानी डालो। अब सरसों या मेथी के दाने बिखेर दो। रोज थोड़ा पानी डालो। 5-7 दिन में हरी-हरी पत्तियाँ उग आएंगी। ये सलाद या सब्जी में काट कर खाओ। बस! ये तुम्हारी पहली बागवानी सफलता होगी।

चरण 2: एक छोटे परिवार हेतु क्या उगाएँ? (हफ्ते भर की सब्जी)-मान लो तुम 4 लोग हो। तुम्हें हर हफ्ते क्या चाहिए? * सब्जी के लिए धनिया और पुदीना (बिना ये तो खाना अधूरा) * सलाद के लिए टमाटर * आलू-प्याज के साथ मिर्च * सुबह की चाय के साथ तुलसी * सब्जी में पालक या मेथी

तो ये है लिस्ट - पहले ये 5 चीजें उगाओ:

सब्जी/पौधा	कितने गमले चाहिए?	कितने दिन में तैयार?	क्या ध्यान रखें?
धनिया	2 गमले (बारी-बारी से बोओ)	20-25 दिन	धूप ज्यादा चाहिए, बीज फोड़ कर बोओ
पुदीना	1 गमला (एक बार लगाओ, बार-बार तोड़ो)	15 दिन	नमी पसंद है, छाँव में रखो
मिर्च	2 पौधे (2 गमले)	50-60 दिन	सबसे आसान, फूल आने पर पानी कम करो
टमाटर	2 पौधे (2 गमले)	60-70 दिन	बड़ा गमला चाहिए, सहारा (स्टिक) बाँधो
पालक/मेथी	1 बड़ा गमला	25-30 दिन	कटाई के बाद फिर आती है

एक बार लगाओ, महीनों खाओ:

कड़ी पत्ता: एक पौधा लगाओ, जिंदगी भर पत्ते तोड़ते रहो

तुलसी: सर्दी-जुकाम में काम आएगी, चाय में डालो

एलोवेरा: जलने पर लगाओ, बालों में लगाओ, गमले में लगाओ

चरण 3: 100 रुपये में शुरू करो (बजट प्लान)

अगर थोड़ा बहुत खरीदना चाहते हो, तो ये रहा आपका 100 रुपये का प्लान:

चीज	कीमत (लगभग)	कहाँ मिलेगा?
5 छोटे मिट्टी के गमले	₹. 50	नर्सरी या कबाड़ी से
1 किलो मिट्टी + गोबर की खाद	₹. 30	नर्सरी
धनिया, मिर्च, टमाटर के बीज	₹. 20	स्थानीय बीज भंडार

कुल = ₹. 100 (एक पिज्जा से कम कीमत में पूरा बगीचा!)

चरण 4: छोटे परिवार के लिए वोकली प्लान (हफ्ते भर का खाना) कैसे लगाओगे कि हफ्ते भर सब्जी मिलती रहे? **तरीका:** दो हफ्ते के अंतराल पर बोओ।

उदाहरण: 1 तारीख को: धनिया के बीज बोएं

छत पर बागवानी: एक स्वस्थ जीवनशैली

15 तारीख को: फिर से धनिया के बीज बोएं। जब 1 वाली कटने को तैयार हो, 15 वाली छोटी होगी। जैसे ही 1 वाली खत्म हो, 15 वाली तैयार!

ये रहा एक हफ्ते का मेन्यू (सिर्फ छत से):

दिन	सब्जी	छत से क्या इस्तेमाल होगा?
सोमवार	पनीर पालक	पालक + हरी मिर्च + धनिया
मंगलवार	दाल	ताजी मिर्च + पुदीने की चटनी
बुधवार	सैंडविच	टमाटर के स्लाइस + तुलसी के पत्ते
गुरुवार	सब्जी	करेला (अगर लगाया है) + धनिया
शुक्रवार	सलाद	पालक, टमाटर, खीरा (अगर है)
शनिवार	चाय	तुलसी और पुदीना
रविवार	बिरयानी	पुदीना + धनिया + हरी मिर्च

चरण 5: जगह की कमी को कैसे हराएँ? (Vertical ऑप्शन)। अगर छत छोटी है, तो घबराओ मत। ऊपर की तरफ बढ़ो!

तरीके:

1. दीवार पर लटकाओ: पुराने जूते के हैंगर में छोटे गमले लटका दो।

2. पाइप में बागवानी: चार इंच की पीवीसी पाइप लो, उसमें गोल छेद करो, मिट्टी भरो, स्ट्रॉबेरी या पुदीना लगाओ।

3. बोतलों का उपयोग: 2 लीटर की कोल्ड ड्रिंक की बोतल को आधा काटो, उल्टा लटकाओ। इसमें तुलसी या धनिया आराम से उगेगी।

4. ट्रे में बागवानी: एक बड़ी थाली या ट्रे लो, उसमें मिट्टी डालो, ढेर सारी पालक या मेथी बो दो। इससे कम जगह में ज्यादा उपज मिलेगी।

चरण 6: पानी और खाद : आसान तरीका (कोई टेंशन नहीं)

पानी कब देना है? * सुबह उंगली मिट्टी में डालो। अगर उंगली सूखी निकली तो पानी दो। * **गलती मत करना:** रोज पानी मत दो। पौधे को भी सांस लेनी है।

क्या डालूँ खाद में? (जीरो कॉस्ट खाद)

घर की किचन खाद: रोज की सब्जी के छिलके (आलू, टमाटर, केला), चाय पत्ती, अंडे के छिलके इकट्ठा करो। एक गमले में मिट्टी के साथ दबा दो। 20 दिन में बढ़िया खाद बन जाएगी।

पानी बचाओ: चावल धोने का पानी, सब्जी उबालने का पानी (ठंडा करके) पौधों में डालो। उन्हें लगेगा अमृत मिला है!

चरण 7: असली कहानी : संतोष भाई की (जिन्होंने 6x6 फीट में पूरा परिवार खिलाया) संतोष दिल्ली के जीटीबी नगर में एक छोटे से कमरे में रहते हैं। उनकी छत बस 6x6 फीट है (एक डबल बेड जितनी)। लेकिन उन्होंने 3 साल में वहाँ 35 गमले लगा रखे हैं।

वो क्या-क्या उगाते हैं?

सर्दी में: मटर, पालक, गाजर, मूली गर्मी में: भिंडी, तोरई, करेला, टमाटर

हमेशा: धनिया, पुदीना, मिर्च, तुलसी

उनका परिवार: पत्नी, दो बच्चे (8 और 5 साल के)। वो बताते हैं, "हमारी सब्जी का बिल पहले 2000 रु. आता था, अब 500 रु.। बच्चे सब्जी खाते हैं क्योंकि उन्होंने खुद उगाई है। और सबसे बड़ी बात : गर्मी में हमारा कमरा नॉर्मल रहता है, पड़ोसी के मुकाबले 4 डिग्री ठंडा।"

संतोष भाई का टिप्स: 'शुरू में मैं भी परेशान था। पौधे सूख जाते थे। लेकिन मैंने ठान लिया कि एक साल लगातार करूंगा। अब तो मुझे ये नशा हो गया है। सुबह उठते ही सबसे पहले छत की तरफ दौड़ता हूँ देखने कौन सा नया पत्ता आया है।'

चरण 8: शुरुआत करने से पहले ये 5 गलतियाँ मत करना

1. ज्यादा पानी देना: प्यार दिखाने का ये तरीका गलत है। पौधे को डुबाकर मत मारो।

2. बहुत बड़े गमले ले आना: शुरू में छोटे गमले लो, धीरे-धीरे बदलते रहो।

3. धूप न देना: अधिकतर सब्जियों को 4-5 घंटे धूप चाहिए। अगर छत में छाँव है, तो पुदीना और धनिया लगाओ।

4. एक साथ सब कुछ उगाने की कोशिश: पहले 2-3 चीजें सीखो, फिर आगे बढ़ो।

5. छत की मजबूती न जांचना: पुरानी छत पर 50-60 गमले न रख देना। पहले किसी ठेकेदार से पूछ लो।



डॉ. आकांक्षा पाण्डेय सहायक प्राध्यापक
(कृषि विस्तार शिक्षा विभाग), कृषि महाविद्यालय
एवं अनुसन्धान केन्द्र कटघोरा कोरबा (छ.ग.)

न्यूट्री-गार्डन (पोषण उद्यान): महिलाओं की खाद्य और पोषण सुरक्षा का एक समृद्ध स्रोत

न्यूट्री-गार्डन, घर के आसपास छोटे भूखंडों में पौष्टिक फल और सब्जियां उगाने की एक प्रणाली है, जो महिलाओं और बच्चों हेतु खाद्य एवं पोषण सुरक्षा का एक समृद्ध और टिकाऊ स्रोत है, क्योंकि यह सीधे ताजे, विटामिन और खनिज युक्त भोजन की उपलब्धता सुनिश्चित करता है, एनीमिया और कुपोषण से लड़ता है, घरेलू आय बढ़ाता है, और महिलाओं को सशक्त बनाता है। यह जैविक खेती को बढ़ावा देता है और ग्रामीण भारत में आत्मनिर्भरता और स्वास्थ्य में सुधार हेतु एक प्रभावी, समुदाय-आधारित समाधान है।

पोषण उद्यान, जो छोटे घरेलू भूखंड हैं और फलों, सब्जियों और औषधीय पौधों जैसे पोषक तत्वों से भरपूर खाद्य पदार्थों की खेती को बढ़ावा देते हैं, पोषण में सुधार और महिलाओं के सशक्तिकरण में आशाजनक परिणाम दिखा रहे हैं। अध्ययन से पता चलता है कि कुपोषण से निपटने के लिए पोषण संबंधी विविधता और खाद्य सुरक्षा बढ़ाने में पोषण उद्यानों की भूमिका का विश्लेषण करता है। न्यूट्री-गार्डन का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण परिवारों में सब्जियों की उपलब्धता बढ़ाना और पोषण उद्यान की रूपरेखा, तकनीकी और पोषण संबंधी पहलुओं के बारे में ग्रामीण महिला किसानों के ज्ञान में सुधार करना था। कुपोषण, जिसमें बौनापन, दुर्बलता और एनीमिया जैसे लक्षण शामिल हैं, विशेष रूप से महिलाओं और बच्चों को प्रभावित करता है। सीमित भूमि और जल जैसी चुनौतियों के बावजूद, पोषण उद्यानों ने खाद्य सुरक्षा, पोषण विविधता और घरेलू आय में सुधार किया है। पोषण उद्यान (न्यूट्री-गार्डन) कार्यक्रमों की स्थिरता और विस्तार सुनिश्चित करने के लिए बहुसंख्यक दृष्टिकोण, सरकारी समर्थन, सामुदायिक शिक्षा और व्यवहार परिवर्तन संचार की आवश्यकता पर प्रकाश डालता है। शोध से पता चलता है कि पर्याप्त तकनीकी सहायता और जागरूकता के साथ, पोषण उद्यान ग्रामीण समुदायों में पोषण सुरक्षा बढ़ाने का एक स्थायी समाधान हो सकते हैं। पोषण उद्यान न केवल घरेलू पोषण में सुधार करते हैं बल्कि आय का स्रोत भी बनते हैं, जिससे विशेष रूप से बच्चों, गर्भवती महिलाओं और स्तनपान कराने वाली महिलाओं जैसे कमजोर समूहों को लाभ होता है। हालांकि, कुपोषण से प्रभावी ढंग से निपटने के लिए, खाद्य प्रणालियों में बदलाव लाने और पोषण उद्यान पहलों के प्रभाव को बेहतर बनाने के लिए पर्याप्त सरकारी सहायता और शिक्षा कार्यक्रमों की नितांत आवश्यकता है। महिलाओं और बच्चों में एनीमिया, कुपोषण, बौनापन और दुर्बलता जैसी कई पोषण संबंधी समस्याएं व्याप्त हैं। पोषण उद्यान (न्यूट्री-गार्डन) ताजी सब्जियों और फलों की दैनिक उपलब्धता सुनिश्चित करके ग्रामीण परिवारों के आहार में विविधता को बढ़ावा देता है, जिससे घरेलू या सामुदायिक स्तर पर पोषण सुरक्षा प्राप्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई जा सकती है।

न्यूट्री-गार्डन क्यों महत्वपूर्ण है?

पोषण में सुधार: यह आयरन, विटामिन (जैसे एस्कॉर्बिक एसिड) और अन्य सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी को दूर करता है, जिससे एनीमिया और कुपोषण से लड़ने में मदद मिलती है।

महिला सशक्तिकरण: महिलाओं को भोजन प्रदान करने का रूप में सशक्त बनाता है, जिससे उनकी सामाजिक-आर्थिक स्थिति में सुधार होता है और वे अपने परिवारों के स्वास्थ्य के लिए सक्रिय भूमिका निभाती हैं।

खाद्य सुरक्षा: परिवारों को साल भर ताजी, मौसमी और पौष्टिक सब्जियां उपलब्ध कराता है, जिससे भोजन पर निर्भरता कम होती है।

आर्थिक लाभ: यह परिवार हेतु पूरक आय का स्रोत हो सकता है



और बाजार से सब्जियां खरीदने के खर्च को कम करता है।

स्थायी और जैविक कृषि: जैविक खाद और प्राकृतिक तरीकों का उपयोग करके टिकाऊ कृषि पद्धतियों को बढ़ावा देता है।

व्यापक पहुंच: भूमिहीन परिवारों के लिए गमलों या बोरियों में बागवानी का विकल्प भी प्रदान करता है।

मुख्य घटक और कार्यान्वयन विविध फसलें: टमाटर, भिंडी, लौकी, पालक, बैंगन, फूलगोभी, और विभिन्न मौसमी सब्जियां उगाई जाती हैं।

तकनीकी सहायता: कृषि विज्ञान केंद्र (KVKs) और अन्य संगठन महिलाओं को बागवानी और पोषक तत्वों के प्रबंधन का प्रशिक्षण देते हैं।

सरकारी पहल: पोषण अभियान और अन्य मिशनों के तहत इसे बढ़ावा दिया जा रहा है, जैसे कि आंगन बाड़ी में पोषण वाटिका कार्यक्रम।

जल प्रबंधन: ग्रे-वाटर (धोने के पानी) के उपचार और पुनः उपयोग जैसी तकनीकों को एकीकृत किया जाता है।

सब्जी और फल आधारित पोषण उद्यान पोषण का सबसे समृद्ध स्रोत है और कुपोषण उन्मूलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। पोषण उद्यान रसोई उद्यान का एक उन्नत रूप है जिसमें फलों और सब्जियों को भोजन और आय के स्रोत के रूप में उगाया जाता है। छोटे और सीमांत किसानों के लिए, पोषण उद्यान परिवार के आहार में विविधता लाने में योगदान दे सकता है और कई अन्य लाभ भी प्रदान कर सकता है, विशेष रूप से महिलाओं के लिए। ग्रामीण क्षेत्रों, विशेषकर आदिवासी क्षेत्रों में कुपोषण एक गंभीर समस्या है। प्रदेश में फसल उत्पादन कम है, जिसका कारण छोटे और बिखरे हुए भू-भाग, कम उपजाऊ मिट्टी और अधिकतर वर्षा आधारित कृषि है। किसान अभी भी पारंपरिक निर्वाह खेती कर रहे हैं, जिसमें मुख्य रूप से अनाज की फसलें शामिल हैं, जो एक वर्ष में तीन से चार महीने से अधिक समय तक किसान परिवारों का भरण-पोषण नहीं कर पाती हैं। इसलिए, महिलाओं को अपने दैनिक आहार में उच्च गुणवत्ता वाले पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है क्योंकि उनका कार्यभार और ऊर्जा व्यय अधिक होता है। पहलुओं में व्याप्त इस समस्या का एक समाधान "स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति स्थानीय स्तर पर" हो सकता है। जलवायु परिस्थितियों मौसमी और गैर-मौसमी सब्जियों और फलों के उत्पादन के लिए उपयुक्त हैं, जो सूक्ष्म पोषक तत्वों से भरपूर होते हैं।

सब्जी आधारित पोषक उद्यान: सब्जी आधारित पोषक उद्यान पोषण का सबसे समृद्ध स्रोत है और कुपोषण उन्मूलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। पोषक उद्यान रसोई उद्यान का एक उन्नत रूप है जिसमें सब्जियों को भोजन और आय के स्रोत के रूप में अधिक वैज्ञानिक तरीके से उगाया जाता है। छोटे और सीमांत किसानों के लिए, पोषक उद्यान परिवारिक आहार में योगदान दे सकता है और कई अन्य लाभ प्रदान कर सकता है, विशेष रूप से महिलाओं के लिए। वर्तमान

शोध खेत आधारित व्यावसायिक फसलों पर केंद्रित है, लेकिन इन फसलों की बिक्री से होने वाली आय का उपयोग अक्सर परिवार द्वारा गुणवत्तापूर्ण भोजन खरीदने के लिए नहीं किया जाता है। कृषि के पोषण और स्वास्थ्य में योगदान पर प्रश्न उठने लगे हैं। इसी कारण पोषक उद्यानों की शुरुआत हुई है क्योंकि वे खाद्य उत्पादन से पोषण संबंधी परिणामों तक का एक स्पष्ट मार्ग दिखाते हैं। भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद (आईसीएमआर, 2010) के अनुसार, सब्जी सेवन की अनुशंसा को पूरा किया जा सकता है, अर्थात् प्रति व्यक्ति प्रति दिन 300 ग्राम सब्जी, जिसमें 50 ग्राम पत्तेदार सब्जी, 50 ग्राम जड़ वाली सब्जी और 200 ग्राम अन्य सब्जियां शामिल हैं।

पोषक उद्यान की स्थापना: आमतौर पर पोषक उद्यान घर के बैकगार्ड में स्थापित किया जा सकता है जहाँ पर्याप्त पानी उपलब्ध हो। पोषक उद्यान घर के पास ही बनाना चाहिए ताकि इसे जानवरों से होने वाले नुकसान से बचाया जा सके, जो की काफी परेशानी पैदा करते हैं। वर्गाकार भूखंड की तुलना में आयताकार उद्यान बेहतर रहता है। लगभग 200 वर्ग मीटर भूमि पांच सदस्यों वाले परिवार के लिए पूरे वर्ष सब्जियां उपलब्ध कराने के लिए पर्याप्त है। पोषक उद्यान की रूपरेखा और फसल आवंटन को जलवायु और मौसमी परिवर्तनों के अनुसार बदला जा सकता है। बारहमासी सब्जियों को बगीचे के एक तरफ लगाना चाहिए ताकि वे न तो शेष भाग पर छाया डालें और न ही अन्य फसलों के बीच की खेती में बाधा डालें। छाया पसंद करने वाली सब्जियों को बारहमासी वयारियों में लगाया जा सकता है। रसोई के कचरे के प्रभावी उपयोग के लिए पोषण उद्यान के कोने में खाद के गट्टे बनाए जा सकते हैं। बारहमासी फसलों के लिए क्षेत्र आवंटित करने के बाद, शेष भाग को 6-8 बराबर भागों में विभाजित करके वार्षिक सब्जी फसलें उगाई जा सकती हैं। वैज्ञानिक पद्धतियों और फसल चक्र का पालन करके, एक ही भाग में दो से तीन वार्षिक फसलें उगाई जा सकती हैं। भूखंड का प्रभावी उपयोग करने के लिए, विभिन्न प्रकार की फसलें उगाना, अंतरफसल उगाना और मिश्रित फसल उगाना जैसे तरीके अपनाए जा सकते हैं। खेत के बीचोंबीच और चारों ओर पैदल चलने का रास्ता बनाया जाना चाहिए। चूँकि बगीचे से ताजी सब्जियां सीधे उपभोग के लिए उपयोग की जाती हैं, इसलिए जैविक खाद का उपयोग किया जाना चाहिए, जो गांवों में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। हालांकि, कीटों और रोगों से मुक्त अच्छी फसल प्राप्त करने के लिए सीमित मात्रा में रसायनों का उपयोग किया जा सकता है।

निष्कर्ष: प्राचीन काल से ही पोषण उद्यान पारंपरिक कृषि प्रणालियों का एक अभिन्न अंग रहे हैं, लेकिन समय के साथ इनका महत्व कम हो गया है। दैनिक आहार में विभिन्न रंगों की सब्जियों को शामिल करने से व्यक्ति की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है और रोग प्रतिरोधक क्षमता में सुधार होता है। साथ ही, ताजे फलों और सब्जियों में पाए जाने वाले असंख्य फाइटीकेमिकल्स एंटीऑक्सीडेंट, एंटी-एलर्जिक, एंटी-कार्सिनोजेनिक, एंटी-इंफ्लेमेटरी, एंटी-वायरल और एंटी-प्रोलिफेरेटिव गुणों से युक्त होते हैं। पोषण उद्यान उन स्थानों और गांवों के लिए भी अत्यंत आवश्यक हैं जो स्थानीय बाजार से दूर और एकांत में स्थित हैं। ग्रामीण और दूरस्थ क्षेत्रों में उचित पोषण, पोषण उद्यान और आहार संबंधी आदतों के बारे में जागरूकता अभियान चलाया जाना चाहिए। पोषण उद्यान न्यूनतम निवेश के साथ महिलाओं के पोषण स्तर में सुधार करने का एक लाभकारी तरीका है।



शिवानी क्षीर सागर अतिथि शिक्षक (पुष्प विज्ञान एवं भू-दृश्य वास्तुकला) महंत बिसाहू दास उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय एवं अनुसंधान केंद्र, गौरैला-पेंड्रा-मरवाही, (छत्तीसगढ़)

सुमन पांडेय पीएच.डी. शोधार्थी (सब्जी विज्ञान) इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)

प्रस्तावना: आज के तीव्र शहरीकरण, औद्योगिकरण एवं बढ़ते पर्यावरणीय संकट के दौर में शहरी क्षेत्रों में हरित आवरण को बढ़ाना समय की सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता बन गई है। बढ़ते वायु प्रदूषण, तापमान में वृद्धि तथा शहरी ऊष्मा द्वीप प्रभाव को नियंत्रित करने के लिए विभिन्न वृक्ष प्रजातियों का बड़े पैमाने पर रोपण किया जा रहा है। इस संदर्भ में *Alstonia scholaris* (ससपर्णी) एक अत्यंत लोकप्रिय वृक्ष के रूप में उभरकर सामने आया है, जिसे उसकी तीव्र वृद्धि, सदाबहार प्रकृति, अनुकूलन क्षमता तथा आकर्षक संरचना के कारण शहरी वृक्षारोपण में व्यापक रूप से अपनाया गया विशेष रूप से रायपुर तथा संपूर्ण छत्तीसगढ़ में नगरीय हरितिकरण कार्यक्रमों के अंतर्गत सड़क किनारों, शासकीय परिसरों, शैक्षणिक संस्थानों, उद्यानों एवं आवासीय कॉलोनिजों में ससपर्णी का बड़े पैमाने पर रोपण किया गया है। इसकी तीव्र वृद्धि दर, कम रखरखाव की आवश्यकता, उच्च जीवितता तथा वर्ष भर हरित बने रहने की क्षमता ने इसे नगर निगमों, वन विभाग तथा नगर नियोजकों के लिए एक अत्यंत उपयुक्त एवं किफायती विकल्प बना दिया है। परिणाम स्वरूप, यह वृक्ष शहरी परिदृश्य का एक अभिन्न अंग बन चुका है। किन्तु, जहाँ एक ओर यह वृक्ष पर्यावरण संरक्षण, वायु शुद्धिकरण तथा हरित सौंदर्य में महत्वपूर्ण योगदान देता है, वहीं दूसरी ओर हाल के वर्षों में इसके पुष्पन काल के दौरान उत्पन्न होने वाली तीव्र सुगंध को लेकर अनेक स्वास्थ्य संबंधी चिंताएँ भी सामने आई हैं। विशेषकर रायपुर जैसे शहरों में शरद ऋतु (अक्टूबर-नवंबर) के समय इसके फूलों से निकलने वाली तेज गंध के कारण नागरिकों द्वारा सिरदर्द, एलर्जी, आंखों में जलन एवं श्वसन संबंधी समस्याओं की शिकायतें दर्ज की गई हैं। कई स्थानीय निवासियों, विशेषकर बच्चों, बुजुर्गों एवं अस्थमा से ग्रसित व्यक्तियों ने इसे अस्वस्थिजनक एवं स्वास्थ्य के लिए हानिकारक बताया है। इस परिप्रेक्ष्य में *Alstonia scholaris* को लेकर छत्तीसगढ़ के शहरी क्षेत्रों में एक स्पष्ट द्वंद्व उभरकर सामने आता है। एक ओर यह वृक्ष पर्यावरणीय दृष्टि से अत्यंत लाभकारी, प्रदूषण नियंत्रण में सहायक तथा हरित आवरण बढ़ाने वाला है वहीं दूसरी ओर, कुछ परिस्थितियों में यह जनस्वास्थ्य के लिए चुनौती के रूप में भी उभर रहा है। अतः वर्तमान परिस्थितियों में यह प्रश्न अत्यंत प्रासंगिक एवं विचारणीय हो जाता है कि क्या ससपर्णी वास्तव में शहरी जीवन के लिए एक वरदान है, या फिर अनियोजित एवं अत्यधिक रोपण के कारण यह धीरे-धीरे एक अभिशाप का रूप धारण करता जा रहा है?

Botanical Description (वनस्पति विवरण)—*Alstonia scholaris* (ससपर्णी) परिवार Apocynaceae का एक सदाबहार, मध्यम से बड़े आकार का वृक्ष है, जो सामान्यतः 12-25 मीटर तक ऊंचाई प्राप्त करता है। इसकी पत्तियां 5-7 के समूह में वृत्ताकार रूप से व्यवस्थित होती हैं, जो इसे विशिष्ट पहचान प्रदान करती हैं। पत्तियाँ गहरे हरे रंग की, चिकनी एवं चमकदार होती हैं, जबकि तना सीधा एवं छल धूसर रंग की होती है। इसके छोटे, हरे-सफेद पुष्प शरद ऋतु (अक्टूबर-नवंबर) में खिलते हैं और अत्यधिक तीव्र सुगंध उत्पन्न करते हैं। यह वृक्ष उष्णकटिबंधीय एवं उपोष्णकटिबंधीय जलवायु में आसानी से उगता है तथा शहरी परिस्थितियों के प्रति अत्यधिक सहनशील होता है।

Uses & Benefits (उपयोग एवं लाभ)—ससपर्णी के अनेक

Alstonia scholaris (ससपर्णी): शहरी हरितिकरण में वरदान या उभरता अभिशाप?

पर्यावरणीय एवं औषधीय लाभ हैं, जो इसे शहरी हरितिकरण हेतु एक महत्वपूर्ण प्रजाति बनाते हैं। यह वायु प्रदूषण को कम करने, धूल एवं कणों को अवशोषित करने तथा कार्बन डाइऑक्साइड को नियंत्रित करने में सहायक होता है। इसकी तीव्र वृद्धि के कारण यह कम समय में हरित आवरण प्रदान करता है और छायादार वृक्ष के रूप में तापमान को नियंत्रित करने में मदद करता है। आयुर्वेद में इसकी छाल का उपयोग बुखार, त्वचा रोग एवं श्वसन संबंधी समस्याओं के उपचार में किया जाता है। साथ ही, इसकी सदाबहार प्रकृति एवं आकर्षक स्वरूप इसे लैंडस्केपिंग एवं एवेन्यू प्लांटेशन हेतु उपयुक्त बनाते हैं।

Problems: "अभिशाप" का पक्ष— हालांकि इसके अनेक लाभ हैं, परंतु इसके पुष्पन काल के दौरान उत्पन्न होने वाली तीव्र सुगंध इसे विवादास्पद बनाती है। कई लोगों में इसके कारण सिरदर्द, एलर्जी, आंखों में जलन एवं श्वसन संबंधी समस्याएँ उत्पन्न होती हैं, विशेषकर बच्चों, बुजुर्गों एवं अस्थमा रोगियों में। इसके अतिरिक्त, शहरी क्षेत्रों में एक ही प्रजाति का अत्यधिक रोपण (monoculture) जैव विविधता में कमी लाता है तथा पारिस्थितिक संतुलन को प्रभावित करता है। इसके पुष्पों से निकलने वाले वाष्पशील कार्बनिक यौगिक (VOCs) भी संवेदनशील व्यक्तियों में असहजता का कारण बनते हैं।

Case Examples (Urban India)—हाल के वर्षों (2023-2025) में *Alstonia scholaris* (ससपर्णी) पर किए गए विभिन्न वैज्ञानिक अध्ययनों ने इसके जैव सक्रिय (bioactive) गुणों को उजागर किया है, जो इसके लाभ एवं संभावित दुष्प्रभाव दोनों को समझने में सहायक हैं। शोधों के अनुसार, इस पौधे में एल्कलॉइड, फ्लेवोनॉइड एवं टरपेनॉइड जैसे महत्वपूर्ण फाइटोकैमिकल्स पाए जाते हैं, जो इसे औषधीय दृष्टि से महत्वपूर्ण बनाते हैं। Journal of Ethnopharmacology (2024) एवं Pharmacognosy Research (2025) में प्रकाशित अध्ययनों ने इसके एंटी-इंफ्लेमेटरी, एंटीऑक्सीडेंट एवं एंटी-इंफेक्टिव गुणों की पुष्टि की है। इसके अतिरिक्त, कुछ अध्ययनों में यह भी पाया गया है कि इसके सक्रिय घटक श्वसन तंत्र पर प्रभाव डाल सकते हैं, विशेषकर अस्थमा से संबंधित मॉडल में। यही कारण है कि शहरी क्षेत्रों में इसके पुष्पन के दौरान उत्पन्न तीव्र सुगंध एवं वाष्पशील कार्बनिक यौगिक (VOC) संवेदनशील व्यक्तियों में एलर्जी, सिरदर्द एवं श्वसन संबंधी अस्वस्थिजनक उत्पन्न कर सकते हैं। यद्यपि प्रत्यक्ष रूप से इसके एलर्जिक प्रभावों पर सीमित शोध उपलब्ध हैं, तथापि इसके जैव-रासायनिक गुणों एवं शहरी अनुभवों के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि *Alstonia scholaris* का प्रभाव बहुआयामी है, जो इसे शहरी जीवन में एक साथ उपयोगी तथा चुनौतीपूर्ण दोनों बनाता है।

Solutions & Suggestions (समाधान एवं सुझाव)—शहरी क्षेत्रों में पहले से लगाए गए वृक्ष, विशेषकर एक ही प्रजाति के अधिक घनत्व वाले वृक्ष, जब पर्यावरणीय एवं स्वास्थ्य संबंधी समस्याएँ उत्पन्न करने लगते हैं, तब उनके प्रभावी प्रबंधन की आवश्यकता होती है। इसके लिए चयनात्मक छंटाई (pruning) एवं थिनिंग (thinning) जैसे उपाय अपनाकर वृक्षों के घनत्व को नियंत्रित किया जा



सकता है, जिससे प्रकाश एवं वायु का समुचित संचार बना रहता है। जहाँ स्थिति अधिक गंभीर हो, वहाँ छोटे एवं मध्यम आकार के वृक्षों का ट्रांसप्लांटेशन कर उन्हें उपयुक्त स्थानों जैसे उद्यानों या खुले क्षेत्रों में स्थानांतरित कि जा सकता है। विशेष रूप से ससपर्णी वृक्ष, जो शहरी क्षेत्रों में दुर्गंध एवं एलर्जी का कारण बनते हैं, उनके रोपण को संवेदनशील स्थानों जैसे अस्पताल, विद्यालय एवं घनी आबादी वाले क्षेत्रों में सीमित करना आवश्यक है। साथ ही, जहाँ ऐसे वृक्ष हटाए जाएँ, वहाँ मिश्रित वृक्षारोपण को बढ़ावा देते हुए *Azadirachta*

indica *Bauhinia variegata* एवं *Cassia fistula* जैसी प्रजातियों को शामिल किया जाना चाहिए, जिससे जैव विविधता एवं पारिस्थितिक संतुलन बना रहे। इसके अतिरिक्त, वृक्षों की जड़ों से होने वाले संरचनात्मक नुकसान को रोकने के लिए रूट बैरियर तकनीक का उपयोग, तथा नियमित रखरखाव एवं निगरानी अत्यंत आवश्यक है। शहरी निकायों द्वारा वृक्षों की गणना 'tree inventory' एवं वैज्ञानिक योजना 'urban tree planning' को अपनाया जाए। साथ ही नागरिकों में जागरूकता बढ़ाकर सामुदायिक सहभागिता सुनिश्चित करना भी इस दिशा में महत्वपूर्ण कदम है। इस प्रकार, वैज्ञानिक, संतुलित एवं सतत प्रबंधन के माध्यम से शहरी वृक्षारोपण को अधिक प्रभावी एवं पर्यावरण अनुकूल बनाया जा सकता है।

Conclusion (निष्कर्ष)—वर्तमान अध्ययन से यह स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है कि *Alstonia scholaris* (ससपर्णी) न तो पूर्णतः "वरदान" है और न ही पूर्णतः "अभिशाप", बल्कि इसका प्रभाव परिस्थिति, स्थान चयन एवं प्रबंधन पद्धति पर निर्भर करता है। शहरी क्षेत्रों में इसके व्यापक एवं एकांगी रोपण ने जहाँ हरित आवरण, वायु गुणवत्ता सुधार एवं त्वरित हरियाली प्रदान करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है, वहीं अनियोजित घनत्व एवं संवेदनशील स्थलों पर इसकी उपस्थिति ने जनस्वास्थ्य संबंधी समस्याओं को भी जन्म दिया है। विशेष रूप से, इसके पुष्पन काल के दौरान उत्पन्न तीव्र गंध एवं वाष्पशील कार्बनिक यौगिक (VOCs) संवेदनशील व्यक्तियों जैसे बच्चे, बुजुर्ग एवं अस्थमा रोगियों के लिए अस्वस्थिजनक कारण बनते हैं, जो यह संकेत देता है कि केवल पर्यावरणीय लाभों के आधार पर किसी एक प्रजाति का बड़े पैमाने पर रोपण दीर्घकालिक दृष्टि से उपयुक्त नहीं है। इस संदर्भ में, यह आवश्यक हो जाता है कि शहरी वृक्षारोपण को केवल संख्या आधारित अभियान के रूप में न देखकर, एक वैज्ञानिक एवं समग्र शहरी पारिस्थितिकी तंत्र (urban ecosystem approach) के रूप में विकसित किया जाए। प्रजातीय विविधता, उचित दूरी, संवेदनशील क्षेत्रों में नियंत्रित रोपण, तथा नियमित निगरानी एवं प्रबंधन ये सभी तत्व भविष्य की योजनाओं का अभिन्न अंग होने चाहिए। अतः, यदि संतुलित योजना, वैज्ञानिक हस्तक्षेप एवं जन-जागरूकता को साथ लेकर आगे बढ़ा जाए, तो ससपर्णी जैसे वृक्षों के नकारात्मक प्रभावों को नियंत्रित करते हुए उनके सकारात्मक पक्षों का अधिकतम लाभ उठाया जा सकता है। इस प्रकार, समस्या का समाधान वृक्षों को हटाने में नहीं, बल्कि उन्हें सही स्थान, सही संख्या एवं सही प्रबंधन के साथ अपनाने में निहित है। यह सतत एवं स्वस्थ शहरी विकास की कुंजी है।



डॉ. सुमन रावटे (वैज्ञानिक)

डॉ. जेनू झा (समन्वयक), कृषि-औद्योगिक
जैव प्रौद्योगिकी में उत्कृष्टता केंद्र (सीओई-एआईबी)
इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

टिशू कल्चर एक परिष्कृत जैव प्रौद्योगिकी तकनीक है जो नियंत्रित और रोगाणु रहित परिस्थितियों में पौधों की कोशिकाओं, ऊतकों या अंगों को इन विट्रो में विकसित करने, गुणा करने में सक्षम बनाती है। यह विधि पौधों के सूक्ष्मप्रचार, फसल सुधार, जर्मप्लाज्म संरक्षण और मौलिक पादप विकास अनुसंधान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह पादप प्रजनन में एक शक्तिशाली प्रणाली के रूप में कार्य करता है, जिससे कम समय में बड़ी संख्या में रोग-मुक्त और आनुवंशिक रूप से समान पौधों का उत्पादन संभव हो पाता है। इसके अतिरिक्त, टिशू कल्चर पादप आनुवंशिक संसाधनों के संरक्षण और भविष्य की पीढ़ियों के लिए उनके उपयोग को सुनिश्चित करने में भी महत्वपूर्ण योगदान देता है। यह तकनीक पादप कोशिकाओं की पूर्ण क्षमता का लाभ उठाती है, जिसे टोटीपोटेन्सी के रूप में जाना जाता है, जो एक एकल कोशिका को पूरे पौधे में पुनर्जीवित करने की अनुमति देती है। यह तकनीक पौधों के क्लोन बनाने में भी व्यापक रूप से उपयोग की जाती है, जिसे माइक्रोप्रोपेगेशन के नाम से जाना जाता है। यह नियंत्रित पर्यावरणीय परिस्थितियों और पोषक तत्वों की समुचित आपूर्ति में पौधों के क्लोन तैयार करने के लिए विशेष रूप से उपयोगी है। इस प्रक्रिया में, एक छोटे ऊतक के टुकड़े से हजारों पौधे कम समय में और न्यूनतम स्थान पर उत्पादित किए जा सकते हैं, जो इसे वर्ष भर उपयोग के लिए उपयुक्त बनाता है। यह तकनीक, विशेष रूप से माइक्रोप्रोपेगेशन, विभिन्न कृषि फसलों, औषधीय पौधों और सजावटी पौधों के बड़े पैमाने पर उत्पादन के लिए महत्वपूर्ण है। इसके साथ ही, यह विधि रोग-मुक्त पौधों के तीव्र उत्पादन और दुर्लभ प्रजातियों के गुणन में भी सहायक सिद्ध होती है।

तकनीकी ज्ञान की कमी

चुनौती: टिशू कल्चर एक अत्यंत सूक्ष्म और वैज्ञानिक प्रक्रिया है। किसानों तथा उद्यमियों के पास अक्सर इसकी गहन जानकारी का अभाव होता है, जिससे तकनीक का सही उपयोग संभव नहीं हो पाता। इस जटिल प्रक्रिया के लिए प्रशिक्षित कर्मचारियों और विशेष सुविधाओं की आवश्यकता होती है, जिसके बिना संवर्धन का सफल निष्पादन असंभव है। अक्सर यह कमी उत्पाद की गुणवत्ता और उपज को प्रभावित करती है, जिससे किसानों का टिशू कल्चर प्रौद्योगिकी में विश्वास कम हो सकता है। इसके अतिरिक्त, इस तकनीक को सफलतापूर्वक लागू करने के लिए निरंतर अनुसंधान और अद्यतन प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है।

समाधान: * कृषि विश्वविद्यालयों और अनुसंधान संस्थानों द्वारा नियमित प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करना। किसानों और छोटे उद्यमियों के लिए व्यावहारिक कार्यशालाओं का आयोजन करना, जिससे वे तकनीक को सीधे सीख सकें और उनके प्रश्नों का समाधान हो सके। * सरल भाषा में मार्गदर्शिकाएँ, वीडियो सामग्री तथा मोबाइल ऐप्स विकसित करना। अनुभवी टिशू कल्चर वैज्ञानिकों द्वारा परामर्श सेवाएँ प्रदान करना, ताकि प्रयोगशाला-स्तरीय चुनौतियों का समाधान किया जा सके। * केले, आलू और बांस जैसी सफल टिशू कल्चर परियोजनाओं के केस स्टडी प्रस्तुत करना। इसके अलावा, जैव-प्रौद्योगिकी में नैनोकणों का एकीकरण, विशेष रूप से टिशू कल्चर मीडिया की तैयारी, नए उपकरण, कर्मियों के प्रशिक्षण और अपशिष्ट प्रबंधन विधियों में बदलाव की मांग करता है, जिससे संबंधित लागत और विशेषज्ञता की आवश्यकता और बढ़ जाती है।

टिशू कल्चर में कठिनाइयाँ और नवाचारपूर्ण उपाय

प्रयोगशाला की लागत और रखरखाव

चुनौती: टिशू कल्चर प्रयोगशाला स्थापित करने में उपकरणों, रसायनों तथा प्रशिक्षित तकनीशियनों की उच्च लागत एक बड़ी बाधा है। इसके अतिरिक्त, रोगाणुहीन वातावरण बनाए रखने, पोषक तत्व मीडिया तैयार करने और निरंतर गुणवत्ता नियंत्रण सुनिश्चित करने के लिए नियमित रखरखाव और परिचालन व्यय भी काफी होते हैं। इन लागतों के कारण, विशेषकर छोटे पैमाने के उत्पादकों और दूरदराज के ग्रामीण क्षेत्रों के किसानों के लिए टिशू कल्चर प्रौद्योगिकी को अपना चुनौतीपूर्ण हो जाता है। अतः, इन बाधाओं को दूर करने के लिए वित्तपोषण और तकनीकी सहायता के नवीन मॉडल आवश्यक हैं। इसके अतिरिक्त, विकासशील देशों में अपत्यास या निम्न-गुणवत्ता वाली प्रयोगशाला सुविधाएँ और सीमित धन भी सतत उत्पादन हेतु एक गंभीर चुनौती प्रस्तुत करते हैं।

समाधान: * मांड्यूलर लैंब की अवधारणा अपनाकर छोटे स्तर पर प्रारंभ करना। सरकारी और निजी निवेश के माध्यम से साझा प्रयोगशालाएँ स्थापित करना, जिससे उपकरण और सुविधाओं की लागत को कई उपयोगकर्ताओं के बीच विभाजित किया जा सके। * सहकारी समितियों द्वारा सामूहिक खरीद तथा साझा प्रयोगशालाएँ स्थापित करना। लागत प्रभावी स्वदेशी उपकरणों के विकास को बढ़ावा देना और ऊर्जा-कुशल प्रौद्योगिकियों को एकीकृत करना, जिससे दीर्घकालिक परिचालन लागत कम हो सके। * नियमित रखरखाव हेतु प्रशिक्षित तकनीशियनों की नियुक्ति सुनिश्चित करना। इसके अतिरिक्त, टिशू कल्चर की उच्च प्रारंभिक निवेश लागत को कम करने हेतु सरकारी सब्सिडी और कम ब्याज वाले ऋण की उपलब्धता सुनिश्चित करना अत्यंत महत्वपूर्ण है।

सरकारी योजनाएँ और सब्सिडी

NHM और MIDH: बागवानी क्षेत्र में टिशू कल्चर प्रौद्योगिकी को बढ़ावा देने के लिए राष्ट्रीय बागवानी मिशन और बागवानी के एकीकृत विकास मिशन जैसी योजनाएँ वित्तीय सहायता प्रदान करती हैं। इन योजनाओं के तहत, टिशू कल्चर प्रयोगशालाओं की स्थापना, आधुनिकीकरण, और गुणवत्तापूर्ण रोपण सामग्री के उत्पादन के लिए पूंजीगत सब्सिडी और तकनीकी मार्गदर्शन उपलब्ध कराया जाता है। इसके अतिरिक्त, भारत सरकार और विभिन्न राज्य सरकारों द्वारा वाणिज्यिक पादप टिशू कल्चर के उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए कई योजनाएँ भी शुरू की गई हैं, जो आर्थिक और तकनीकी दोनों तरह की सहायता प्रदान करती हैं। इन पहलों का उद्देश्य उच्च गुणवत्ता वाले पौधे उत्पादन को बढ़ावा देना और टिशू कल्चर उद्योग के स्थायी विकास को सुनिश्चित करना है।

निजी क्षेत्र: 2.5 करोड़ ₹ की परियोजना लागत पर 40% क्रेडिट-लिंक्ड बैक-एंडेड सब्सिडी।

सहकारी क्षेत्र: 2.5 करोड़ ₹ की परियोजना लागत पर 100% क्रेडिट-लिंक्ड बैक-एंडेड सब्सिडी। इसके अलावा, भारत सरकार द्वारा स्थापित एक राष्ट्रीय सुविधा केंद्र और पांच उपग्रह केंद्र वायसराय निदान और गुणवत्ता नियंत्रण में सहायता प्रदान करते हैं, जबकि कृषि मंत्रालय छोटे किसानों हेतु ₹ 50 लाख तक के ऋण की सुविधा भी प्रदान करता है।

सार्वजनिक क्षेत्र: 100% वित्तीय सहायता। ये वित्तीय प्रावधान टिशू कल्चर सुविधाओं की स्थापना और उन्नयन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, विशेषकर उन क्षेत्रों में जहाँ प्रारंभिक निवेश एक बड़ी बाधा है। इन सब्सिडी और समर्थन प्रणालियों का उद्देश्य प्रौद्योगिकी के उपयोग को बढ़ावा और इस क्षेत्र में नवाचार को प्रोत्साहित करना है, जिससे टिशू कल्चर उत्पादों की प्रतिस्पर्धात्मकता बढ़ाई जा सके। इस प्रकार, सरकारी समर्थन टिशू कल्चर उद्योग के समग्र विकास के लिए महत्वपूर्ण है, खासकर उभरती अर्थव्यवस्थाओं में जहाँ बाजार की मांग और उद्योग की क्षमता अभी भी पूरी तरह से महसूस नहीं हुई है।

राज्य योगदान: केंद्र सरकार 85% तथा राज्य सरकार 15% योगदान करती है। यह सहयोगात्मक वित्तपोषण मॉडल टिशू कल्चर प्रौद्योगिकी के व्यापक प्रसार और इसके द्वारा उत्पादित गुणवत्तापूर्ण रोपण सामग्री तक पहुंच को सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस तरह की पहल निजी और सार्वजनिक दोनों क्षेत्रों में टिशू कल्चर सुविधाओं की स्थापना और उन्नयन को प्रोत्साहित करती है, जिससे आत्मनिर्भरता की दिशा में प्रगति होती है।

छत्तीसगढ़ में लाभ: * उद्यमियों को टिशू कल्चर लैब स्थापित करने हेतु NHM तथा MIDH योजनाओं से सीधा लाभ। ये योजनाएँ राज्य में उच्च गुणवत्ता वाले पौधों के उत्पादन को बढ़ावा देती हैं, जिससे बागवानी और कृषि उत्पादकता में वृद्धि होती है। * राज्य कृषि विभाग द्वारा आवेदन प्रक्रिया सरल बनाने हेतु पोर्टल और हेल्पलाइन उपलब्ध। इन संसाधनों के माध्यम से, किसान और उद्यमी आवश्यक जानकारी और सहायता प्राप्त कर सकते हैं, जिससे टिशू कल्चर तकनीक को अपनाना और उसके लाभों का दोहन करना सुगम हो जाता है। इसके अतिरिक्त, ये पहलें कृषि क्षेत्र में नवाचार और आधुनिकीकरण को बढ़ावा देती हैं, जिससे सतत कृषि पद्धतियों का विकास होता है। * किसानों एवं उद्यमियों को प्रोत्साहित करने हेतु सफल परियोजनाओं का प्रचार-प्रसार। इन सफलताओं का प्रदर्शन अन्य हितधारकों को भी टिशू कल्चर प्रौद्योगिकी अपनाने और संबंधित योजनाओं का लाभ उठाने के लिए प्रेरित कर सकता है, जिससे कृषि उत्पादन में गुणवत्ता और मात्रात्मक वृद्धि सुनिश्चित होगी।

सफलता की कहानियाँ: छत्तीसगढ़

1.केले की टिशू कल्चर: रोग-मुक्त पौधों से उत्पादन क्षमता में वृद्धि तथा स्थानीय स्तर पर पौधे सामग्री की उपलब्धता। इसके अतिरिक्त, यह उच्च उपज देने वाली किस्मों की सूक्ष्मप्रबंधन विधि आर्थिक दृष्टिकोण से किसानों हेतु अधिक व्यवहार्य और लागत प्रभावी बनाती है, जिससे केले की खेती में उत्पादकता और लाभप्रदता दोनों में उल्लेखनीय वृद्धि होती है।

2.बांस की टिशू कल्चर: IGKV और राज्य सरकार के सहयोग से उच्च गुणवत्ता वाली बांस पौधे सामग्री तैयार, जिससे ग्रामीण उद्यमिता को बढ़ावा। यह तकनीक बांस-आधारित उद्योगों के लिए एक स्थिर और विश्वसनीय आपूर्ति श्रृंखला सुनिश्चित करती है, जिससे टिकाऊ विकास और स्थानीय अर्थव्यवस्था का सुदृढीकरण होता है।

3.सब्जी फसलें: निजी उद्यमियों ने NHM तथा MIDH सब्सिडी का लाभ उठाकर लैब स्थापित कीं तथा स्थानीय बाजार में पौधों की आपूर्ति सुनिश्चित की। यह स्थानीय कृषि पारिस्थितिकी तंत्र को मजबूत करता है और किसानों को उच्च गुणवत्ता वाले, रोग-मुक्त रोपण सामग्री तक पहुंच प्रदान करके उनकी आय में वृद्धि करता है। इसके परिणामस्वरूप, इन फसलों की उत्पादकता और बाजार मूल्य में उल्लेखनीय सुधार होता है, जो कृषि-आधारित अर्थव्यवस्था को गति प्रदान करता है।

निष्कर्ष: टिशू कल्चर तकनीक कृषि उत्पादन को नई दिशा प्रदान करने में सक्षम है। तकनीकी प्रशिक्षण, लागत प्रबंधन तथा सरकारी योजनाओं का उचित उपयोग करने पर छत्तीसगढ़ जैसे राज्यों में यह किसानों और उद्यमियों के लिए अत्यंत लाभकारी सिद्ध हो सकती है। इसके अतिरिक्त, टिशू कल्चर केले के पौधों को अपनाने में जटिलताएँ भी देखी गई हैं, जिन्हें सरकारी और निजी क्षेत्रों के सहयोग से संबोधित किया जा सकता है ताकि छोटे किसानों द्वारा इसे अधिक से अधिक अपनाया जा सके। इन चुनौतियों से निपटने के लिए नियामक नीतियों को यूरोपीय संघ के मानकों के साथ संरेखित करना और क्षेत्रीय विकास रणनीतियों को एकीकृत करना महत्वपूर्ण है।



नीलम, प्रतिभा चौधरी पशुधन उत्पादन एवं प्रबन्धन विभाग, सैम हिंगीबॉटम कृषि प्रौद्योगिकी और विज्ञान विश्वविद्यालय इलाहाबाद (उत्तर प्रदेश)

तहसील चौमूं, जयपुर राजस्थान के सिंगोद कला गांव के प्रगतिशील किसान गौरीशंकर जी सामोता ने अपने नवाचारों से संरक्षित खेती में विदेशी सब्जियों का उत्पादन से देश भर के किसानों के लिए प्रेरणा का स्रोत बन रहे हैं जिनके पास कुल 25 से 30 हे. जमीन है जब इन्होंने संरक्षित खेती के बारे में सुना कि कम पानी और कम जगह में संरक्षित संरचनाओं में ड्रिप सिंचाई, सेट नेट हाउसिंग, पॉली हाउस में खेती करके अच्छा मुनाफा कमाया जा सकता है इसी सोच के साथ इन्होंने इजरायल के नाम से प्रसिद्ध मिनी फव्वारा भी अपने खेत में लगाया और नई तकनीकी खेती को अपनाया शुरूआती अवस्था में जब भारत में इजराइल से ड्रिप सिंचाई 2006-07 में आई थी तभी सब्सिडी का लाभ उठाया इन्होंने ड्रिप सिंचाई लगवाई और उसके बाद में 2009-10 में मिनी फव्वारा आया तो सर्वप्रथम इन्होंने मिनी फव्वारा लगाया 5 से 10 बीघा जमीन में तथा उसके बाद सब नेट हाउस लगवाया 2011-12 में उससे उन्हें पानी को संरक्षित करने में परेशानी आई तो उन्होंने 2013 में से नेट हाउस का नया रूप लगवाया जिससे पानी का भी उपयोग किया तथा उसके बाद उन्होंने 2015 में पॉली हाउस लगवाया। सिंगोद कला गांव के प्रगतिशील किसान गौरीशंकर जी सामोता ने अपने नवाचारों से संरक्षित खेती में विदेशी सब्जियों का उत्पादन से देश भर के किसानों के लिए प्रेरणा का स्रोत बन रहे हैं जिनके पास कुल 25 से 30 हेक्टेयर जमीन है जब इन्होंने संरक्षित खेती के बारे में सुना कि कम पानी और कम जगह में संरक्षित संरचनाओं में ड्रिप सिंचाई, सेट नेट हाउसिंग, पॉली हाउस में खेती करके अच्छा मुनाफा कमाया जा सकता है इसी सोच के साथ इन्होंने इजरायल के नाम से प्रसिद्ध मिनी फव्वारा भी अपने खेत में लगाया।

प्रगतिशील किसान गौरीशंकर सामोता

शुरुआती अवस्था में जब भारत में इजराइल से ड्रिप सिंचाई 2006-07 में आई थी तभी सब्सिडी का लाभ उठाया इन्होंने ड्रिप सिंचाई लगवाई और उसके बाद में 2009-10 में मिनी फव्वारा आया तो सर्वप्रथम इन्होंने मिनी फव्वारा लगाया 5 से 10 बीघा जमीन में तथा उसके बाद सब नेट हाउस लगवाया 2011-12 में उससे उन्हें पानी को संरक्षित करने में परेशानी आई तो उन्होंने 2013 में से नेट हाउस का नया रूप लगवाया जिससे पानी का भी उपयोग किया तथा उसके बाद उन्होंने 2015 में पॉली हाउस लगवाया 2015 में सौर ऊर्जा लगवाया उन्होंने और बिजली की बचत की 2015 में ही इन्होंने एक करोड़ लीटर पानी का पॉन्ड भी बनवाया फिर 2018 में इन्होंने दो पॉलीहाउस लगवाए जो 24000 वर्ग मीटर क्षेत्रफल में पॉलीहाउस लगवाया है। इसी सफलता के बाद इन्होंने सरकारी अनुदान पर अपने पॉलीहाउस का निर्माण करवाया तथा साथ ही 50% सरकारी अनुदानों पर पुलिया उसके समानांतर एक फार्म पॉन्ड बनवाया जिससे पुलिया ओशों की छत पर गिरने वाले वर्षा जल को फोन में संग्रहित किया गया इस पॉन्ड के पानी को खेती में काम लेने के लिए अनुदान पर सौर ऊर्जा संयंत्र भी सरकारी अनुदान पर लगवा लिया जिससे उनके पुलिया ओशों में खीरे लहलाने लगा। इसी

किसान गौरी शंकर ने अपने गांव को बना दिया मिनी इजराइल : सालाना आय एक से डेढ़ करोड़



बचत के लिए काफी उपयोगी साबित हुई इससे लगभग 30 से 60% तक पानी की बचत होती है इसके कारण सब्जी और अन्य फसलों के लिए उत्पादन में 20 से 50% तक बढ़ोतरी हुई है। इस माध्यम में उर्वरक देने से पोषक तत्व बराबर और उपयुक्त मात्रा में पौधों की जड़ों में पहुंच जाते हैं इस वजह से पौधे पोषक तत्वों का उपयुक्त इस्तेमाल कर पाते हैं जिससे फसलों की पैदावार में वृद्धि होती है तथा इन्होंने 60% अनुदान का भी उपयोग किया।

फसल उत्पादन	क्षेत्रफल	उत्पादन (क्विंटल)	कुल आमदनी (करोड़)
दो पॉली हाउस में खीरा (दो सीजन साल में)	24 हे. प्रत्येक	720 टन पर सीजन पॉली हाउस से	1 करोड़ 20 लाख
खुले खेत में सब्जियां -पता गोभी, फूलगोभी, हरी मिर्च, शिमला मिर्च, टमाटर आदि	0.8 हे.	4-5 टन सीजन	5 लाख
पशुपालन	12 दूधारू पशुओं	40 लीटर प्रतिदिन दुग्ध बिक्री से	3.50 लाख

सफलता के बाद वर्तमान में खुले खेत में पता गोभी, फूल गोभी, टमाटर, मिर्ची, शिमला मिर्च आदि फसलें लेने लगे तथा जैविक खाद के लिए पशुपालन को बढ़ावा दिया जिससे गोबर की खाद को सड़ा गला कर जैविक खाद तैयार करने लगे जिसका उपयोग करने से मृदा की उर्वरता शक्ति में वृद्धि हुई तथा रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता में कमी आई इसी के परिणाम स्वरूप आज पूर्णतया जैविक फसल उत्पादन लेने में सफल हुए जैविक खेती में समन्वित कीट प्रबंधन को अपनाते वाले किसान गौरीशंकर जी ने पारंपरिक कृषि में सब्जी, फल, पशुपालन व ऑर्गेनिक तरीके से तैयार किया तथा आधुनिक फार्मिंग को समन्वित करके कृषि में नवाचार किया।

गौरीशंकर जी ने घर पर जीवामृत तैयार किया और यह जैविक खेती के लिए एक सस्ता और बेहतरीन तरल उर्वरक बनकर फसलों के लिए एक वरदान साबित हुआ है क्योंकि इसे बनाने के लिए 200 लीटर पानी, 10 किलो गाय का गोबर, 10 लीटर गोमूत्र, 2 किलो गुड़, 2 किलो बेसन और 1 किलो उपजाऊ मिट्टी को ड्रम में मिलाकर 5 - 7 दिनों तक छाया में सड़ाया जाता है।

बूंद- बूंद सिंचाई विधि : बूंद-बूंद सिंचाई पद्धति पानी की

पशुपालन: किसान के पास कुल 20 पशु हैं जिनमें 4 गाय और 8 भैंस तथा 8-10 छोटे बछड़े- बछड़ियां हैं गाय राठी नस्ल की है तथा भैंस मुरा और सुरती नस्ल की हैं। यह पशुओं को अच्छा चारा तथा पौष्टिक आहार खिलाते हैं। दुधारू पशुओं से डेयरी में रोजाना लगभग 40 लीटर दूध बेचते हैं। इसे किसान को सालाना चार लाख तक की आय होती है।

खेती में नवाचार की और अग्रसर किसान की सफलता के कारण आसपास के अन्य किसान और वैज्ञानिक, कृषि अधिकारी उनके खेत पर उनके नवाचार देखने आने लगे। इस सफलता के बदौलत न्यून चैनलों और समाचार पत्रों में उनकी खबरें प्रकाशित होने लगीं।

आय में बढ़ोतरी : गौरी शंकर जी की सूझबूझ इतनी रंग लाई कि इस वर्ष नई तकनीकी के इस्तेमाल से पॉली हाउस उत्पादित खीरे, वर्षा जल संचय प्रणाली, ड्रिप विधि से खुले खेत में सब्जियों की खेती और जीवामृत सौर ऊर्जा संयंत्र का उपयोग, पशुधन से सालाना एक करोड़ 30 लाख रुपए कमाने में सफलता हासिल की है। किसान गौरीशंकर जी की शुद्ध आय 40-45 लाख रुपए है।

जैन बीज भण्डार एवं पशु आहार

मैन बाजार, चीनोर रोड,
छीमक जिला-ग्वालियर (म.प्र.)

प्रो. मुकेश जैन, मोबाइल: 9977638510



✍ शिवम दीक्षित (शोध छात्र) उद्यानिकी, जनता कॉलेज बकेवर इटावा (उ.प्र.)

✍ डॉ. आनंद सिंह सहायक प्राध्यापक, उद्यानिकी, जनता कॉलेज बकेवर इटावा (उ.प्र.)

✍ डॉ. अशोक कुमार पाण्डेय प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष, उद्यानिकी, जनता कॉलेज बकेवर इटावा (उ.प्र.)

✍ डॉ. अंकित सिंह भदौरिया विषय वस्तु विशेषज्ञ, उद्यानिकी, कृषि विज्ञान केंद्र, कासगंज, उत्तर प्रदेश

भारत में यूरिया और डीएपी जैसे रासायनिक उर्वरकों का संकट गहरा रहा है, विशेषकर पश्चिम एशिया के तनाव के कारण। इस स्थिति में गौ-आधारित खेती एक टिकाऊ और स्वदेशी विकल्प के रूप में उभर रही है।

यूरिया-डीएपी संकट की स्थिति: पश्चिम एशिया के संघर्ष से उर्वरक सप्लाई चेन प्रभावित हुई है, लेकिन सरकार ने खरीफ 2026 के लिए 177 लाख मीट्रिक टन का बफर स्टॉक तैयार किया है, जो पिछले साल से 36.5% अधिक है। मार्च 2026 में उत्पादन 24.23 लाख टन रहा, जिसमें यूरिया 13.55 लाख टन और डीएपी/एनपीके 7.62 लाख टन शामिल थे, पर आयात लागत बढ़ने से सब्सिडी बोझ 20-25 हजार करोड़ रुपये तक पहुंच सकता है। यूरिया 45 किलो बोरी 266 रुपये और डीएपी 50 किलो 1350 रुपये में उपलब्ध है, लेकिन वैश्विक प्रतिबंधों से भविष्य में कमी का खतरा है।

गौ-आधारित खेती क्या है: गौ-आधारित खेती गाय के गोबर, मूत्र, दूध आदि से बनी जैविक खादों पर निर्भर है, जैसे पंचगव्य, जीवामृत, बीजामृत इत्यादि। एक गाय का गोबर एवं मूत्र 3-5 एकड़ भूमि के लिए पर्याप्त उर्वरक देता है। जो मिट्टी की उर्वरता बढ़ाता है, क्योंकि गोबर में 300-500 करोड़ सूक्ष्म जीवाणु होते हैं जो मिट्टी को भुरभुरी बनाते हैं। देशी गाय की गौ-आधारित खेती में भूमिका बहुआयामी है क्योंकि यह न केवल मिट्टी की उर्वरता बढ़ाती है, बल्कि लागत कम रखते हुए पर्यावरण-अनुकूल और जहर-मुक्त खेती को संभव बनाती है।

देशी गाय की गौ-आधारित खेती में भूमिका: देशी गाय पालन अब सेहत साथ-साथ किसानों के लिए प्राकृतिक खेती का साधन भी है। भारतीय नस्ल की साहीवाल, गिर, हरियाणा, मेवाती और थारपारकर जैसी देशी गाय की नस्लों के दूध से अच्छा स्वास्थ्य लाभ भी प्राप्त होता है। देशी गाय जलवायु अनुकूल होने के साथ प्राकृतिक खेती में भी सहायक हैं। इनके गौ मूत्र और गोबर से प्राकृतिक उर्वरक बनाकर किसान खेतों में बेहतर पैदावार भी ले सकेंगे। देशी गाय का दूध मानव शरीर के लिए कई मायनों में हितकर है। देशी गाय का दूध उच्च गुणवत्ता और रोग प्रतिरोधक क्षमता के विकास के लिए जाना जाता है। यह पचने में आसान, सूजन दूर करने, हड्डियों और मानसिक स्वास्थ्य के लिए बेहतर होता है। देशी गाय के दूध में आयोडीन की मात्रा अपेक्षाकृत अधिक होती है। साथ ही उच्च मात्रा में सल्फर होने के कारण दिमाग की क्रियाशीलता के लिए काफी बेहतर है। यह थायरॉयड रोग के नियंत्रण में भी सहायक है। भरपूर पोषक तत्वों के कारण यह हड्डियों, हृदय और रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने के लिए सामान्य दूध की तुलना में अधिक फायदेमंद माना जाता है।

यूरिया-डीएपी संकट में गौ-आधारित खेती है एक टिकाऊ एवं स्वदेशी विकल्प



खाद और मिट्टी की उर्वरता: देशी गाय का गोबर जैविक खाद के रूप में मिट्टी की संरचना, जल-धारण क्षमता और उर्वरा शक्ति बढ़ाता है, जिससे फसलों की उपज और गुणवत्ता दोनों बेहतर होती है। इससे रासायनिक खाद की जरूरत कम होकर मिट्टी और भूजल दोनों की रक्षा होती है।

प्राकृतिक कीट व रोग प्रबंधन: देशी गाय का गौमूत्र और गोबर से बनी तैयारियाँ (जैसे बीजामृत, जीवामृत, नीमास्त्र इत्यादि) खेती में जैविक कीटनाशक, कवकरोधी और बीज-संरक्षक का काम करती हैं, जिनसे बीज अंकुरण बेहतर होता है और मिट्टी-जनित रोग घटते हैं।

शून्य लागत और स्वावलंबन: एक देशी गाय से साल भर में काफी मात्रा में गोबर और गौमूत्र मिलता है; कई अभ्यासों में यह दावा किया जाता है कि एक गाय लगभग 3-5 एकड़ तक की खेती के लिए प्राकृतिक उर्वरक-आधार काफी हो सकती है, जिससे किसान खेती की लागत घटाकर शून्य या लगभग-शून्य लागत प्राकृतिक खेती की ओर बढ़ सकता है।

पर्यावरण और जल-संरक्षण: गौ-आधारित प्राकृतिक खेती

में रसायन-मुक्त ढंग से जैविक उर्वरक-कीटनाशक का उपयोग होने से तालाबों, नालों और जल-तालिका पर जहरीला प्रभाव कम होता है और खेत के आस-पास की जैव-विविधता बेहतर रहती है।

ऊर्जा, दूध व अन्य उपयोग: देशी गाय के गोबर से गोबर गैस (बायोगैस) बनाकर परिवार की खाना-पकाने और कभी-कभी सिंचाई की छोटी-मोटी ऊर्जा जरूरतें पूरी की जा सकती हैं, जबकि दूध, दही और घी घरेलू पोषण और अतिरिक्त आय का स्रोत बनते हैं।

वर्तमान आंकड़े: उत्तर प्रदेश में 2.78 करोड़ किसान और 2 करोड़ मवेशी हैं, जबकि बुंदेलखंड में 23,500 हेक्टेयर भूमि पर 22,000 किसान गौ-आधारित खेती अपना चुके हैं। आर्थिक सर्वे 2026 में पशुपालन क्षेत्र की वृद्धि फसलों से अधिक बताई गई, दूध उत्पादन में 4-5% बढ़ोतरी हुई। देश में पशुधन आधारित अर्थव्यवस्था उर्वरक आयात पर विदेशी मुद्रा बचाने में सक्षम है।

लाभ और यूरिया-डीएपी से तुलना

पैरामीटर	यूरिया-डीएपी	गौ-आधारित खेती
पर्यावरण	प्रदूषण बढ़ता है	संतुलित रहता है
मृदा पर प्रभाव	उर्वरता घटती है	उर्वरता बढ़ती है
उत्पादन	रसायन पर निर्भर	3 वर्ष में बेहतर परिणाम
लागत	₹266-1350/बोरी (सब्सिडी)	लगभग शून्य (घरेलू)

भविष्य की संभावनाएं: उत्तर प्रदेश सरकार गौ-आधारित खेती के लिए प्रशिक्षण भी दे रही है जिसको छोटे स्तर से आसानी से शुरू किया जा सकता है, जिसमें गाय पालन और जैविक खाद निर्माण मुख्य हैं। यह रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम करने के साथ-साथ रासायनिक संकट से मुक्ति भी दिला सकती है तथा खाद्य सुरक्षा भी सुनिश्चित कर सकती है।



SWARAJ

Deming Prize 2012



P. N. Gupta



Rishi Gupta
M. 9425736999, 8224004848
7999799399

SHREE PITAMBRA AUTOMOILES

39/1668, Near Volkswagen Showroom, Jhansi Road, Lashkar-Gwalior (M.P.)
Mob.: 94253-35532, 94257-36999,
E-mail : shreepitambraautomobile2015@gmail.com



यथार्थ मिश्रा, पद्मिनी गंगा (शोध छात्र)

आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

पियूषा सिंह सहायक प्राध्यापक आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या

परिचय: मक्का, एक प्रमुख खाद्य फसल है, जो मोटे अनाजों की श्रेणी में आता है। इसे भूट्टे के रूप में भी खाया जाता है। भारत के अधिकांश मैदानी भागों से लेकर 2800 मीटर उंचाई वाले पहाड़ी क्षेत्रों तक मक्का को सफलतापूर्वक उगाया जाता है। मक्का खरीफ ऋतु की फसल है, परन्तु जहाँ सिंचाई के साधन हैं वहाँ रबी और खरीफ की अगेती फसल के रूप में ली जा सकती है। मक्का कार्बोहाइड्रेट का बहुत अच्छा स्रोत है। मक्का दूसरे स्तर की फसल है, जो अनाज और चारा दोनों के लिए प्रयोग की जाती है। मक्का को 'अनाजों की रानी' के नाम से भी जाना जाता है, क्योंकि बाकी फसलों के मुकाबले इसकी पैदावार सब से ज्यादा है। इससे भोजन पदार्थ भी तैयार किए जाते हैं जैसे कि स्टार्च, कॉर्न फ्लैक्स और गुलूकोज आदि। यह पोल्टरी वाले पशुओं की खुराक के तौर पर भी प्रयोग की जाती है। मक्का की फसल हर तरह की मिट्टी में उगाई जा सकती है क्योंकि इसे ज्यादा उपजाऊपन और रसायनों की जरूरत नहीं होती। मक्का की फसल उगाने से किसान अपनी खराब मिट्टी वाली जमीन को भी बचा सकते हैं, क्योंकि यह धान के मुकाबले 90% पानी और 79% उपजाऊ शक्ति को बरकरार रखती है। यह गेहूँ और धान के मुकाबले ज्यादा फायदे वाली फसल है। इस फसल को कच्चे माल के तौर पर उद्योगिक उत्पादों जैसे कि तेल, स्टार्च, शराब आदि में प्रयोग किया जाता है। मक्का की फसल उगाने वाले मुख्य राज्य उत्तर प्रदेश, राजस्थान, मध्य प्रदेश, बिहार, हिमाचल प्रदेश, जम्मू कश्मीर और पंजाब हैं। दक्षिण में आंध्र प्रदेश और कर्नाटक मुख्य मक्का उत्पादक राज्य हैं।

जलवायु एवं भूमि: मक्का उष्ण एवं आर्द्र जलवायु की फसल है। इसके लिए ऐसी भूमि जहाँ पानी का निकास अच्छा हो उपयुक्त होती है। इसे सभी प्रकार की मिट्टियों में उगाया जा सकता है तथा बलुई, दोमट मिट्टी मक्का की खेती के लिये बेहतर समझी जाती है। मक्का की फसल लगाने के लिए उपजाऊ, अच्छे जल निकास वाली, मैरा और लाल मिट्टी जिसमें नाइट्रोजन की उचित मात्रा हो, जरूरी है। मक्का रेतली से लेकर भारी हर तरह की जमीनों में उगाई जा सकती है। समतल जमीनें मक्का के लिए बहुत अनुकूल हैं, पर कई पहाड़ी इलाकों में भी यह फसल उगाई जाती है। अधिक पैदावार लेने के लिए मिट्टी में जैविक तत्वों की अधिक मात्रा पी एच 5.5-7.5 और अधिक पानी रोककर रखने में सक्षम होनी चाहिए।

प्रसिद्ध किस्में और पैदावार:

PMH 1: यह किस्म पंजाब के सिंचित क्षेत्रों में खरीफ, बसंत और गर्मी के मौसम में बोयी जा सकती है। यह लंबे समय वाली फसल है जो 95 दिनों में पकती है। इसका तना मजबूत और जामुनी रंग का होता है। इसकी औसतन पैदावार 21 क्विं. प्रति एकड़ होती है।

प्रभात: यह लंबे समय की किस्म है जो कि पंजाब के सिंचित क्षेत्रों में खरीफ, बसंत और गर्मी के मौसम में बोयी जा सकती है। यह दरमियाने लंबे कद, मोटे तने और कम गिरने वाली किस्म है। यह पकने के लिए 95 दिनों का समय लेती है। इसकी पैदावार 17.5 क्विंटल प्रति एकड़ है।

मक्का की उन्नत खेती: अधिक उत्पादन की वैज्ञानिक तकनीकें

केसरी: यह दरमियाने समय की किस्म है जो कि पकने के लिए 85 दिनों का समय लेती है। इसके दाने केसरी रंग के होते हैं। और इसकी औसतन पैदावार 16 क्विंटल प्रति एकड़ है।

PMH-2: यह कम समय वाली किस्म है और यह पकने हेतु 83 दिनों का समय लेती है। यह सिंचित और कम वर्षा वाले क्षेत्रों में उगाई जा सकती है। यह हाइब्रिड किस्म सूखे को सहनेयोग्य है। इसके बाबू झंडे दरमियाने आकार के और दाने संतरी रंग के होते हैं। इसकी औसतन पैदावार 16.6 क्विं. प्रति एकड़ है।

JH 3459: यह दरमियाने समय की किस्म है जो कि पकने के लिए 84 दिनों का समय लेती है। यह सोके को सहनेयोग्य और कम गिरने वाली किस्म है। इसके दाने संतरी रंग के और औसतन पैदावार 17.5 क्विंटल प्रति एकड़ है।

प्रकाश: यह सूखे को सहनेयोग्य और जल्दी बढ़ने वाली 82 दिन की किस्म है। इसकी औसतन पैदावार 15-17 क्विंटल प्रति एकड़ है।

PEEHM 5: यह ज्यादा तापमान को सहनेयोग्य किस्म है। इसे पंजाब, हरियाणा, दिल्ली और .प्र. में उगाया जा सकता है इसकी औसतन पैदावार 12-14 क्विंटल प्रति एकड़ होती है।

PC 1: यह जल्दी पकने वाली किस्म है। यह बहुत सारे झुलस और धब्बे वाले रोगों की रोधक किस्म है। इसकी औसतन पैदावार 12-14 क्विंटल प्रति एकड़ होती है।

PC 2: यह जल्दी पकने वाली किस्म है। यह बहुत सारे झुलस और धब्बे वाले रोगों की रोधक किस्म है। इसकी औसतन पैदावार 14 क्विंटल प्रति एकड़ होती है।

क्यूपीएम किस्में

ओबाटनपा: घाना में विकसित एक क्यूपीएम किस्म है। जो अपनी उच्च उपज और प्रोटीन सामग्री के लिए जानी जाती है।

स्टाहा: यह किस्म जिम्बाब्वे में विकसित किस्म है। जो अपनी सूखा सहनशीलता और बेहतर प्रोटीन गुणवत्ता के लिए जानी जाती है।

क्यूपीएम: भारत में विकसित एक क्यूपीएम किस्म, जो अपनी उच्च प्रोटीन सामग्री और उपज क्षमता हेतु जानी जाती है।

भारतीय मक्का अनुसंधान संस्थान (IIMR) से विकसित किस्में - भारतीय मक्का अनुसंधान संस्थान (IIMR) ने बेहतर उपज, रोग प्रतिरोधक क्षमता और पोषण गुणवत्ता वाली मक्का की कई किस्में विकसित की हैं।

संकर किस्में

विजय: सिंचित और वर्षा आधारित परिस्थितियों के लिए उपयुक्त उच्च उपज देने वाली, रोग प्रतिरोधक संकर किस्म।

कंचन: बेहतर उपज और डाउनी फफूंद और जंग रोगों के प्रति प्रतिरोधक क्षमता वाली संकर किस्म।

शक्तिमान: बेहतर प्रोटीन सामग्री और स्टेम बोअर के प्रति प्रतिरोधक क्षमता वाली उच्च उपज देने वाली संकर किस्म।

मिश्रित किस्में

श्री शक्ति: बेहतर उपज, रोग प्रतिरोधक क्षमता और सूखा सहनशीलता वाली मिश्रित किस्म।

पूसा कम्पोजिट-1: उच्च उपज, बेहतर प्रोटीन सामग्री और

डाउनी फफूंद के प्रति प्रतिरोधक क्षमता वाली मिश्रित किस्म।

विशेष किस्में

बेबी कॉर्न हाइब्रिड: बेहतर उपज और गुणवत्ता वाली बेबी कॉर्न

उत्पादन के लिए विकसित एक विशेष किस्म।

बायोफोर्टिफाइड किस्में

जिंक-समृद्ध मक्का हाइब्रिड: बेहतर जिंक सामग्री वाली बायोफोर्टिफाइड किस्म, जिसे मनुष्यों में जिंक की कमी को दूर करने के लिए विकसित किया गया है।

प्रोविटामिन ए-समृद्ध मक्का हाइब्रिड: बेहतर प्रोविटामिन ए सामग्री वाली बायोफोर्टिफाइड किस्म, जिसे विटामिन ए की कमी को दूर करने के लिए विकसित किया गया है।

प्राइवेट कंपनियों की किस्में: पाइनीयर 39 वी 92 और 30 आर 77, प्रो एंग्रो 4640, मोनसैंटो हाईए सेल और डबल, श्री राम जैनेटिक कैमीकल लिमिटेड बायो 9690 और राजकुमार, कंचन सीड, पोली, हाइब्रिड कॉर्न और कै एच 121, माहीको एम पी एम 3838, जुआरी सी 1415, गंगा कावेरी जी के 3017, जी के 3057, सिनजैटा इंडिया लिमिटेड एन के 6240।

जमीन की तैयारी: फसल के लिए प्रयोग किया जाने वाला खेत खरपतवारों और पिछली फसल से मुक्त होना चाहिए। मिट्टी को नर्म करने के लिए 6 से 7 बार जोताई करें। खेत की तैयारी के लिए पहला पानी गिरने के बाद जून माह में हेरो करने के बाद पाटा चला देना चाहिए। यदि गोबर के खाद का प्रयोग करना हो तो पूर्ण रूप से सड़ी हुई खाद अन्तिम जुताई के समय जमीन में मिला दें। रबी के मौसम में कल्टीवेटेड से दो बार जुताई करने के उपरांत दो बार हेरो करना चाहिए। खेत में 4-6 टन प्रति एकड़ रूड़ी की खाद और 10 पैकेट एजोसपीरीलम के डालें। खेत में 45-50 सें.मी. के फासले पर खाल और मेंड बनाएं।

बुवाई समय खेत की तैयारी: भूमि का चयन एवं भूमि की तैयारी - बलुई दुमट मिट्टी जिसमें उतम जल निकासी वाली भूमि मक्का उत्पादन के लिए उपयुक्त है।

उपयोग किए जाने वाले कृषि यंत्र: हल, पाटा, रोटावेटर, मक्का बुवाई एवं कटाई यंत्र। खरीफ की ऋतु में यह फसल मई के आखिर से जून में मानसून आने पर बोयी जाती है। बसंत ऋतु की फसल अंत फरवरी से अंत मार्च तक बोयी जाती है। बेबी कॉर्न दिसंबर-जनवरी को छोड़कर बाकी सारा साल बोयी जा सकती है। रबी और खरीफ की ऋतु स्वीट कॉर्न के लिए सब से अच्छी होती है।

अंतरण: अधिक पैदावार लेने के लिए स्त्रोतों का सही प्रयोग और पौधों में सही फासला होना जरूरी है।

शीघ्र पकने वाली: कतार से कतार-60 से.मी. पौधे से पौधे-20 से.मी.

मध्यम/देरी से पकने वाली: कतार से कतार-75 से.मी. पौधे से पौधे-25 से.मी.

हरे चारे के लिए: कतार से कतार-40 से.मी. पौधे से पौधे-25 से.मी.

1. **खरीफ की मक्का के लिए:** 62×20 सें.मी.

2. **स्वीट कॉर्न:** 60×20 सें.मी.

3. **बेबी कॉर्न:** 60×20 सें.मी. या 60×15 सें.मी.

4. **पाप कॉर्न:** 50×15 सें.मी.

5. **चारा:** 30×10 सें.मी.



विकास प्रताप सिंह वैज्ञानिक एवं नवोन्मेपी
अनुसंधान अकादमी (AcSIR) गाजियाबाद, 201002 (उ.प्र.)

पलाश राय वनस्पति विज्ञान विभाग विश्व भारती
विश्वविद्यालय, शांतिनिकेतन, पश्चिम बंगाल, 731235

राकेश चंद्र नैनवाल, देवेन्द्र सिंह सीएसआईआर-
राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान, राणा प्रताप मार्ग, लखनऊ,

हल्दी (Curcuma longa) एक बहुप्राचीन औषधीय एवं मसाला फसल है, जिसका प्रमुख उपयोग इसके भूमिगत तने (राइजोम) के लिए किया जाता है। इस राइजोम में करक्यूमिनॉइड्स, वाष्पशील तेल, कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, विटामिन एवं खनिज जैसे अनेक जैव-सक्रिय घटक पाए जाते हैं। विशेष रूप से करक्यूमिन (Curcumin) हल्दी का प्रमुख सक्रिय यौगिक है, जो इसके औषधीय गुणों-जैसे सूजन-रोधी, एंटीऑक्सीडेंट, कैंसर-रोधी, एंटीमाइक्रोबियल एवं हृदय-रक्षक प्रभाव-के लिए उत्तरदायी है। (Bharat B. Aggarwal et al., 2007) आधुनिक वैज्ञानिक अनुसंधानों ने हल्दी के राइजोम के औषधीय उपयोगों को प्रमाणित किया है और इसे फार्मास्यूटिकल, न्यूट्रस्यूटिकल एवं कॉस्मेटिक उद्योग में एक महत्वपूर्ण घटक के रूप में स्थापित किया है। इस लेख में हल्दी राइजोम के जैव-रासायनिक संघटन एवं इसके औषधीय महत्व का विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

कुंजी शब्द: हल्दी, करक्यूमिन, राइजोम, जैव-रासायनिक संघटन, औषधीय गुण

1. **परिचय-** हल्दी (Curcuma longa) भारत की एक महत्वपूर्ण मसाला एवं औषधीय फसल है, जो अदरक कुल (Zingiberaceae) से संबंधित है। इसका उपयोग हजारों वर्षों से आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति में किया जाता रहा है। हल्दी का प्रमुख उपयोग इसके भूमिगत तने, जिसे राइजोम कहा जाता है, के रूप में किया जाता है। यह राइजोम न केवल भोजन में रंग एवं स्वाद प्रदान करता है, बल्कि अनेक औषधीय गुणों से भी युक्त होता है। और इसे "गोल्डन स्पाइस" भी कहा जाता है (Prasad S. et al., 2014)

भारत विश्व में हल्दी का सबसे बड़ा उत्पादक एवं निर्यातक देश है। यहाँ इसकी खेती उष्णकटिबंधीय एवं उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में व्यापक रूप से की जाती है। हल्दी के राइजोम में उपस्थित जैव-सक्रिय यौगिक इसे एक बहुउद्देशीय औषधीय पौधा बनाते हैं।

2. **हल्दी राइजोम का जैव-रासायनिक संघटन-** हल्दी के राइजोम में कई प्रकार के रासायनिक यौगिक पाए जाते हैं, जो इसके औषधीय गुणों के लिए जिम्मेदार हैं।

2.1 **करक्यूमिनॉइड्स (Curcuminoids)**-करक्यूमिनॉइड्स हल्दी के सबसे महत्वपूर्ण यौगिक हैं, जिनमें मुख्य रूप से-

- * Curcumin
- * Demethoxycurcumin
- * Bisdemethoxycurcumin

पाए जाते हैं। इनकी मात्रा सामान्यतः 2-5% होती है। करक्यूमिन हल्दी को उसका विशिष्ट पीला रंग प्रदान करता है और इसके अधिकांश औषधीय गुणों का स्रोत है। (Gupta S.C. et al., 2013)

2.2 **वाष्पशील तेल (Essential Oils)**

हल्दी के राइजोम में 3-7% तक वाष्पशील तेल पाए जाते हैं, जिनमें प्रमुख हैं- * Turmerone * Atlantone * Zingiberene

Curcuma longa के राइजोम का जैव-रासायनिक विश्लेषण एवं औषधीय महत्व

ये यौगिक एंटी-इंफ्लेमेटरी और एंटीमाइक्रोबियल गुणों के लिए जाने जाते हैं। (Ammon H.P.T. & Wahl M.A., 1991)

2.3 **कार्बोहाइड्रेट-** हल्दी के राइजोम में लगभग 60-70% कार्बोहाइड्रेट (मुख्यतः स्टार्च) पाया जाता है, जो ऊर्जा का मुख्य स्रोत है।

2.4 **प्रोटीन एवं अमीनो अम्ल-** हल्दी में लगभग 6-8% प्रोटीन पाया जाता है, जो पोषण की दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

2.5 **खनिज एवं विटामिन**

खनिज: आयरन, कैल्शियम, पोटैशियम, फॉस्फोरस
विटामिन: विटामिन C, E एवं B-कॉम्प्लेक्स

3. **औषधीय महत्व (Medicinal Importance)**

3.1 **सूजन-रोधी गुण (Anti-inflammatory)**

करक्यूमिन सूजन उत्पन्न करने वाले एंजाइमों एवं साइटोकाइन्स को नियंत्रित करता है। यह NF-B जैसे सिग्नलिंग मार्गों को अवरुद्ध करके सूजन को कम करता है। (Bharat B. Aggarwal et al., 2007)

3.2 **एंटीऑक्सीडेंट गुण (Antioxidant)-** हल्दी में उपस्थित करक्यूमिन प्री-रेडिक्लस को निष्क्रिय करता है, जिससे कोशिकाओं को ऑक्सीडेटिव क्षति से बचाया जा सकता है। (Hewlings S.J. & Kalman D.S., 2017)

3.3 **कैंसर-रोधी गुण (Anti-cancer)-** कई शोधों में पाया गया है कि करक्यूमिन कैंसर कोशिकाओं की वृद्धि को रोकता है तथा अपोप्टोसिस (Apoptosis) को बढ़ावा देता है। यह ट्यूमर के विकास को धीमा करता है। (Gupta S.C. et al., 2013)

3.4 **एंटीमाइक्रोबियल गुण (Antimicrobial)-** हल्दी बैक्टीरिया, फंगस एवं वायरस के विरुद्ध प्रभावी होती है। यह खाद्य संरक्षण एवं औषधीय उपयोगों में सहायक है। (Ammon H.P.T. & Wahl M.A., 1991)



3.5 **हृदय-रक्षक प्रभाव (Cardioprotective)-** करक्यूमिन रक्त में कोलेस्ट्रॉल के स्तर को नियंत्रित करता है तथा रक्त वाहिकाओं के स्वास्थ्य में सुधार करता है। (Prasad S. et al., 2014)

3.6 **मधुमेह नियंत्रण (Anti-diabetic)-** हल्दी रक्त शर्करा के स्तर को नियंत्रित करने में सहायक होती है और इंसुलिन संवेदनशीलता को बढ़ाती है।

3.7 **पाचन तंत्र में लाभ-** हल्दी पाचन एंजाइमों को सक्रिय करती है, जिससे अपच, गैस एवं अल्सर जैसी समस्याओं में राहत मिलती है।

3.8 **त्वचा एवं घाव भरने में उपयोग-** हल्दी में एंटीसेप्टिक एवं घाव भरने के गुण होते हैं, जिससे यह त्वचा रोगों एवं घावों के उपचार में उपयोगी होती है।

4. **आधुनिक अनुसंधान एवं अनुप्रयोग-** आधुनिक विज्ञान ने हल्दी के औषधीय गुणों को प्रमाणित किया है। **वर्तमान में निम्न क्षेत्रों में इसका उपयोग बढ़ रहा है-**

- * **नैनो-करक्यूमिन (Nano-curcumin):** इसकी जैव-उपलब्धता बढ़ाने के लिए विकसित किया गया है।
- * **फार्मास्यूटिकल उद्योग:** विभिन्न दवाओं में सक्रिय घटक के रूप में
- * **कॉस्मेटिक उद्योग:** त्वचा की देखभाल उत्पादों में
- * **फूड इंडस्ट्री:** प्राकृतिक रंग एवं प्रिजर्वेटिव के रूप में (Hewlings S.J. & Kalman D.S., 2017)

5. **निष्कर्ष-** हल्दी (Curcuma longa) का राइजोम जैव-सक्रिय यौगिकों का एक समृद्ध स्रोत है, जो इसे एक महत्वपूर्ण औषधीय पौधा बनाता है। करक्यूमिन जैसे यौगिक इसके प्रमुख औषधीय गुणों के लिए जिम्मेदार हैं। आधुनिक अनुसंधानों ने इसके उपयोग को वैज्ञानिक आधार प्रदान किया है, जिससे भविष्य में नई औषधियों के विकास की अपार संभावनाएँ हैं।

॥ श्री गणेशाय नमः ॥



आँल इण्डिया राईट

फक्कड़ बाबा
खाद बीज भण्डार

खाद बीज एवं कृषि
कीटनाशक दवाईयों
के विक्रेता



सदर बाजार गंज मुरार, ग्वालियर, मोबा. 9926988124, 9340964335



नितिमा सिंह, महेन्द्र सिंह, विशाल सिंह
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी
विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

परिचय: यूरिया उर्वरक की दीर्घकालिक व्यवहारिता, नकारात्मक प्रभावों एवं बढ़ती लागत के कारण आज नए समाधानों की आवश्यकता महसूस होने लगी है। अजोला जलीय शैवाल की एक जीनस है, जिसे अक्सर सिंथेटिक यूरिया के बजाय खेतों में जैव उर्वरक के रूप में उपयोग किया जाता है। यह बहुत तेजी से विकसित होता है और 10 से 15 दिन के अंदर पूरे गड्डे में फैल जाता है, इसके बाद 400 से 600 ग्राम अजोला प्रतिदिन बाहर निकाला जा सकता है। अजोला धान के खेतों का उत्पादन बढ़ाने का एक किफायती और पर्यावरण अनुकूल तरीका है। यह न सिर्फ नाइट्रोजन स्थिरीकरण में अपना योगदान देता है बल्कि मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ, कुल नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटेशियम की मात्रा बढ़ाकर, मिट्टी की उर्वरता को भी बढ़ाता है। अजोला अपने अपघटन के माध्यम से पोषक तत्वों से भरपूर ह्यूमस प्रदान करके और भौतिक-रासायनिक स्थितियों के साथ-साथ मिट्टी की संरचना में सुधार करके मिट्टी के स्वास्थ्य को बनाए रखने में योगदान देता है। जैसा कि देखा गया है, हरित क्रांति के बाद खेतों में रासायनिक उर्वरकों का बहुतायत में प्रयोग होने लगा। लगभग 60 वर्ष बीत चुके हैं पहले किसी भी फसल को उगाने के लिए जितनी मात्रा में उर्वरक की आवश्यकता होती थी, उतनी मात्रा आज उसी फसल को उगाने के लिए नहीं लगती। इसके अलावा रासायनिक उर्वरकों के लगातार प्रयोग से मिट्टी की उर्वरता भी दिन-ब-दिन कम होती जा रही है। हालात ऐसे हो गए हैं कि लोग अब इसका विकल्प तलाशने लगे हैं। सभी उर्वरकों में से, यूरिया एक नाइट्रोजनयुक्त उर्वरक के रूप में खेत में बड़े पैमाने पर उपयोग किया जाता है।

यूरिया उर्वरक की दीर्घकालिक व्यवहारिता को लेकर चिंताएँ हैं। 1970 के दशक के बाद से, तेल की बढ़ती लागत के कारण उर्वरक की कीमतें बढ़ गई हैं जिससे वैश्विक रासायनिक उर्वरक की कीमतों की स्थिरता के बारे में कई सवाल खड़े हो गए हैं। इसके अलावा जलवायु परिवर्तन और मिट्टी की संरचना, कृषि उत्पादन और खेत से बाहर प्रदूषण पर भारी रासायनिक उर्वरक के उपयोग के दीर्घकालिक नकारात्मक प्रभावों के मद्देनजर नए समाधानों की आवश्यकता महसूस होने लगी है। अजोला जो खेत में उगाया जाता है और शुष्क भूमि वाली फसलों में मिट्टी संशोधन के रूप में उपयोग किया जाता है। जैविक उर्वरकों और हरी खाद के कई कृषि संबंधी और पर्यावरणीय लाभों को साझा करता है। हालाँकि अजोला जैसे ऑन-फार्म जैविक उर्वरकों की आर्थिक व्यवहारिता श्रम, व्यय और भूमि उपयोग की उच्च अवसर लागत से काफी बाधित हो सकती है। अजोला की खेती के लिए पूंजी की आवश्यकताएँ काफी कम होती हैं, क्योंकि अजोला को छोटे जलग्रहण क्षेत्रों, टैंकों या सिंचाई प्रणालियों की नहरों में उगाया जा सकता है और इसे खेतों में डालकर मिट्टी में मिलाया जा सकता है। अजोला उगाने की ये विधियाँ भूमि और श्रम लागत में पर्याप्त बचत प्रदान कर सकती हैं। अजोला उत्पादन को अनुकूलित करने के लिए अतिरिक्त खर्चों में, अजोला को घोंघे और मंडक जैसे कीटों से बचाने के लिए कीटनाशक, राख और फॉस्फेट उर्वरक को शामिल कर सकते हैं।

हम अजोला को खेत में हरी खाद के रूप में कैसे उपयोग कर सकते हैं-अजोला का उपयोग जलमग्न धान के खेतों में हरी खाद के रूप में सबसे अधिक किया जाता है। इसे एक अकेली फसल के रूप में उगाया जा सकता है और फिर धान की रोपाई से पहले शुरुआती खाद के रूप में मिलाया जा सकता है या इसे किसी अन्य स्थान पर ले जाया जा सकता है और फसलों के ऊपर उपयोग किया जा सकता है। इसे दो फसलों के बीच में भी उगाया जा सकता है और चावल की रोपाई के बाद खाद के रूप में मिलाया जा सकता है।

अजोला: यूरिया के प्रतिस्थापन के लिए एक प्रभावी जैव उर्वरक

ध्यान रखने योग्य बातें * अजोला को खेत में लगाते समय पानी की गहराई 8 से 10 सेंटीमीटर के बीच में रखें। * अच्छी उपज के लिए तापमान 20 से 28 डिग्री सेल्सियस तथा मुदा पीएच 6 से 8 के बिच में रखें। * हमेशा खेत में पानी बनाए रखें तथा जल्दी वृद्धि के लिए 25 से 50 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर प्रति सप्ताह सुपरफॉस्फेट का छिड़काव करें। * पत्ती खानेवाले कीड़े तथा घोघा से बचने के लिए यूआर्डिन-3जी, 2 से 3 किलोग्राम प्रति हे. प्रति सप्ताह का छिड़काव करें। जब तापमान अनुकूल हो, पानी की गहराई पर्याप्त हो तथा फॉस्फोरस उर्वरक का सही इस्तेमाल किया गया हो तब अजोला 3 से 4 दिन में अपने वजन का दुगुना हो जाता है। इसकी उपज लगभग 10 टन प्रति हेक्टेयर होती है जोकि सूखने पे 1 टन प्रति हेक्टेयर अजोला प्राप्त होता है। यह लगभग 40 किलोग्राम नाइट्रोजन, 5 से 9 किलोग्राम फॉस्फोरस तथा 20 से 60 किलोग्राम पोटेशियम देता है।

अजोला जैव उर्वरक के उपयोग

नाइट्रोजन स्थिरीकरण क्षमता: यह देखा गया है कि एजोला की एक फसल लगभग 20 से 25 दिनों में चावल की फसल को 20 से 40 किलोग्राम प्रति हे. नाइट्रोजन की आपूर्ति करती है और एजोला-अनाबेना प्रणाली की अनुमानित नाइट्रोजन स्थिरीकरण क्षमता 1-1 किलोग्राम प्रति हे. प्रति दिन है। यह भी पाया गया कि एजोला में आमतौर पर कम कार्बन नाइट्रोजन अनुपात होता है जो इसे अन्य जैविक उर्वरकों की तुलना में तेजी से खनिज बनाने की अनुमति देता है। जब एजोला को जल-जमाव वाली मिट्टी में उपयोग किया जाता है तो अजोला में लगभग 60 से 80% नाइट्रोजन दो सप्ताह के भीतर खनिज में बदल जाता है। कार्बनिक नाइट्रोजन को अकार्बनिक रूप में खनिजीकृत करने के लिए अजोला को उष्णकटिबंधीय जलवायु में 30 से 60 दिन या समशीतोष्ण जलवायु में 60 या उससे अधिक दिन की आवश्यकता हो सकती है।

समस्याग्रस्त मिट्टी का प्रबंधन: अजोला उन मिट्टी को बहाल करने में मदद कर सकता है जो नमक से प्रभावित हुई हैं। अजोला के सावधानीपूर्वक उपयोग से कम कार्बनिक पदार्थ वाली अर्धशुष्क मिट्टी के सुधार में काफी मदद मिल सकती है।

कार्बन पृथक्करण में भूमिका: यह स्वाभाविक रूप से एंथ्रोपोजेनिक गतिविधियों और कार्बन के भंडारण को संदर्भित करता है। अपनी प्रकाश संश्लेषक प्रकृति के कारण, एजोला सौर ऊर्जा के समग्र प्रकाश संश्लेषक रूपांतरण और कार्बन पृथक्करण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अजोला कार्बन डाइऑक्साइड को स्थलीय पौधों की तुलना में लगभग 10 से 50 गुना तेज गति से स्थिर करता है।

जल प्रबंधन: धान के खेतों और जल निकायों की सतह पर बनी एजोला की मोटी परत के कारण कम वाष्पीकरण होता है।

खरपतवार प्रबंधन: एजोला घने, लगभग प्रकाश-रोधी सतह बनाकर कुछ जलीय खरपतवारों के विकास को रोकता है जो सूर्य के प्रकाश को अवरोध करता है तथा मिट्टी में उपस्थित खनिज का उपयोग कर मुख्य फसल के पैदावार को कम करता है।

पशुओं के लिए चारा: पूरी तरह से परिपक्व एजोला में लगभग 26% कच्चा प्रोटीन और 16% कच्चा रेशा शामिल होता है। आसानी से पचने योग्य उच्च प्रोटीन सामग्री, विटामिन और खनिज, साथ ही कम वसा और कार्बोहाइड्रेट सामग्री के कारण, यह मछली, मुर्गा और मवेशियों के लिए एक उत्कृष्ट चारा है।

मिट्टी की स्थिरता और उर्वरता में समग्र भूमिका: मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ, कुल नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटेशियम की मात्रा बढ़ाकर, अजोला मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाता है। एजोला अपने अपघटन के माध्यम से पोषक तत्वों से भरपूर ह्यूमस प्रदान करके और भौतिक-रासायनिक स्थितियों के साथ-साथ मिट्टी की संरचना में सुधार करके मिट्टी के स्वास्थ्य को बनाए रखने में योगदान देता है।

निष्कर्ष: सिंथेटिक यूरिया उर्वरक की दीर्घकालिक व्यवहारिता, नकारात्मक प्रभावों एवं बढ़ती लागत के कारण नए विकल्प के तौर पे अजोला धान के खेतों का उत्पादन बढ़ाने का एक किफायती और पर्यावरण अनुकूल तरीका है जिसे यूरिया जैसे नाइट्रोजनयुक्त उर्वरक के प्रतिस्थापन के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। किसान मिट्टी की उर्वरता में सुधार कर सकते हैं। टिकाऊ कृषि पद्धतियों को प्रोत्साहित कर सकते हैं और इसके नाइट्रोजन स्थिरीकरण क्षमता का उपयोग करके रासायनिक उर्वरकों पर अपनी निर्भरता को कम कर सकते हैं।

॥ जय श्री कामतानाथ जी ॥

9826521828
7000086811

मै. शीतला खाद बीज भण्डार

हमारे यहाँ खाद, बीज एवं सब्जी के बीज, कीटनाशक दवाईयाँ उचित रेट पर मिलती है।

सुशील पचौरी
(शुक्लहारी वाले)

पता— पिछोर तिराहा, ग्वालियर—झांसी रोड, डबरा जिला—ग्वालियर (म.प्र.)
Email: susheelpachoori815@gmail.com



आशीष रजक, डॉ. रवि प्रकाश गुप्ता

सस्य विज्ञान विभाग, कृषि संकाय

डॉ. अवनीश कुमार यादव

प्रो. राजेंद्र सिंह (रज्जू भैया) विश्वविद्यालय, प्रयागराज

सहायक प्रोफेसर, कृषि संकाय,

डॉ. ललित कुमार सनोदिया

प्रो. राजेंद्र सिंह (रज्जू भैया) विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रयोगशाला और फील्ड में सीखने की लालसा



और पर्यावरण से जुड़े विद्यार्थियों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। फील्ड में जाकर किसान की वास्तविक समस्याओं को समझना, मिट्टी, फसल, जलवायु आदि का अध्ययन करना, विद्यार्थियों को व्यावहारिक ज्ञान देता है। इससे वे केवल सैद्धांतिक जानकारी तक सीमित नहीं रहते, बल्कि वास्तविक जीवन की चुनौतियों का सामना करना भी सीखते हैं। प्रयोगशाला और फील्ड दोनों में सीखने की लालसा व्यक्ति को सक्रिय और जिज्ञासु बनाती है। यह उसे नई चीजें सीखने, प्रश्न पूछने और समाधान खोजने के लिए प्रेरित करती है। ऐसे विद्यार्थी भविष्य में सफल वैज्ञानिक, शोधकर्ता या किसान बन सकते हैं।



आज के वैज्ञानिक और कृषि युग में केवल किताबों से ज्ञान प्राप्त करना पर्याप्त नहीं है। वास्तविक समझ तब विकसित होती है जब हम उसे प्रयोगशाला (Laboratory) और फील्ड (Field) में व्यवहारिक रूप से सीखते हैं। सीखने की लालसा ही व्यक्ति को आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करती है, और यही लालसा उसे नई खोजों और अनुभवों की ओर ले जाती है।

प्रयोगशाला का महत्व

प्रयोगशाला में सीखना केवल किताबों तक सीमित नहीं रहता, बल्कि छात्र स्वयं प्रयोग करके विषय को गहराई से समझते हैं। इससे उनकी सोचने की क्षमता, समस्या-समाधान कौशल और रचनात्मकता का विकास होता है। विज्ञान, चिकित्सा, कृषि और तकनीकी क्षेत्रों में प्रयोगशाला का बहुत बड़ा योगदान है।

प्रयोगशाला के प्रकार-

प्रयोगशालाएँ कई प्रकार की होती हैं, जैसे—
 विज्ञान प्रयोगशाला : जहाँ रसायन, भौतिकी और

जीव विज्ञान के प्रयोग होते हैं।

कंप्यूटर प्रयोगशाला : जहाँ कंप्यूटर से संबंधित कार्य और प्रशिक्षण दिया जाता है।

चिकित्सा प्रयोगशाला : जहाँ रोगों की जांच और परीक्षण किए जाते हैं।

कृषि प्रयोगशाला : जहाँ फसलों और मिट्टी का परीक्षण होता है।

प्रयोगशाला में सीखने से विद्यार्थियों को सिद्धांतों को व्यवहार में समझने का अवसर मिलता है। यहाँ वे विभिन्न उपकरणों और तकनीकों का उपयोग करके प्रयोग करते हैं, जिससे उनकी सोचने और समस्या हल करने की क्षमता विकसित होती है। उदाहरण के लिए, रसायन विज्ञान या जीव विज्ञान के प्रयोगों में विद्यार्थी स्वयं देखकर और करके सीखते हैं, जिससे उनका आत्मविश्वास बढ़ता है।

दूसरी ओर, फील्ड में सीखना विशेष रूप से कृषि

प्रयोगशाला में सुरक्षा

प्रयोगशाला में काम करते समय सावधानी बहुत आवश्यक होती है। रसायनों का सही उपयोग, सुरक्षा उपकरण पहनना और नियमों का पालन करना जरूरी है, ताकि किसी भी प्रकार की दुर्घटना से बचा जा सके।

निष्कर्ष

अंत में, प्रयोगशाला शिक्षा का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। यह हमें केवल सैद्धांतिक ज्ञान ही नहीं, बल्कि व्यावहारिक अनुभव भी प्रदान करती है, जिससे हमारा ज्ञान और अधिक मजबूत होता है। इसलिए विद्यार्थियों को प्रयोगशाला में सीखने के अवसर का पूरा लाभ उठाना चाहिए।

विवेक राजौरिया !! श्री !!
 (सातवई वाले)

Mob.: 9827254232
 8109320262
 9926297033

श्री सिद्धगुरु खाद बीज भण्डार

खाद, बीज एवं कीटनाशक दवाओं के थोक व खेरीज विक्रेता

हमारे यहाँ धान, गेहूँ, सोयाबीन, सरसों, तिली एवं सब्जियों के बीज, खाद एवं उच्चकोटि की कीटनाशक दवाईयाँ उचित मूल्य पर मिलती हैं।

गौतम पेट्रोल पम्प के सामने, भितरवार रोड, डबरा



✍ **मिस्बाह फिरदौस** शोध छात्र, सब्जी विज्ञान विभाग

✍ **वारिस अली** प्रसार शिक्षा विभाग, कृषि विज्ञान संस्थान, काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी (उ.प्र.)

✍ **प्रमोद तिवारी** प्रखंड कृषि पदाधिकारी, सिवान, (बिहार)

परिचय: मोरिंगा, जिसे भारत में सहजन या ड्रमस्टिक के नाम से जाना जाता है, एक बहुउपयोगी और अत्यंत पौष्टिक फसल है। इसका वैज्ञानिक नाम *Moringa oleifera* है। यह पेड़ अपनी तेज वृद्धि, कम लागत और उच्च पोषण मूल्य के कारण किसानों के बीच तेजी से लोकप्रिय हो रहा है। भारत दुनिया में मोरिंगा का सबसे बड़ा उत्पादक देश है और इसकी खेती लगभग सभी राज्यों में की जाती है। मोरिंगा की पत्तियाँ, फलियाँ (ड्रमस्टिक), फूल और बीज सभी उपयोगी होते हैं। इसकी मांग घरेलू बाजार के साथ-साथ अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी बढ़ रही है।

मोरिंगा का महत्व

मोरिंगा को "चमत्कारी पेड़" भी कहा जाता है क्योंकि इसमें कई प्रकार के पोषक तत्व पाए जाते हैं- * विटामिन A, C, कैल्शियम, आयरन से भरपूर * औषधीय गुणों से युक्त * खाद्य, औषधि और कॉस्मेटिक उद्योग में उपयोग * सूखा-रोधी फसल (कम पानी में भी उगती है)

इसकी पत्तियाँ पाउडर के रूप में, फलियाँ सब्जी के रूप में और बीज तेल निकालने के लिए उपयोग किए जाते हैं।

जलवायु और मिट्टी

जलवायु-मोरिंगा उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में अच्छी तरह उगता है।

* तापमान: 25-35°C उपयुक्त

* वर्षा: 250-3000 मिमी

* ठंड और पाला सहन नहीं कर पाता

मिट्टी

* रेतीली या दोमट मिट्टी सबसे उपयुक्त

* pH मान: 6.0-7.5

* जल निकास अच्छा होना चाहिए (पानी जमा न हो)

जलभराव होने पर जड़ों में सड़न हो सकती है।

भूमि की तैयारी

* खेत की 2-3 बार जुताई करें * मिट्टी को भुर-भुरी बनाएं * 30-50 सेमी गहरे गड्ढे तैयार करें * गड्ढों में गोबर की खाद मिलाएं। इससे पौधों की जड़ें अच्छी तरह विकसित होती हैं और उत्पादन बढ़ता है।

उन्नत किस्में भारत में मोरिंगा की कई उन्नत किस्में पाई जाती हैं- * PKM-1 * PKM-2 * ODC-3 * KDM-1 ये किस्में अधिक उत्पादन और बेहतर गुणवत्ता देती हैं।

बुवाई का समय और विधि

बुवाई का समय * जून-जुलाई (मानसून) * फरवरी-

मोरिंगा (सहजन) की खेती



मार्च (सिंचाई उपलब्ध होने पर)

बुवाई की विधि

1.बीज द्वारा - * सीधे खेत में बीज बोएं * 5-12 दिनों में अंकुरण होता है

2.कटिंग द्वारा * 1-1.5 मीटर लंबी शाखा लगाई जाती है * जल्दी उत्पादन मिलता है

दूरी- * पौधे से पौधे की दूरी- 2.5-3 मीटर, * एक एकड़ में लगभग 400-600 पौधे लगाए जा सकते हैं

सिंचाई प्रबंधन-मोरिंगा सूखा सहन कर सकता है, लेकिन अच्छी उपज के लिए सिंचाई आवश्यक है।

* शुरुआती अवस्था में नियमित पानी * बाद में 10-15 दिन के अंतराल पर सिंचाई * ड्रिप सिंचाई सबसे उपयुक्त

कम पानी में भी यह फसल अच्छी उपज दे सकती है। खाद एवं उर्वरक

जैविक खाद- * गोबर की खाद * वर्मी कम्पोस्ट

रासायनिक खाद- * नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटैश संतुलित मात्रा में। प्रत्येक पौधे को समय-समय पर खाद देने से उत्पादन बढ़ता है

खरपतवार नियंत्रण * नियमित निराई-गुड़ाई करें * मल्लिचंगा का उपयोग करें * शुरुआती 2-3 माह विशेष ध्यान दें

छंटाई (Pruning)

छंटाई से पौधा झाड़ीदार बनता है और उत्पादन बढ़ता है।

* 1-1.5 मीटर ऊँचाई पर शीर्ष काटें

* नई शाखाओं का विकास होता है

कीट एवं रोग प्रबंधन

प्रमुख कीट- * इल्ली * फल मक्खी * दीमक

रोग- * पत्ती धब्बा * जड़ सड़न

नियंत्रण उपाय * नीम का तेल छिड़काव * जैविक कीटनाशक * खेत की स्वच्छता बनाए रखें

मोरिंगा सामान्यतः कीटों के प्रति काफी प्रतिरोधी होता है।

फसल की कटाई * पत्तियाँ: 6-8 महीने में * फलियाँ: 8-12 महीने में। कटाई बाद नियमित अंतराल पर उत्पादन मिलता रहता है।

उत्पादन और लाभ * प्रति एकड़ 100-150 क्विंटल



फलियाँ (अनुमानित) * पत्तियों से पाउडर बनाकर अतिरिक्त आय * बीज से तेल उत्पादन

लाभ के कारण * कम लागत * कम पानी की आवश्यकता * बहुउपयोगी फसल * निर्यात की संभावना मोरिंगा की खेती किसानों के लिए एक लाभदायक व्यवसाय बन सकती है।

मूल्य संवर्धन (Value Addition)

मोरिंगा से कई उत्पाद बनाए जा सकते हैं:

* मोरिंगा पाउडर * हर्बल चाय * कैप्सूल * तेल इससे किसान अपनी आय को कई गुना बढ़ा सकते हैं। इंटरक्रॉपिंग (मिश्रित खेती)

मोरिंगा के साथ निम्न फसलें उगाई जा सकती हैं-

* दालें * सब्जियाँ * औषधीय पौधे

इससे भूमि का बेहतर उपयोग होता है।

सरकारी सहायता और योजनाएं

भारत सरकार और राज्य सरकारें मोरिंगा खेती को बढ़ावा दे रही हैं- * बागवानी मिशन (MIDH) * सब्सिडी और प्रशिक्षण * ड्रिप सिंचाई पर सहायता यह खेती को और अधिक लाभदायक बनाता है।

मोरिंगा खेती के लाभ

* कम पानी में उत्पादन * तेजी से बढ़ने वाली फसल * सालभर आय का स्रोत * पोषण और औषधीय महत्व * निर्यात की उच्च संभावना

निष्कर्ष

मोरिंगा की खेती आज के समय में किसानों के लिए एक उत्कृष्ट विकल्प बनकर उभर रही है। यह फसल कम लागत, कम पानी और कम देखभाल में अच्छी उपज देती है। साथ ही, इसके उत्पादों की बाजार में लगातार बढ़ती मांग इसे एक लाभदायक कृषि व्यवसाय बनाती है। यदि किसान वैज्ञानिक तरीके से इसकी खेती करें, तो वे न केवल अपनी आय बढ़ा सकते हैं बल्कि पोषण और स्वास्थ्य के क्षेत्र में भी योगदान दे सकते हैं।



डॉ. तेजराज सिंह हाडा सहायक आचार्य (उद्यान विज्ञान),
बलवंत विद्यापीठ रूरल इंस्टीट्यूट, बिचपुरी, आगरा (उ.प्र.)

फालसा की खेती



फालसा एक सबट्रॉपिकल फल है, जो भारत का मूल निवासी है। इसे पंजाब, हरियाणा, गुजरात, महाराष्ट्र और बिहार में कमर्शियली उगाया जाता है। इसकी खेती बड़े शहरों के आसपास पसंद की जाती है जहाँ फल आसानी से और जल्दी बिक जाते हैं। इसकी रखने की क्वालिटी खराब होती है। इसे आम, आंवला, बेल और बेर के साथ इंटरक्रॉप के तौर पर भी उगाया जाता है। फालसा एक झाड़ीदार पौधा है जो बिना काटे पेड़ बन सकता है। यह बहुत मजबूत होता है, और सूखा झेल सकता है। इसमें गहरे लाल-भूरे रंग के कई छोटे बेरी जैसे फल लगते हैं। पके फल स्वाद में सब-एसिडिक होते हैं और विटामिन (A और C) और मिनरल (फॉस्फोरस और आयरन) का भरपूर स्रोत होते हैं। इसके औषधीय गुण वैदिक काल से ही जाने जाते हैं। फल थोड़े कसैले होते हैं और इनका असर ठंडा होता है। ये सूजन, दिल और खून की बीमारियों, बुखार और कब्ज को ठीक करने में मदद करते हैं।

मिट्टी और जलवायु: फालसा एक मजबूत पौधा है, जो सूखा झेल सकता है और खराब क्लाइमेट में भी उगाया जा सकता है। बेहतर पैदावार और फलों की क्वालिटी के लिए इसे अलग-अलग सर्दी और गर्मी की ज़रूरत होती है। पौधे 45°C का तापमान और कुछ दिनों तक जमा देने वाला तापमान भी झेल सकते हैं। ज्यादा तापमान फलों को पकने में मदद करता है। फूल आने के समय बारिश होने से फल लगने और फसल की पैदावार पर असर पड़ता है। फालसा कई तरह की मिट्टी में उगाया जा सकता है, यहाँ तक कि हल्की सोडियम वाली मिट्टी में भी। यह अच्छी पानी निकलने वाली, दोमट मिट्टी में अच्छी तरह उगता है। यह पौधा पानी जमा होने के प्रति सेंसिटिव होता है जिससे यह क्लोरोटिक हो जाता है। कैल्शियम वाली मिट्टी में आयरन क्लोरोसिस एक आम समस्या है।

किस्में: फालसा की कोई बेहतर किस्म नहीं है। कुछ लोकल किस्में-लोकल और शरबती-पांपुलर हैं। दो अलग-अलग तरह की किस्में पहचानी गई हैं- लंबा और बौना। बौना टाइप आमतौर पर उगाया जाता है। यह काफी प्रोडक्टिव होता है।

प्रोपेगेशन: फालसा को व्यावसायिक रूप से बीजों से उगाया जाता है क्योंकि इसमें कोई वेरिएशन नहीं होता है। ग्रोथ-रेगुलेटर (IBA 2,500-3,000 पी.पी.एम.) की मदद से कटिंग (हार्ड वुड) और लेयर्स से भी प्रोपेगेशन किया जा सकता है। ताजे निकाले गए बीजों को आम स्टोरेज में 3 महीने तक और कोल्ड स्टोरेज में 6 महीने तक स्टोर किया जा सकता है। बीजों को कांच के जार की तुलना में पॉलीथीन बैग में बेहतर स्टोर किया जा सकता है। बीजों को अच्छी तरह से तैयार नर्सरी बेड में, 6cm की दूरी पर और लाइनों में 30cm की दूरी पर बोया जाता है। जुलाई-अगस्त बोनो का सही समय है। बीज 2 हफ्ते में उग आते हैं। जनवरी-फरवरी में पौधे ट्रांसप्लांट के लिए तैयार हो जाते हैं।

खेती

रोपण

फालसा के पौधे से पौधे की दूरी 2.5-3.0 मी. और लाइन से लाइन की दूरी 3-4 मी. पर लगाए जा सकते हैं। फालसा पास-पास लगाने के लिए अच्छा है। पौधों की डेंसिटी बढ़ाकर पैदावार बढ़ाई जा सकती है। पौधों को 2 मी. × 2 मी. की दूरी पर चौकोर तरीके से लगाया जा सकता है, जिससे हर हेक्टेयर में 250 पौधे लग सकते

हैं। 60 सेंमी × 60 सेंमी × 60 सेंमी साइज के गड्डों में ऊपर की मिट्टी और गोबर (10 केजी /गड्डा) भरा जाता है। पौधे जनवरी-फरवरी या जुलाई-अगस्त में लगाए जा सकते हैं। अगर मौसम पौधों को बिना जड़ों के उगाने के लिए अच्छा हो, तो फरवरी का महीना लगाने का सबसे अच्छा समय है।

ट्रेनिंग और प्रूनिंग: फालसा के पौधे को झाड़ी की तरह बढ़ने दिया जाता है, इसलिए शुरुआती ट्रेनिंग नहीं दी जाती। अच्छी क्वालिटी के फल पाने के लिए प्रूनिंग एक ज़रूरी सालाना काम है। ज्यादा (जमीन के लेवल पर कटिंग) और बहुत हल्की प्रूनिंग, दोनों ही फसल की पैदावार पर असर डालती हैं। प्रूनिंग की सही ऊंचाई जमीन से 50-100 सेंमी तक होती है। उत्तर भारत में, पौधे सर्दियों के बीच (दिसंबर-जनवरी) के बाद धीरे-धीरे अपने पत्ते गिरा देते हैं और इस स्टेज पर उनकी फ्रूनिंग कर देनी चाहिए। दक्षिण भारत में, पौधों को लंबा होने दिया जाता है और हल्की प्रूनिंग की जाती है। पून किए गए फालसा के बेंत का इस्तेमाल फलों और सब्जियों को ले जाने के लिए टोकरियाँ बनाने और सब्जियों या फलों के पौधों को सहारा देने के लिए खूटे के तौर पर किया जा सकता है।

खाद और फर्टिलाइजेशन: एक मजबूत फसल होने के कारण, फालसा को शायद ही फर्टिलाइज किया जाता है। फल नई ग्रोथ पर लगते हैं, इसलिए फर्टिलाइजर का इस्तेमाल निश्चित रूप से वेजिटेटिव ग्रोथ को बढ़ावा देता है। पंजाब में, 1kg N/पौधा डालना सही रहता है, जबकि हरियाणा के लिए, 15kg गोबर की खाद, अगर छंटाई के बाद और अंकुरित होने के बाद 25kg N/पौधे में डाली जाए, तो ज्यादा पैदावार के लिए सबसे अच्छा है। राजस्थान में, N, P, K, को क्रम से 100, 40 और 25kg/ha डालने से ज्यादा पैदावार मिलती है। उत्तर प्रदेश में, 50:25:25g N, P और K/पौधा पैदावार और फल की क्वालिटी के लिए बेहतर है। माइक्रोन्यूट्रिएंट्स में से, Zn और Fe जूस की मात्रा और बेरी के साइज के लिए फायदेमंद होते हैं। ZnSo₄ (0.5%) और FeSo₄ (0.4%) का स्प्रे फूल खिलने से पहले और फूल खिलने के बाद किया जा सकता है।

सिंचाई: फालसा एक सूखा सहने वाली फसल है, लेकिन अच्छी क्वालिटी के फलों की ज्यादा पैदावार के लिए सिंचाई ज़रूरी है। पहली सिंचाई फरवरी में खाद डालने के बाद करनी होती है। गर्मियों (मार्च-अप्रैल) में 2-3 हफ्ते के गैप पर सिंचाई करना सही रहता है।

देखभाल: फालसा के पौधों को आम तौर पर किसी सहारे की ज़रूरत नहीं होती। कुछ किसान पौधे लगाने के शुरुआती सालों में मूंग या लोबिया से हरी खाद डालते हैं। खरपतवार को कंट्रोल करने

के लिए पौधे की छंटाई के बाद एक जुताई ज़रूरी है।
कटाई और कटाई के बाद का मैनेजमेंट:
फालसा के फल दक्षिण भारत में मार्च-अप्रैल में और उत्तर भारत में मई के आखिर में गर्मी के मौसम में पकने

लगते हैं। फल छोटे साइज के होते हैं और लगभग एक महीने में पक जाते हैं। इसलिए 2-3 दिन के गैप पर कई बार तोड़ना पड़ता है, जो बहुत महंगा होता है। कटाई से पहले जब कुछ फल अपना रंग बदलने लगते हैं, तो इथेनॉल या इथेरेल (500ppm) का इस्तेमाल करने से तोड़ने की संख्या 7 से घटकर 3 हो जाती है और एंथोसायनिन पिगमेंट बढ़ने से कुल चुलनशील टोस चीजों, विटामिन C की मात्रा और रंग के विकास के मामले में फलों की क्वालिटी बेहतर होती है। फलों को पकने के सही समय पर तोड़ना चाहिए। फालसा के फल लगने के 55 दिन बाद पूरी तरह पक जाते हैं। पकने का अंदाजा रंग से लगाया जाता है। शुरू में जो फल हरा होता है, उसका रंग लाल होना चाहिए। फल न तो कम पके होने चाहिए और न ही ज्यादा पके। पकने के समय वे कड़े होने चाहिए। स्टोरेज और ट्रांसपोर्ट के लिए फलों को रंग बदलने की स्टेज पर तोड़ना चाहिए, जबकि लोकल मार्केट के लिए उन्हें लाल पके स्टेज पर तोड़ना चाहिए। फलों को हाथ से अलग-अलग तोड़ा जाता है और बांस/अरहर/पौधे की टोकरियों में इकट्ठा किया जाता है, जिन्हें पॉलीथीन शीट या अखबार की कटिंग से कुशन किया जाता है। औसतन एक पका हुआ पौधा 2-4kg फल देता है।

फालसा सबसे जल्दी खराब होने वाला फल है। इसलिए इसे हैंडलिंग के दौरान लगातार बचाना चाहिए। कोई भी मैनेजमेंट प्रोग्राम फालसा की क्वालिटी को तोड़ने के बाद बेहतर नहीं बना सकता, लेकिन सावधानी से मैनेजमेंट करने से क्वालिटी में कमी को रोका जा सकता है। शारीरिक चोटें- चोट लगना, स्किन में छेद और गलत तरीके से हैंडलिंग के कारण कट लगना के कारण फल खराब हो सकते हैं।

फलों पर चोट लगी जगहें सड़न पैदा करने वाले जीवों के लिए एंट्री पॉइंट का काम कर सकती हैं। नॉर्मल खेत के तापमान पर, फिजियोलॉजिकल एक्टिविटी इतनी ज्यादा होती है कि फल कटाई के तुरंत बाद खुद ही खराब होने लगते हैं। इसलिए, अगर फालसा की पोर्टेशियल शेल्फ-लाइफ बनानी है तो फलों को तुरंत ठंडा करना ज़रूरी है। फालसा में ग्रेडिंग नहीं की जाती है। इसे साइज (बड़ा और छोटा) और रंग (मुड़ने की स्टेज और लाल पकने की स्टेज) के हिसाब से ग्रेड किया जा सकता है। फलों (2-4kg) को दूर के बाजारों के लिए बांस या शहतूत की टोकरियों में पैक करना चाहिए, जिन पर बोरी का कपड़ा या कागज की कटिंग लगी हो। पैकिंग के लिए हार्ड बोर्ड के नालीदार बॉक्स का भी इस्तेमाल किया जा सकता है। स्थानीय बिक्री के लिए फलों की प्री-पैकिंग की जा सकती है। इसके लिए फलों को पत्तों के कप में प्री-पैक किया जा सकता है और स्थानीय बिक्री के लिए छेद वाले पॉलीथीन बैग से ढका जा सकता है। बाजार से घर तक ले जाते समय फलों को संभालना आसान होता है और हरी पत्तियों में पारंपरिक प्री-पैकिंग की तुलना में कम नुकसान भी होता है। फलों की स्टोरेज लाइफ कटाई के स्टेज पर निर्भर करती है। मुड़ने की स्टेज पर तोड़े गए फलों को रूम टेम्परेचर पर 2-3 दिन और कोल्ड स्टोर में 7°C पर लगभग 7 दिन तक स्टोर किया जा सकता है। लाल पके स्टेज पर तोड़े गए फलों को सिर्फ एक दिन के लिए स्टोर किया जा सकता है, इसलिए उन्हें तुरंत लोकल मार्केट में बेच दिया जाता है। फलों को प्रोसेस करके अच्छी क्वालिटी के ड्रिंक्स बनाए जा सकते हैं- रेडी-टू-सर्व, नेक्टर, स्कैंस और सिरप।



प्रखर राय सस्य विज्ञान विभाग, कृषि संकाय,
प्रो. राजेंद्र सिंह (रज्जू भैया) विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ. सत्येंद्र कुमार सिंह सह-आचार्य, कीट विज्ञान
विभाग, कृषि संकाय, चंद्रभानु गुप्त कृषि स्नातकोत्तर
महाविद्यालय, बीकेटी, लखनऊ (उ.प्र.)

डॉ. ललित कुमार सनोदिया

डॉ. अखिलेश कुमार सिंह, डॉ. अवनीश यादव
सहायक प्रोफेसर, कृषि संकाय, प्रो. राजेंद्र सिंह (रज्जू
भैया) विश्वविद्यालय, प्रयागराज (उ.प्र.)

कट्टू वर्गीय फसलों जैसे लौकी, करेला, कट्टू, तोरई आदि किसानों की आमदनी बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। लेकिन बदलते मौसम, बढ़ते तापमान और अनियमित वर्षा के कारण इन फसलों में कीट एवं रोगों का प्रकोप तेजी से बढ़ रहा है। यदि किसान समय रहते इन समस्याओं की पहचान कर सही प्रबंधन अपनाएं, तो वे नुकसान से बचकर अधिक उत्पादन और बेहतर गुणवत्ता प्राप्त कर सकते हैं।

सबसे पहले कीटों की बात करें तो सफेद मक्खी और थ्रिप्स जैसे चूसक कीट मार्च-अप्रैल के महीनों में अधिक सक्रिय हो जाते हैं। ये कीट पत्तियों का रस चूसकर पौधों को कमजोर कर देते हैं, जिससे पत्तियां पीली पड़ जाती हैं, मुड़ जाती हैं और पौधों की बढ़वार रुक जाती है। इसके अलावा ये कीट कई वायरस रोग भी फैलाते हैं, जिससे फसल को और अधिक नुकसान होता है। फल मक्खी एक और गंभीर कीट है, जिसका प्रकोप अप्रैल के अंत से जून तक अधिक रहता है। यह कीट फलों और तनों में अंडे देता है, जिससे अंदर से लार्वा फल को खाकर खराब कर देता है। ऐसे फल टेढ़े-मेढ़े हो जाते हैं, सड़ने लगते हैं और बाजार में उनकी कीमत बहुत कम मिलती है।

रोगों में फफूंदी जनित रोग जैसे खर्रा (Powdery Mildew) और दहिया (Downy Mildew) प्रमुख हैं। ये रोग विशेष रूप से तब तेजी से फैलते हैं जब मौसम में अचानक बदलाव होता है, तापमान और नमी में उतार-चढ़ाव होता है। खर्रा रोग में पत्तियों पर सफेद चूर्ण जैसा दिखाई देता है, जबकि दहिया रोग में पत्तियों पर पीले-भूरे धब्बे बनते हैं और पत्तियों के नीचे फफूंदी

कट्टूवर्गीय फसलों में कीट एवं रोग प्रबंधन



दिखाई देती है। यदि इन रोगों को समय पर नहीं रोका जाए, तो पूरी फसल प्रभावित हो सकती है।

इन सभी समस्याओं के प्रभावी नियंत्रण के लिए समेकित प्रबंधन (Integrated Management) अपनाना बहुत जरूरी है। फफूंदी जनित रोगों के नियंत्रण के लिए Cabrio Top (Metiram 55% + Pyraclostrobin 5% WG) का 3-3.5 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए। इसके साथ ही Nativo (Tebuconazole 50% + trifloxystrobin 25%) का 10 ग्राम प्रति 15 लीटर पानी की दर से छिड़काव भी बहुत प्रभावी है, जो रोग के प्रारंभिक एवं मध्यम स्तर पर अच्छा नियंत्रण देता है और पत्तियों को सुरक्षित रखता है। चूसक कीटों जैसे थ्रिप्स और सफेद मक्खी के नियंत्रण के लिए एसीफेट (Acephate) और इमिडाक्लोप्रिड (Imidachloprid) का छिड़काव प्रभावी पाया गया है। इनका उपयोग संतुलित मात्रा में और विशेषज्ञ की सलाह के अनुसार करना चाहिए। छिड़काव हमेशा

सुबह या शाम के समय करना चाहिए, ताकि दवा का असर अधिक समय तक बना रहे और पौधों को कोई नुकसान न हो। इसके साथ ही जैविक एवं यांत्रिक उपाय भी अपनाने चाहिए। ब्यूवेरिया बासियाना (Beauveria bassiana) जैसे जैविक एजेंट का उपयोग करने से कीटों को प्राकृतिक रूप से नियंत्रित किया जा सकता है। फल मक्खी के नियंत्रण के लिए मिथाइल यूजेनॉल युक्त फेरोमोन ट्रेप खेत में लगाना चाहिए, जिससे नर मक्खियां आकर्षित होकर फंस जाती हैं और उनकी संख्या कम हो जाती है। खेत में मल्लिचंग करने से मिट्टी की नमी बनी रहती है, तापमान संतुलित रहता है और कीट व रोगों का प्रकोप कम होता है। करेला, लौकी जैसी बेल वाली फसलों को मचान पर उगाना अत्यंत लाभकारी है। इससे पौधों को पर्याप्त धूप और हवा मिलती है, जिससे रोग कम लगते हैं और उत्पादन 3-4 गुना तक बढ़ सकता है, जबकि कट्टू की फसल को सामान्यतः जमीन पर ही उगाया जाता है।

अंत में किसानों के लिए सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि वे नियमित रूप से अपनी फसल का निरीक्षण करते रहें और जैसे ही कीट या रोग के लक्षण दिखाई दें, तुरंत नियंत्रण उपाय अपनाएं। सही समय पर सही दवा और तकनीक का उपयोग ही सफल खेती की कुंजी है। यदि किसान रासायनिक, जैविक और यांत्रिक उपायों का संतुलित उपयोग करते हैं, तो वे कम लागत में अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

॥ जय माँ शीतला ॥

कृषक सेवा केन्द्र

खाद बीज एवं कीटनाशक दवाओं के थोक एवं खेरीज विक्रेता

हमारे यहाँ धान, गेहूँ, सोयाबीन, सरसों, तिली एवं सब्जियों के बीज, खाद एवं उच्च कोटी की कीटनाशक दवाईयाँ उचित मूल्य पर मिलती है।

प्रो. रामकृष्ण गुर्जर
(बामोर वाले)
मो. 9098945189

पता : पशु अस्पताल के सामने, भितरवार रोड, डबरा, ग्वालियर



डॉ. विजय चंद्रा, डॉ. शिव पूजन यादव
डॉ. रामकुमार

(वैज्ञानिक)

डॉ. डी.पी. सिंह (वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष)
कृषि विज्ञान केंद्र, बसुली, महाराजगंज,
आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय,
कुमारगंज, अयोध्या-224229 (उ.प्र.)

गर्मियों का मौसम मुर्गी पालन के लिए अत्यंत चुनौतीपूर्ण माना जाता है, क्योंकि इस दौरान उच्च तापमान, गर्म हवाएँ (लू) तथा आर्द्रता में उतार-चढ़ाव मुर्गीयों के शारीरिक संतुलन को प्रभावित करते हैं। अत्यधिक गर्मी के कारण मुर्गीयों में हीट स्ट्रेस उत्पन्न हो जाता है, जिससे उनकी भूख कम हो जाती है, पानी की खपत बढ़ जाती है तथा अंडा एवं मांस उत्पादन पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। कई बार अत्यधिक तापमान मृत्यु दर को भी बढ़ा सकता है, जिससे किसानों को आर्थिक हानि होती है। इसलिए इस मौसम में मुर्गीयों के लिए उपयुक्त आवास, संतुलित आहार, पर्याप्त स्वच्छ पानी तथा उचित स्वास्थ्य प्रबंधन अत्यंत आवश्यक हो जाता है, ताकि उनके उत्पादन स्तर को बनाए रखते हुए बेहतर लाभ प्राप्त किया जा सके।

मुर्गीशाला (पोल्ट्री हाउस) का प्रबंधन: गर्मियों के मौसम में मुर्गीशाला का उचित प्रबंधन मुर्गीयों को हीट स्ट्रेस से बचाने के लिए अत्यंत आवश्यक होता है। शेड को इस प्रकार बनाना चाहिए कि उसमें पर्याप्त वेंटिलेशन हो और ताजी हवा का आवागमन बना रहे। शेड की दिशा पूर्व-पश्चिम रखना लाभकारी होता है, जिससे सूर्य की सीधी किरणों का प्रभाव कम पड़ता है। छत पर सफेदी या चूने का लेप करने से गर्मी का अवशोषण कम होता है और अंदर का तापमान नियंत्रित रहता है। शेड के आसपास पेड़-पौधे लगाने से छाया और ठंडक मिलती है। इसके अतिरिक्त, पंखों, कूलर, फॉगर्स या पानी के छिड़काव का उपयोग करके वातावरण को ठंडा रखा जा सकता है। मुर्गीशाला में अधिक भीड़ से बचना चाहिए, क्योंकि इससे तापमान बढ़ता है और मुर्गीयों में तनाव उत्पन्न होता है। उचित सफाई और स्वच्छता बनाए रखना भी आवश्यक है, ताकि रोगों का प्रकोप न बढ़े और मुर्गीयों का स्वास्थ्य रहे।

वेंटिलेशन (हवादार व्यवस्था): गर्मियों में मुर्गीयों को स्वस्थ और उत्पादक बनाए रखने के लिए उचित वेंटिलेशन अत्यंत आवश्यक होता है। मुर्गीशाला में ताजी हवा का निरंतर आवागमन रहने से तापमान नियंत्रित रहता है तथा हानिकारक गैस जैसे अमोनिया, कार्बन डाइऑक्साइड आदि बाहर निकल जाती हैं। इससे मुर्गीयों को श्वसन में सुविधा मिलती है और हीट स्ट्रेस का प्रभाव कम होता है। शेड में पर्याप्त संख्या में खिड़कियाँ और जालियाँ होनी चाहिए, ताकि हवा का प्रवाह बाधित न हो। आवश्यकता पड़ने पर एगॉस्ट फैन या पंखों का उपयोग करके वायु संचार को और बेहतर बनाया जा सकता है। उचित वेंटिलेशन से न केवल मुर्गीयों का स्वास्थ्य बेहतर रहता है, बल्कि उनकी वृद्धि और उत्पादन क्षमता भी बनी रहती है।

पानी का प्रबंधन: गर्मियों में मुर्गीयों के लिए पानी का उचित प्रबंधन अत्यंत महत्वपूर्ण होता है, क्योंकि उच्च तापमान के कारण उनके शरीर में पानी की आवश्यकता बढ़ जाती है। मुर्गीयों को हमेशा स्वच्छ, ताजा और ठंडा पानी उपलब्ध कराना चाहिए, ताकि वे निर्जलीकरण (डिहाइड्रेशन) और हीट स्ट्रेस से बच सकें। पानी के बर्तनों को छायादार स्थान पर रखना चाहिए ताकि पानी अधिक गर्म न हो और बार-बार बदलते रहना चाहिए। गर्मियों में पानी में इलेक्ट्रोलाइट्स तथा विटामिन-सी मिलाने से मुर्गीयों की सहनशीलता बढ़ती है और तनाव कम होता है। यह भी ध्यान रखना चाहिए कि सभी मुर्गीयों को आसानी से पानी मिल सके, इसलिए पर्याप्त संख्या में पानी के बर्तन होने चाहिए। उचित जल प्रबंधन से मुर्गीयों का स्वास्थ्य अच्छा रहता है और उत्पादन क्षमता बनी रहती है।

आहार का प्रबंधन: गर्मियों में मुर्गीयों का आहार प्रबंधन विशेष ध्यान देने योग्य होता है, क्योंकि अधिक तापमान के कारण उनकी भूख कम हो जाती है

गर्मियों में मुर्गीयों का समुचित प्रबंधन

और इससे उनकी वृद्धि एवं उत्पादन प्रभावित होता है। इस स्थिति में मुर्गीयों को संतुलित एवं सुपाच्य आहार देना चाहिए, जिसमें प्रोटीन, विटामिन तथा खनिज तत्वों की पर्याप्त मात्रा हो। भोजन को दिन के ठंडे समय, जैसे सुबह जल्दी और शाम को देना अधिक उपयुक्त रहता है, ताकि मुर्गीयों आसानी से आहार ग्रहण कर सकें। अधिक ऊर्जा एवं वसा युक्त आहार से बचना चाहिए, क्योंकि इससे शरीर में अतिरिक्त गर्मी उत्पन्न होती है। आहार में विटामिन-सी और इलेक्ट्रोलाइट्स का समावेश करने से हीट स्ट्रेस कम करने में मदद मिलती है। इसके अतिरिक्त, चारे की गुणवत्ता और ताजगी बनाए रखना भी आवश्यक है, ताकि मुर्गीयों का स्वास्थ्य और उत्पादन स्तर अच्छा बना रहे।

हीट स्ट्रेस का नियंत्रण: गर्मियों के मौसम में मुर्गीयों में हीट स्ट्रेस एक गंभीर समस्या के रूप में उभरता है, जो उनके स्वास्थ्य, वृद्धि तथा उत्पादन क्षमता



चित्र 1. मुर्गी पालन ईकाई

पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। जब वातावरण का तापमान मुर्गीयों की सहनशीलता से अधिक हो जाता है, तो वे अपने शरीर का तापमान नियंत्रित नहीं कर पाती और तनाव की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। इस स्थिति में मुर्गीयों तेज सांस लेने लगती हैं, पंख फैलाकर बैठती हैं, पानी का अधिक सेवन करती हैं तथा आहार का सेवन कम कर देती हैं, जिससे अंडा उत्पादन और वजन वृद्धि प्रभावित होती है। हीट स्ट्रेस को नियंत्रित करने के लिए मुर्गीशाला में उचित वेंटिलेशन और तापमान नियंत्रण अत्यंत आवश्यक है। शेड में पंखे, कूलर, फॉगर्स या स्प्रेयर का उपयोग करके वातावरण को ठंडा रखा जा सकता है। छत पर पानी का छिड़काव या गीले बोरे डालना भी तापमान कम करने में सहायक होता है। मुर्गीयों को भीड़ को नियंत्रित रखना चाहिए, क्योंकि अधिक घनत्व से गर्मी और तनाव बढ़ता है। इसके अलावा, मुर्गीयों को दिन के ठंडे समय में ही आहार देना चाहिए और स्वच्छ, ठंडा पानी हर समय उपलब्ध कराना चाहिए। पानी में इलेक्ट्रोलाइट्स और विटामिन-सी मिलाने से शरीर में संतुलन बना रहता है और तनाव कम होता है। परिवहन, टीकाकरण या अन्य प्रबंधन कार्यों को भी सुबह या शाम के समय करना चाहिए, ताकि अतिरिक्त तनाव से बचा जा सके। इस प्रकार, उचित प्रबंधन तकनीकों को अपनाकर हीट स्ट्रेस के प्रभाव को कम किया जा सकता है और मुर्गीयों के स्वास्थ्य एवं उत्पादन को सुरक्षित रखा जा सकता है।

स्वास्थ्य एवं स्वच्छता प्रबंधन: गर्मियों के मौसम में मुर्गीयों के स्वास्थ्य एवं स्वच्छता का विशेष ध्यान रखना अत्यंत आवश्यक होता है, क्योंकि उच्च तापमान और आर्द्रता के कारण रोगजनकों (बैक्टीरिया, वायरस, फफूंद आदि) की वृद्धि तेजी से होती है, जिससे विभिन्न बीमारियों का प्रकोप बढ़ सकता है। इसलिए मुर्गीशाला की नियमित सफाई और कोटाणुशोधन करना अनिवार्य है, ताकि वातावरण स्वच्छ और रोगमुक्त बना रहे। बिछवन (लिट्टर) को सूखा और साफ रखना चाहिए, क्योंकि गीला और गंदा लिट्टर अमोनिया गैस उत्पन्न करता है, जो मुर्गीयों के श्वसन तंत्र को प्रभावित कर सकता है। मृत या बीमार मुर्गीयों को तुरंत अलग करना चाहिए, ताकि संक्रमण अन्य मुर्गीयों में न फैले। समय-

समय पर टीकाकरण कार्यक्रम का पालन करना चाहिए और पशु चिकित्सक की सलाह के अनुसार दवाओं का उपयोग करना चाहिए। बाहरी व्यक्तियों और जानवरों के अनावश्यक प्रवेश को रोकना भी जैव-सुरक्षा (बायोसिक्योरिटी) का महत्वपूर्ण हिस्सा है। इसके अलावा, पानी और आहार के बर्तनों को नियमित रूप से साफ करना चाहिए, ताकि उनमें किसी प्रकार के रोगाणु न पनप सकें। उचित स्वच्छता और स्वास्थ्य प्रबंधन अपनाकर न केवल मुर्गीयों को बीमारियों से बचाया जा सकता है, बल्कि उनकी उत्पादन क्षमता को भी बनाए रखा जा सकता है, जिससे पोल्ट्री पालन अधिक लाभकारी बनता है।

भीड़ प्रबंधन (स्टॉकिंग डेंसिटी): गर्मियों के मौसम में मुर्गीयों के लिए उचित स्टॉकिंग डेंसिटी बनाए रखना अत्यंत महत्वपूर्ण होता है, क्योंकि अधिक भीड़ से शेड के अंदर तापमान और आर्द्रता तेजी से बढ़ जाती है, जिससे हीट

स्ट्रेस का खतरा बढ़ता है। अधिक घनत्व के कारण मुर्गीयों को पर्याप्त स्थान, हवा और पानी नहीं मिल पाता, जिससे उनका विकास, स्वास्थ्य और उत्पादन प्रभावित होता है। इसलिए गर्मियों में सामान्य से कम संख्या में मुर्गीयों को एक स्थान पर रखना चाहिए, ताकि उन्हें पर्याप्त जगह मिल सके और वे आराम से रह सकें। पर्याप्त स्थान होने से मुर्गीयों के बीच प्रतिस्पर्धा कम होती है, आक्रामक व्यवहार घटता है और रोगों के फैलने की संभावना भी कम हो जाती है। उचित स्टॉकिंग डेंसिटी बनाए रखने से मुर्गीयों का स्वास्थ्य बेहतर रहता है और उनकी उत्पादकता में भी सुधार होता है।

विशेष सावधानियाँ: गर्मियों के मौसम में मुर्गीयों की सुरक्षा और उत्पादन को बनाए रखने के लिए कुछ विशेष सावधानियाँ अपनाकर अत्यंत आवश्यक होता है। सबसे पहले, मुर्गीशाला के आसपास स्वच्छ और ठंडा वातावरण बनाए रखना चाहिए तथा शेड में सीधी धूप के प्रवेश को रोकने के लिए पर्दे, जालियों या हरित आवरण (ग्रीन नेट) का उपयोग करना चाहिए। दिन के सबसे गर्म समय, विशेषकर दोपहर में, अनावश्यक गतिविधियों जैसे फेड़ना, टीकाकरण या स्थानांतरण से बचना चाहिए, क्योंकि इससे मुर्गीयों में अतिरिक्त तनाव उत्पन्न होता है। परिवहन कार्य हमेशा सुबह या शाम के समय ही करना चाहिए। मुर्गीयों के व्यवहार पर नियमित निगरानी रखना जरूरी है, यदि वे तेज सांस ले रही हों, पंख फैलाकर बैठ रही हों या सुरती दिखा रही हों, तो तुरंत शीतलन उपाय बढ़ाने चाहिए। अचानक तापमान परिवर्तन से बचना चाहिए, क्योंकि इससे मुर्गीयों के शरीर पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इसके अतिरिक्त, बिजली आपूर्ति में बाधा की स्थिति के लिए वैकल्पिक व्यवस्था (जैसे जनरेटर) रखना लाभकारी होता है, ताकि पंखे या कूलिंग सिस्टम लगातार चलते रहें। शुद्ध और ठंडा पानी हर समय उपलब्ध होना चाहिए और फीड तथा पानी के बर्तनों को छायादार स्थान पर रखना चाहिए। इन सभी सावधानियों का पालन करके गर्मियों में मुर्गीयों को हीट स्ट्रेस से बचाया जा सकता है तथा उनकी उत्पादकता और स्वास्थ्य को सुरक्षित रखा जा सकता है।

निष्कर्ष: गर्मियों के मौसम में मुर्गीयों का समुचित प्रबंधन अपनाकर अत्यंत आवश्यक है, ताकि हीट स्ट्रेस के दुष्प्रभावों को कम किया जा सके और उत्पादन स्तर बनाए रखा जा सके। उचित मुर्गीशाला प्रबंधन, संतुलित आहार, स्वच्छ एवं ठंडे पानी की उपलब्धता, बेहतर वेंटिलेशन तथा नियमित स्वास्थ्य एवं स्वच्छता उपायों के माध्यम से मुर्गीयों को स्वस्थ रखा जा सकता है। साथ ही, भीड़ नियंत्रण और विशेष सावधानियों का पालन करके मृत्यु दर को कम किया जा सकता है और उत्पादन क्षमता को बढ़ाया जा सकता है। इस प्रकार, वैज्ञानिक और सावधानीपूर्वक प्रबंधन अपनाकर पोल्ट्री पालन को गर्मियों में भी लाभकारी और सफल बनाया जा सकता है।



श्वेता वर्मा शोध छात्रा, (सब्जी विज्ञान विभाग) आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारागंज, अयोध्या

निहारिका सिंह शोध छात्रा, (सब्जी विज्ञान विभाग) आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारागंज, अयोध्या

आस्तिक झा सह-प्राध्यापक, (सब्जी विज्ञान विभाग) आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारागंज, अयोध्या (उ.प्र.)

परिचय

काली हल्दी आयुर्वेद में एक महत्वपूर्ण औषधीय पौधा माना जाता है। इसका सामान्य नाम काली हल्दी है और वैज्ञानिक नाम कुरकुमा केसिया है, जो जीजिबेरेसी कुल से संबंधित है। इस पौधे का औषधीय उपयोग मुख्यतः इसकी जड़ (कंद) से होता है। काली हल्दी एक दुर्लभ जड़ी-बूटी है। इसे कभी-कभी सजावटी पौधे के रूप में भी उगाया जाता है, लेकिन सदियों से इसकी जड़ का उपयोग औषधीय और धार्मिक प्रयोजनों के लिए होता रहा है। यह पौधा अपने गुणों के कारण विशेष महत्व रखता है और इसकी खेती सरल तरीकों से की जा सकती है। कम लागत तकनीक अपनाकर इसे लाभकारी व्यवसाय में बदला जा सकता है। भारत में इसे स्वास्थ्य और धार्मिक दृष्टिकोण से व्यापक रूप से उपयोग किया जा रहा है।

औषधीय गुण

काली हल्दी का औषधीय महत्व अत्यंत प्राचीन और व्यापक माना जाता है। काली हल्दी के सूखे कंद में एंटी-बैक्टीरियल, एंटी-फंगल गुण पाए जाते हैं। इसकी जड़ में एंटीऑक्सीडेंट, सूजन रोधी और रोग प्रतिरोधक गुण पाए जाते हैं। यह पाचन सुधारने, जखम भरने, सर्दी-जुकाम और त्वचा संबंधी समस्याओं को कम करने में मदद करती है। आयुर्वेद में इसे संक्रमण से लड़ने, शरीर की ऊर्जा बढ़ाने और सामूहिक स्वास्थ्य सुधारने के लिए भी उपयोग किया जाता है। इसके नियमित और सही उपयोग से शारीरिक प्रतिरोधक क्षमता मजबूत होती है और अनेक रोगों से सुरक्षा मिलती है। के

भूमि और जलवायु

काली हल्दी की खेती के लिए गर्म और उष्णकटिबंधीय जलवायु सबसे अनुकूल मानी जाती है। इसके लिए तापमान 15 से 40 डिग्री सेंटीग्रेड के बीच होना उपयुक्त होता है। यह पौधा पाले को सहन करने में सक्षम है विपरीत परिस्थितियों में भी अपना संतुलन बनाए रखता है। खेती के लिए बलुई, दोमट या मटियार जैसी मध्यम मिट्टी जो अच्छी जल धारण क्षमता वाली हो, उपयुक्त मानी जाती है। इसके विपरीत, चिकनी, काली या मिश्रित मिट्टी में कंद अच्छी तरह विकसित नहीं होते। मिट्टी में पर्याप्त जैविक पदार्थ होना जरूरी है। जलभराव वाली भूमि या कम उपजाऊ जमीन पर इसकी खेती सफल नहीं रहती। भूमि का पीएच स्तर 5 से 7 के बीच होना चाहिए।

काली हल्दी के लिए खेती की तैयारी

काली हल्दी की खेती में भूमि की अच्छी तैयारी करने की

काली हल्दी की उत्पादन तकनीकी



आवश्यकता है, क्योंकि यह जमीन के अंदर होती है जिससे जमीन को अच्छी तरह से भुरभुरा बनाया जाना आवश्यक है। जमीन की 1.5 फुट गहरी जुटाई करें, उसमें जैविक खाद को समान मात्रा में फैलाए उसके बाद मिट्टी और खाद को मिलाए। और मिट्टी को बारीक/भुरभुरा बनाएं। मिट्टी में 2 फुट चौड़े बेड या मेड का निर्माण करें जिसकी ऊंचाई 1 फुट तक हो। काली हल्दी के खेती में बेड के ऊपर ढकने के लिए प्लास्टिक की मल्लिचंग शीट का उपयोग करने से खरपतवार निकालने के खर्च में कमी की सकती है।

बीज की मात्रा और लगाने का तरीका

काली हल्दी की बुवाई के लिए प्रति एकड़ लगभग 10,000 गांठों की आवश्यकता होती है। पौधों के बीच दूरी 2 फुट रखी जानी चाहिए और दो पंक्तियों के बीच का अंतर भी 2 फुट होना चाहिए। बुवाई से पहले सिंचाई करना लाभकारी होता है। इसमें देसी गाय के गोमूत्र को 10 लीटर की मात्रा में 100 लीटर पानी में मिलाकर उपयोग किया जा सकता है। साथ ही, ट्रायकोडर्मा फफूंदनाशक पाउडर 1,000 ग्राम की मात्रा में 100 लीटर पानी के साथ मिलाकर ड्रिप सिंचाई के माध्यम से दिया जा सकता है। इससे मिट्टी में मौजूद हानिकारक तत्व नष्ट हो जाते हैं और पौधों के लिए सुरक्षित वातावरण तैयार होता है।

लगाने का समय और बीज उपचार

काली हल्दी लगाने का आदर्श समय जून के शुरुआत से अगस्त के अंत तक होता है। बुवाई से पहले हल्दी के गांठों का उपचार करना जरूरी है। इसके लिए एक बर्तन में 10 लीटर पानी लें, उसमें 2 लीटर गोमूत्र और 100 ग्राम ट्रायकोडर्मा पाउडर मिलाएँ। इस घोल में काली हल्दी के गांठों को 5 से 10 मिनट भिगोकर रखें, फिर उन्हें जमीन में रोपित करें। बीज को 2-3 इंच की गहराई पर निश्चित स्थान पर दबाकर लगाएँ। पूरे खेत में कंद लगाने के तुरंत बाद सिंचाई करना आवश्यक है।

सिंचाई

काली हल्दी की सिंचाई का समय पौधे की वृद्धि और कंद की गुणवत्ता के लिए बहुत महत्वपूर्ण माना जाता है। रोपाई के तुरंत बाद हल्दी सिंचाई करनी चाहिए ताकि मिट्टी में नमी बनी रहे। पहले 20-25 दिन में हर 5-7 दिन में पानी

दे, जबकि वृद्धि काल में हर 3-4 दिन में हल्की सिंचाई उपयुक्त होती है। फूल आने और कंद बनने के समय सिंचाई की आवृत्ति कम कर दें, हर 7-10 दिन में पर्याप्त पानी देना पर्याप्त रहता है। कटाई से लगभग 15-20 दिन पहले पानी देना बंद कर देना चाहिए ताकि कंद सही तरीके से तैयार हो। सिंचाई के लिए ड्रिप पद्धति सबसे उपयुक्त है, क्योंकि यह मिट्टी में नमी संतुलित रखती है और जलभराव से बचाती है।

खाद एवं उर्वरक

काली हल्दी की खेती में जैविक खादों एवं उर्वरकों का इस्तेमाल करना चाहिए, जैविक खाद जैसे कि-

* **केंचुआ खाद/ वर्मी कम्पोस्ट:** पौधे हेतु पोषक तत्व प्रदान करता है।

* **नीम की खली :** जमीन में पाए जाने वाले कीड़ों को नष्ट करता है।

* **जिप्सम पाउडर :** जमीन को भुर-भुरा रखने में मदद करता है।

* **ट्रायकोडर्मा फफूंदनाशक पाउडर:** जो जमीन में उपस्थित हानिकारक फफूंद को मारने में उपयोगी होता है।

खरपतवार नियंत्रण

काली हल्दी की खेती में खरपतवार नियंत्रण बहुत आवश्यक माना जाता है, क्योंकि खरपतवार पौधों से पोषक तत्व, पानी और प्रकाश के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं, जिससे उत्पादन पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। पौधों की रोपाई के 25 से 30 दिन बाद हल्की निराई गुड़ाई करनी चाहिए। खरपतवार नियंत्रण के लिए 3 गुड़ाई काफी हैं। प्रत्येक गुड़ाई 20 दिन के अंतराल पर करनी चाहिए। रोपाई के 50 दिन बाद गुड़ाई बंद कर देना चाहिए नहीं तो कन्दों को नुकसान पहुंचता है।

खुदाई एवं उपज

काली हल्दी की फसल 8 से 9 महीने में खोदने लायक हो जाती है, कन्दों की खुदाई जनवरी-मार्च तक की जाती है। खुदाई करते समय ध्यान रखे की कंद न कटे, न छिले और न ही भूमि में रहे। वैज्ञानिक पद्धति से खेती करने पर काली हल्दी की पैदावार 70 से 75 क्विंटल प्रति एकड़ पर प्राप्त हो जाती है। यह ध्यान रहे कि कच्ची हल्दी को सूखाने के बाद 20-25% तक रह जाती है।

बीज प्रकन्दों का भंडारण

काली हल्दी के बीज कंदों का भंडारण सावधानीपूर्वक करना चाहिए। बीज के रूप में इस्तेमाल होने वाले कंदों को हल्दी के पत्तों से ढककर हवादार कमरे में रखा जाना चाहिए। इसके अलावा, इन्हें लकड़ी के बुरादे, रेत, या ग्लाइकोस्मिस पेन्टाफ्लॉर (पाणल) के पत्तों से भरे गड्ढों में भी रखा जा सकता है। गड्ढों को ऊपर से छिद्र युक्त लकड़ी के तख्तों से ढककर हवादार बनाए रखना चाहिए ताकि कंद सुरक्षित रहें और बीज क्षमता बनी रहे।



❖ **स्नेहा सिंह** सहायक प्राध्यापक, कृषि प्रसार शिक्षा विभाग, राष्ट्रीय किसान स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शामली (उ.प्र.)

❖ **शाडिण्जय सिंह, सुचिस्मिता साहू, संदीप चौहान** शोध छात्र, कृषि प्रसार शिक्षा विभाग आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारागंज, अयोध्या-224229 (उ.प्र.)

प्रस्तावना: भारत एक कृषि-प्रधान देश है जहाँ आज भी बड़ी जनसंख्या अपनी आजीविका के लिए खेती और उससे संबंधित गतिविधियों पर निर्भर है। कृषि केवल आर्थिक गतिविधि नहीं, बल्कि ग्रामीण समाज की सांस्कृतिक और सामाजिक संरचना का आधार भी है। फिर भी वर्तमान समय में युवाओं का झुकाव कृषि क्षेत्र से कम होता दिखाई देता है। उच्च शिक्षा, शहरी जीवनशैली का आकर्षण, स्थायी वेतन वाली नौकरियों की चाह और खेती से जुड़ी अनिश्चितताओं के कारण युवा कृषि को करियर के रूप में अपनाने में हिचकते हैं।

दूसरी ओर, वैश्वीकरण, जलवायु परिवर्तन, बढ़ती जनसंख्या और खाद्य सुरक्षा की चुनौतियाँ यह संकेत देती हैं कि कृषि को आधुनिक, टिकाऊ और लाभकारी बनाना अत्यंत आवश्यक है। युवाओं की ऊर्जा, नवाचार क्षमता, तकनीकी दक्षता और जोखिम लेने की प्रवृत्ति कृषि क्षेत्र के आधुनिकीकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। इसलिए आवश्यकता है कि कृषि प्रसार प्रणाली को इस प्रकार पुनर्गठित किया जाए कि वह युवाओं को आकर्षित करे, उन्हें प्रशिक्षित करे और कृषि को एक सम्मानजनक एवं लाभकारी पेशे के रूप में स्थापित करे।

2. कृषि प्रसार की अवधारणा और उसका विकास: कृषि प्रसार का मूल उद्देश्य किसानों तक वैज्ञानिक ज्ञान, नई तकनीक और प्रबंधन कौशल पहुंचाना है ताकि वे अपनी उत्पादकता और आय बढ़ा सकें। प्रारंभिक दौर में प्रसार कार्य मुख्यतः सरकारी अधिकारियों द्वारा संचालित होता था, जहाँ किसानों को एकतरफा जानकारी दी जाती थी। यह मॉडल सीमित प्रभाव वाला था क्योंकि इसमें किसानों की आवश्यकताओं और स्थानीय परिस्थितियों पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जाता था। समय के साथ प्रसार प्रणाली में परिवर्तन आया। अब यह केवल तकनीक हस्तांतरण का माध्यम नहीं, बल्कि सहभागिता, नवाचार और सामुदायिक विकास का साधन बन चुका है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के अंतर्गत कार्यरत कृषि विज्ञान केंद्र स्थानीय समस्याओं के समाधान हेतु प्रशिक्षण, प्रदर्शन और अनुसंधान आधारित सलाह प्रदान करते हैं। ये केंद्र विशेष रूप से ग्रामीण युवाओं हेतु कौशल विकास कार्यक्रम आयोजित करते हैं। इसी प्रकार डिजिटल इंडिया पहल ने ग्रामीण क्षेत्रों में डिजिटल अवसरों का विस्तार किया है, जिससे ई-प्रसार ऑनलाइन प्रशिक्षण, वेबिनार, मोबाइल ऐप और डिजिटल परामर्श सेवाएँ संभव हुई हैं। आज किसान मोबाइल फोन के माध्यम से मौसम पूर्वानुमान, फसल सलाह और बाजार मूल्य की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

3. युवाओं की कृषि में घटती भागीदारी: विस्तृत विश्लेषण- युवाओं की कृषि से दूरी के पीछे कई सामाजिक, आर्थिक और मनोवैज्ञानिक कारण हैं।

(i) **आय की अनिश्चितता:** कृषि में प्राकृतिक जोखिम अधिक होते हैं। वर्षा पर निर्भरता, कीट-रोग प्रकोप और बाजार मूल्य में उतार-चढ़ाव युवाओं को हतोत्साहित करते हैं।

(ii) **भूमि का विखंडन:** पीढ़ी दर पीढ़ी भूमि के बँटवारे से जोत का आकार छोटा होता गया है जिससे आय सीमित हो जाती है।

(iii) **सामाजिक प्रतिष्ठा का प्रश्न:** आधुनिक समाज में कृषि

युवाओं की कृषि में भागीदारी: नवोन्मेषी प्रसार के माध्यम से सशक्तिकरण

को अक्सर कम आय और कठिन श्रम से जोड़ा जाता है, जिससे युवा इसे अंतिम विकल्प के रूप में देखते हैं।

(iv) **संसाधनों और प्रशिक्षण की कमी:** आधुनिक तकनीकों, वित्तीय सहायता और विपणन कौशल की कमी युवाओं को कृषि उद्यम शुरू करने से रोकती है।

(1) **प्रवासन की प्रवृत्ति:** बेहतर अवसरों की तलाश में ग्रामीण युवा शहरों की ओर पलायन करते हैं, जिससे ग्रामीण कृषि प्रणाली में युवा श्रमशक्ति की कमी हो जाती है।

4. नवोन्मेषी प्रसार के माध्यम से समाधान

4.1 डिजिटल और स्मार्ट कृषि: डिजिटल तकनीकों के उपयोग से कृषि को अधिक सटीक, वैज्ञानिक और आकर्षक बनाया जा सकता है। ड्रोन द्वारा फसल निगरानी, सेंसर आधारित सिंचाई, जीआईएस मैपिंग और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस आधारित सलाह युवाओं हेतु रुचिकर क्षेत्र हैं। मोबाइल ऐप के माध्यम से रोग निदान, उर्वरक सिफारिश और बाजार सूचना उपलब्ध कराई जा रही है। इससे समय की बचत होती है और निर्णय लेने की क्षमता बढ़ती है।

4.2 कृषि उद्यमिता और स्टार्टअप संस्कृति: युवा कृषि को केवल उत्पादन तक सीमित न रखकर मूल्य संवर्धन और प्रोसेसिंग में अवसर तलाश सकते हैं। जैविक उत्पादों की ब्रांडिंग, खाद्य प्रसंस्करण इकाइयाँ, डेयरी, मत्स्य पालन, मशरूम उत्पादन और मधुमक्खी पालन जैसे क्षेत्रों में उच्च संभावनाएँ हैं। नवोन्मेषी प्रसार कार्यक्रम युवाओं को व्यवसाय योजना तैयार करने, वित्तीय प्रबंधन और विपणन रणनीतियों का प्रशिक्षण प्रदान करते हैं।

4.3 किसान उत्पादक संगठन: सामूहिकता के माध्यम से छोटे किसान भी बड़े बाजारों तक पहुँच बना सकते हैं। युवा नेतृत्व वाले FPO संसाधनों का बेहतर उपयोग, सामूहिक खरीद और विपणन के माध्यम से लाभ बढ़ाने में सहायक होते हैं।

4.4 कौशल विकास और प्रशिक्षण-

व्यावसायिक प्रशिक्षण

कार्यक्रम युवाओं को तकनीकी दक्षता प्रदान करते हैं। कृषि यंत्रिकरण, ग्रीनहाउस प्रबंधन, जैव उर्वरक निर्माण, पशुपालन और आपूर्ति श्रृंखला प्रबंधन जैसे क्षेत्रों में कौशल विकास से रोजगार के नए अवसर उत्पन्न होते हैं।

4.5 सोशल मीडिया और ज्ञान नेटवर्क- युवा किसान सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म के माध्यम से अपने अनुभव साझा कर सकते हैं। इससे प्रेरणा मिलती है और नई तकनीकों का तेजी से प्रसार होता है। डिजिटल नेटवर्किंग से बाजार संपर्क भी सुदृढ़ होता है।

5. महिला और जनजातीय युवाओं का सशक्तिकरण- महिला और जनजातीय युवा कृषि क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं। उन्हें तकनीकी प्रशिक्षण, वित्तीय सहायता और बाजार संपर्क प्रदान कर आत्मनिर्भर बनाया जा सकता है। समावेशी प्रसार मॉडल सामाजिक समानता और आर्थिक सशक्तिकरण को बढ़ावा देता है।

6. चुनौतियाँ और नीतिगत सुझाव

चुनौतियाँ * जलवायु परिवर्तन का प्रभाव * वित्तीय संसाधनों तक सीमित पहुँच * डिजिटल साक्षरता की कमी * बाजार प्रतिस्पर्धा
नीतिगत सुझाव * सार्वजनिक-निजी भागीदारी को बढ़ावा * डिजिटल साक्षरता अभियान * स्टार्टअप अनुदान और आसान ऋण * कृषि बीमा और मूल्य स्थिरीकरण तंत्र को मजबूत करना

7. निष्कर्ष: नवोन्मेषी कृषि प्रसार युवाओं को कृषि से जोड़ने का प्रभावी माध्यम है। यदि आधुनिक तकनीक, कौशल विकास और उद्यमिता समर्थन को समन्वित रूप से लागू किया जाए, तो कृषि को लाभकारी और सम्मानजनक व्यवसाय बनाया जा सकता है। युवाओं की सक्रिय भागीदारी से न केवल कृषि उत्पादकता बढ़ेगी, बल्कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था भी सशक्त और आत्मनिर्भर बनेगी। इस प्रकार, नवाचार, डिजिटल तकनीक और सहभागी प्रसार प्रणाली के माध्यम से कृषि में युवा शक्ति का समावेश भारत के सतत विकास की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम सिद्ध होगा।



प्रो. दीपक नरवरिया
(B.Sc. कृषि)

Mob. : 8887712163
8982873459

नरवरिया कृषि सेवा केन्द्र



रासायनिक एवं जैविक खाद, हाईब्रीड बीज
कीटनाशक दवाईयाँ, स्पेयर पम्प विक्रेता



इटवा होटल के सामने, पिछोर तिराहा, ग्वालियर रोड, डबरा



अनुज तोमर सस्य विज्ञान विभाग, छत्रपति शाहू जी महाराज विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

आशीष राव सस्य विज्ञान विभाग

अनुराग सिंह मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विभाग

मुस्कान सिन्हा सस्य विज्ञान विभाग

विनीत कुमार मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विभाग, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

परिचय: मानव विकास के साथ-साथ कृषि का भी विकास हुआ है। पारंपरिक कृषि में उर्वरकों के नियमित उपयोग के साथ-साथ पारंपरिक कृषि पद्धतियों का भी प्रयोग आवश्यक है जो फसल की वृद्धि, उपज, उत्पादकता और पोषण मूल्य में उल्लेखनीय वृद्धि कर सकती हैं। हरित क्रांति के युग से ही आधुनिक कृषि पद्धतियों के विकास में रासायनिक उर्वरकों ने एक अपरिहार्य भूमिका निभाई है मौजूदा प्रगति और प्रौद्योगिकी के साथ फसल उत्पादन और कृषि पद्धतियों में सुधार अपनी सीमा तक पहुँच गया है। भविष्य की अनुमानित आबादी को खिलाना लगभग असंभव होगा। इसलिए, सतत कृषि के लिए उन्नत अत्याधुनिक तकनीकों का उपयोग करके स्मार्ट कृषि पद्धतियों का विकास और अनुप्रयोग अत्यंत आवश्यक है। इसमें उच्च दक्षता और न्यूनतम कमियों वाले नए और नवोन्मेषी उर्वरकों के विकास की आवश्यकता शामिल है।

नैनो उर्वरक: नैनो उर्वरक ऐसे पोषक तत्व होते हैं जो नियंत्रित रिलीज और उसके बाद मिट्टी में धीमी गति से विसरण को सक्षम करने के लिए नैनोमैट्रियल के भीतर समाहित या लैपित होते हैं। नैनोस्केल उर्वरकों का उपयोग लीचिंग/अपवाह द्वारा पोषक तत्वों की हानि को कम करने और उनके तीव्र क्षरण और वाष्पशीलता को कम करने में मदद कर सकता है जिससे पोषक तत्वों की गुणवत्ता और मिट्टी की उर्वरता में वृद्धि होती है और दीर्घकालिक रूप से फसल उत्पादकता को बढ़ावा मिलता है नैनोफर्टिलाइजर या "नैनो-बायोफर्टिलाइजर" का उपयोग पर्यावरणीय खतरे को काफी हद तक कम कर सकता है। नैनोफर्टिलाइजर बीज अंकुरण, नाइट्रोजन चयापचय, प्रकाश संश्लेषण, प्रोटीन और कार्बोहाइड्रेट संश्लेषण और तनाव सहनशीलता को उत्तेजित करके फसल की पैदावार बढ़ा सकते हैं अन्य लाभों के अतिरिक्त, इन्हें मिट्टी में अपेक्षाकृत कम मात्रा में डालना पड़ता है जिससे इनका प्रयोग आसान हो जाता है और परिवहन लागत कम हो जाती है। नैनो तकनीक में नैनोमीटर पैमाने पर आकार और आकृति को प्रबंधित और नियंत्रित करके उपकरणों का संश्लेषण और अनुप्रयोग शामिल है। इसने नैनोसंरचित सामग्रियों को उर्वरकों के रूप में उपयोग करने का मार्ग प्रशस्त किया है, जिन्हें "स्मार्ट उर्वरक" कहा जाता है। नैनोउर्वरकों की संरचना कुशल पोषक तत्व अवशोषण, मृदा उर्वरता बहाली, अति उच्च अवशोषण, प्रकाश संश्लेषण में वृद्धि, उत्पादन में वृद्धि, मृदा विषाक्तता में कमी, अनुप्रयोग की आवृत्ति में कमी, पौधों के स्वास्थ्य में वृद्धि और पर्यावरणीय प्रदूषण में कमी को बढ़ावा दे सकती है

नैनो उर्वरकों के प्रकार: बाजार में उपलब्ध नैनोफर्टिलाइजर की विविधता दो मुख्य पहलुओं पर आधारित है: नैनोकण सामग्री और समाहित पोषक तत्व।

नैनो यूरिया: इसमें 4% नाइट्रोजन होता है, जो 20-50 नैनोमीटर आकार के कणों के रूप में होता है। यह 500 मिलीलीटर की बोतल में आता है और एक बोरी पारंपरिक यूरिया के बराबर काम करता है।

नैनो डीएपी: इसमें नाइट्रोजन और फास्फोरस का मिश्रण होता है

नैनो उर्वरक : फसल उत्पादन में नैनो उर्वरकों की भूमिका एवं लाभ

(8% N और 16% P), जो बीजों के अंकुरण और प्रारंभिक जड़ विकास को बढ़ावा देता है।

1. नैनोकण सामग्री के अनुसार:

अकार्बनिक नैनोकण: धातु ऑक्साइड (ZnO, Fe₂O₃, CuO): पोषक तत्वों के अवशोषण और तनाव सहनशीलता में सुधार करते हैं।

चिकनी मिट्टी (मॉटमोरिलोनाइट, इलाइट): ये धीरे-धीरे पोषक तत्व छोड़ती हैं और मिट्टी की नमी को नियंत्रित करती हैं।

मेसोपोरस सिलिकेट: ये पोषक तत्वों के अधिशोषण के लिए उपलब्ध सतह को बढ़ाते हैं।

कार्बनिक नैनोकण: जैवअपघटनीय पॉलिमर (पॉलीलैक्टोन, चिटोसैन): ये पोषक तत्वों को अपघटन से बचाते हैं और जैव अनुकूलता को बढ़ावा देते हैं।

नैनोइमल्शन (तेल, लिपिड): ये पौधों की कोशिकाओं में पोषक तत्वों की घुलनशीलता और प्रवेश को बेहतर बनाते हैं।

डॉइमर्स: ये पोषक तत्वों को नियंत्रित और सटीक रूप से मुक्त करने में सक्षम बनाते हैं।

2. एनकैप्सुलेटेड पोषक तत्व के अनुसार:

वृहद पोषक तत्व:

* **नाइट्रोजन (N):** यह पौधों की वृद्धि और विकास के लिए आवश्यक है।

* **फॉस्फोरस (P):** प्रकाश संश्लेषण और जड़ निर्माण के लिए मूलभूत तत्व।

* **पोटेशियम (K):** पानी और पोषक तत्वों के अवशोषण को नियंत्रित करता है और रोगों के प्रति प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाता है।

सूक्ष्म पोषक तत्व:

* **बोरॉन (B):** परागण और फल निर्माण के लिए आवश्यक।

* **आयरन (Fe):** यह प्रकाश संश्लेषण और कोशिकीय श्वसन में शामिल होता है।

जस्ता (Zn): वानस्पतिक वृद्धि और बीज उत्पादन के लिए आवश्यक।

मैंगनीज (Mn): प्रकाश संश्लेषण और नाइट्रोजन स्थिरीकरण में भाग लेता है।

कॉपर (Cu): प्रकाश संश्लेषण और कोशिकीय श्वसन के लिए महत्वपूर्ण।

मोलिब्डेनम (Mo): नाइट्रोजन स्थिरीकरण के लिए आवश्यक।

जैवउत्तेजक पदार्थ:

* **ऑक्सिन:** जड़ों और तनों की वृद्धि को बढ़ावा देते हैं।

* **जिबरेलिन:** तने की वृद्धि और पुष्पण को उत्तेजित करते हैं।

* **साइटोकिनिन:** कोशिका विभाजन और पत्ती के विकास को नियंत्रित करते हैं।

नैनो उर्वरकों से कृषि पद्धतियों में लाभ

कण का आकार: नैनोकणों का आकार आमतौर पर 1 से 100 नैनोमीटर के बीच होता है, जिससे वे पौधों की कोशिकाओं में अधिक कुशलता से प्रवेश कर पाते हैं और पोषक तत्वों का अवशोषण बढ़ाते हैं हमारे पास 600 नैनोमीटर तक के बड़े आकार के नैनोकण भी उपलब्ध हैं। कि वे कोशिका झिल्ली को कोई नुकसान नहीं पहुंचाते।

अधिक दक्षता: पोषक तत्वों को नैनोकणों में समाहित करने से पौधों द्वारा उनके उपयोग की दक्षता में सुधार होता है जिससे आवश्यक उर्वरक की खुराक को कम किया जा सकता है और पर्यावरणीय प्रभाव को कम किया जा सकता है।

पोषक तत्वों का संरक्षण: नैनोकण पोषक तत्वों को सूर्य के प्रकाश, तापमान और आर्द्रता जैसे पर्यावरणीय कारकों द्वारा होने वाले क्षरण से बचाते हैं, जिससे उनकी स्थिरता और पौधों हेतु उनकी उपलब्धता सुनिश्चित होती है।

उत्पादकता में वृद्धि: पौधों द्वारा पोषक तत्वों का कुशल उपयोग फसल की वृद्धि और उपज में वृद्धि करता है।

उर्वरक का कम उपयोग: पोषक तत्वों के नियंत्रित रिलीज से बार-बार उर्वरक डालने की आवश्यकता कम हो जाती है, जिससे लागत और पर्यावरणीय प्रभाव कम होता है।

मिट्टी की सेहत में सुधार: पोषक तत्वों के रिसाव में कमी से मिट्टी की उर्वरता बनाए रखने और पोषक तत्वों के प्रदूषण को कम करने में मदद मिलती है।

सतत कृषि: नैनो उर्वरकों का अधिक टिकाऊ, कुशल और पर्यावरण के अनुकूल कृषि हेतु एक प्रमुख उपकरण के रूप में स्थापित किया गया है।

॥ राधे-राधे ॥

Mob.: 9522754421
हरिकृष्णा 6265841386




कामतानाथ खाद एवं बीज भण्डार

हमारे यहाँ सभी प्रकार के खाद, बीज एवं उच्च कोटि के कीटनाशक दवाईयों के थोक व खेरीज विक्रेता

Email_ umashankarawat15101995@gmail.com

उमाशंकर

जवाहरगंज, पशु अस्पताल के पास, भितरवार रोड, डबरा



डॉ. विजय चंद्रा, डॉ. रामकुमार

डॉ. शिव पूजन यादव

(वैज्ञानिक)

डॉ. डी.पी. सिंह (वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष)

कृषि विज्ञान केंद्र, बसुली, महाराजगंज,

आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय,

कुमारगंज, अयोध्या-224229 (उ.प्र.)

दुधारू पशुओं के लिए संतुलित आहार का प्रबंधन



चित्र न. 1- गौशाला तथा तरल कैल्शियम का प्रदर्शन

दुधारू पशुओं के लिए संतुलित आहार का प्रबंधन पशुपालन की सफलता का एक महत्वपूर्ण आधार है, क्योंकि किसी भी पशु की उत्पादन क्षमता, स्वास्थ्य स्थिति तथा प्रजनन प्रदर्शन सीधे उसके पोषण स्तर पर निर्भर करते हैं। दूध उत्पादन एक ऊर्जा-प्रधान प्रक्रिया है, जिसके लिए पशु को पर्याप्त मात्रा में ऊर्जा, प्रोटीन, खनिज, विटामिन तथा स्वच्छ पानी की आवश्यकता होती है। यदि आहार संतुलित नहीं होता, तो पशुओं में कमजोरी, दुग्ध उत्पादन में कमी, प्रजनन संबंधी समस्याएँ तथा विभिन्न पोषणीय रोग उत्पन्न हो सकते हैं, जिससे पशुपालकों को आर्थिक हानि उठानी पड़ती है। वर्तमान समय में बढ़ती जनसंख्या और दूध की मांग को ध्यान में रखते हुए यह अत्यंत आवश्यक हो गया है कि दुधारू पशुओं को वैज्ञानिक पद्धति से संतुलित आहार प्रदान किया जाए। संतुलित आहार न केवल पशु के शरीर के रख-रखाव और वृद्धि के लिए आवश्यक होता है, बल्कि यह दूध की मात्रा और गुणवत्ता को भी बेहतर बनाता है। साथ ही, उचित आहार प्रबंधन से पशु की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है, जिससे वह विभिन्न बीमारियों का सामना बेहतर ढंग से कर सकता है। अतः दुधारू पशुओं के लिए संतुलित आहार का सही नियोजन और प्रबंधन अपनाकर पशुपालन को अधिक लाभकारी, टिकाऊ और सफल बनाया जा सकता है।

संतुलित आहार : संतुलित आहार वह आहार होता है जिसमें दुधारू पशु की आयु, शारीरिक भार, दुग्ध उत्पादन स्तर, कार्यभार तथा शारीरिक अवस्था (जैसे गर्भावस्था या दुग्धवस्था) के अनुसार सभी आवश्यक पोषक तत्व उचित मात्रा और सही अनुपात में उपलब्ध हों, ताकि पशु के शरीर की सभी क्रियाएँ सुचारु रूप से चल सकें। इस प्रकार के आहार में ऊर्जा प्रदान करने वाले तत्व (कार्बोहाइड्रेट एवं वसा), शरीर निर्माण एवं मरम्मत के लिए आवश्यक प्रोटीन, हड्डियों एवं दांतों की मजबूती के लिए खनिज तत्व (जैसे कैल्शियम एवं फॉस्फोरस), विभिन्न जैव-रासायनिक क्रियाओं के लिए विटामिन तथा जीवन क्रियाओं के लिए अतिव्यय स्वच्छ पानी शामिल होते हैं। संतुलित आहार न केवल पशु के शरीर के रख-रखाव और वृद्धि के लिए आवश्यक होता है, बल्कि यह दूध उत्पादन, प्रजनन क्षमता तथा रोग प्रतिरोधक क्षमता को भी प्रभावित करता है। यदि आहार में किसी एक पोषक तत्व की कमी या अधिकता होती है, तो यह पशु के स्वास्थ्य और उत्पादन पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकता है। इसलिए संतुलित आहार का मुख्य उद्देश्य पशु की सभी पोषण आवश्यकताओं की पूर्ति करते हुए अधिकतम उत्पादन प्राप्त करना तथा पशु को स्वस्थ, सक्रिय और उत्पादक बनाए रखना है।

संतुलित आहार के मुख्य घटक: दुधारू पशुओं के संतुलित आहार में विभिन्न प्रकार के पोषक तत्व शामिल होते हैं, जो उनके स्वास्थ्य, वृद्धि, दुग्ध उत्पादन तथा प्रजनन क्षमता के लिए अत्यंत आवश्यक होते हैं। इनमें सबसे प्रमुख घटक ऊर्जा प्रदान करने वाले तत्व होते हैं, जैसे कार्बोहाइड्रेट और वसा, जो पशु को दैनिक गतिविधियों और दूध उत्पादन के लिए आवश्यक ऊर्जा प्रदान करते हैं। ये मुख्यतः अनाज (मक्का, जौ) और चारे से प्राप्त होते हैं। प्रोटीन दूसरा महत्वपूर्ण घटक है, जो शरीर के ऊतकों के निर्माण, मरम्मत तथा एंजाइम और हार्मोन के निर्माण में सहायक होता है। इसके प्रमुख स्रोत खली (सरसों, सोयाबीन), दालों के अवशेष तथा हरे दलहन चारे होते हैं।

चारे के प्रकार एवं उनका महत्व: दुधारू पशुओं के संतुलित आहार में विभिन्न प्रकार के चारे का विशेष महत्व होता है, क्योंकि यही पशुओं को आवश्यक पोषक तत्व उपलब्ध कराते हैं और उनकी पाचन क्रिया को सुचारु

बनाए रखते हैं। सामान्यतः चारे को तीन प्रमुख वर्गों में बांटा जाता है—कृहरा चारा, सूखा चारा तथा सघन आहार (दाना)। हरा चारा जैसे बरसीम, ज्वार, मक्का, नेपियर घास आदि विटामिन, खनिज और नमी के अच्छे स्रोत होते हैं, जो पशुओं की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाते हैं और दूध की गुणवत्ता में सुधार करते हैं। सूखा चारा जैसे गेहूँ या धान का भूसा रेशेदार (फाइबर) तत्व प्रदान करता है, जो जठरांत्र को ठीक रखने के लिए अत्यंत आवश्यक है और पाचन क्रिया को संतुलित रखता है। इसके अतिरिक्त, सघन आहार या दाना मिश्रण जैसे मक्का, चोकर, खली आदि ऊर्जा और प्रोटीन के प्रमुख स्रोत होते हैं, जो विशेष रूप से उच्च दुग्ध उत्पादन वाले पशुओं के लिए जरूरी होते हैं।

दाना मिश्रण का प्रबंधन: दुधारू पशुओं में दाना मिश्रण का उचित प्रबंधन अत्यंत महत्वपूर्ण होता है, क्योंकि यह आहार का वह भाग है जो ऊर्जा और प्रोटीन की त्वरित पूर्ति करके दूध उत्पादन को सीधे प्रभावित करता है। दाना मिश्रण में सामान्यतः अनाज (मक्का, जौ, गेहूँ), खली (सरसों, सोयाबीन), चोकर, खनिज मिश्रण तथा नमक का संतुलित संयोजन किया जाता है, ताकि पशु को सभी आवश्यक पोषक तत्व उचित मात्रा में मिल सकें। दाना की मात्रा पशु के शरीर के वजन, दुग्ध उत्पादन तथा शारीरिक अवस्था के अनुसार निर्धारित की जानी चाहिए। सामान्यतः प्रति लीटर दूध उत्पादन पर लगभग 400-500 ग्राम दाना देना उपयुक्त माना जाता है। दाना हमेशा स्वच्छ, ताजा और फफूंद रहित होना चाहिए, क्योंकि खराब दाना पशुओं के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकता है। दाना देने का समय भी महत्वपूर्ण होता है।

खनिज मिश्रण एवं नमक का महत्व: दुधारू पशुओं के संतुलित आहार में खनिज मिश्रण एवं नमक का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान होता है, क्योंकि ये शरीर की अनेक आवश्यक जैव-रासायनिक एवं शारीरिक क्रियाओं को नियंत्रित करने में प्रमुख भूमिका निभाते हैं। खनिज तत्वों में कैल्शियम और फॉस्फोरस हड्डियों एवं दांतों की मजबूती, दूध के निर्माण तथा मांसपेशियों के समुचित कार्य के लिए आवश्यक होते हैं, जबकि आयरन, कॉपर, जिंक, कोबाल्ट, आयोडीन जैसे सूक्ष्म खनिज रक्त निर्माण, हार्मोन संतुलन तथा एंजाइम क्रियाओं में सहायक होते हैं। खनिजों की कमी से पशुओं में दूध उत्पादन में कमी, प्रजनन समस्याएँ, हड्डियों की कमजोरी तथा विभिन्न पोषण संबंधी रोग उत्पन्न हो सकते हैं। इसी प्रकार, नमक (सोडियम क्लोराइड) शरीर में जल संतुलन बनाए रखने, भूख बढ़ाने तथा तंत्रिका तंत्र के सुचारु संचालन में सहायक होता है।

पानी का प्रबंधन: दुधारू पशुओं के लिए पानी का उचित प्रबंधन अत्यंत महत्वपूर्ण होता है, क्योंकि दूध का लगभग 85-90 प्रतिशत भाग पानी से बना होता है और इसकी कमी सीधे दूध उत्पादन को प्रभावित करती है। पशुओं को हमेशा स्वच्छ, ताजा और पर्याप्त मात्रा में पानी उपलब्ध कराना चाहिए। एक दुधारू पशु को प्रतिदिन लगभग 50-80 लीटर या उससे अधिक पानी की आवश्यकता हो सकती है, जो उसके शरीर के वजन, दूध उत्पादन स्तर और मौसम पर निर्भर करती है। गर्मियों में पानी की आवश्यकता और भी बढ़ जाती है, इसलिए दिन में कई बार पानी पिलाना आवश्यक होता है।

आहार देने की विधि एवं समय: दुधारू पशुओं को आहार देने की विधि और समय का उचित प्रबंधन उनके स्वास्थ्य, पाचन क्रिया तथा दूध उत्पादन को

सीधे प्रभावित करता है। पशुओं को प्रतिदिन निश्चित समय पर आहार देना चाहिए, क्योंकि नियमितता से उनकी पाचन प्रणाली बेहतर कार्य करती है और वे अधिक उत्पादन देने में सक्षम होते हैं। सामान्यतः दिन में दो से तीन बार आहार देना उपयुक्त माना जाता है। आहार देने की सही विधि यह है कि पहले पशु को सूखा चारा (भूसा आदि) दिया जाए, उसके बाद हरा चारा और अंत में दाना मिश्रण दिया जाए, जिससे पाचन संतुलित रहता है और दाने का बेहतर उपयोग हो पाता है। दाना प्रायः दूध दुहने के समय या उसके तुरंत बाद देना चाहिए, ताकि पशु इसे आसानी से ग्रहण कर सके और दूध उत्पादन में वृद्धि हो।

विशेष अवस्थाओं में आहार प्रबंधन: दुधारू पशुओं की विभिन्न शारीरिक अवस्थाओं जैसे गर्भावस्था, दुग्धवस्था, प्रसव के बाद तथा बढ़ते हुए बछड़ों की अवस्था में आहार प्रबंधन का विशेष महत्व होता है, क्योंकि इन अवस्थाओं में पोषक तत्वों की आवश्यकता सामान्य से अधिक होती है। गर्भावस्था के दौरान भ्रूण के समुचित विकास के लिए पशु को अतिरिक्त ऊर्जा, प्रोटीन, खनिज एवं विटामिन युक्त संतुलित आहार देना आवश्यक होता है, विशेषकर गर्भावस्था के अंतिम तीन महीनों में पोषण पर अधिक ध्यान देना चाहिए। दुग्धवस्था में पशु को अधिक मात्रा में ऊर्जा और प्रोटीन की आवश्यकता होती है, क्योंकि दूध उत्पादन में शरीर से अधिक पोषक तत्व खर्च होते हैं। इसलिए दूध उत्पादन के अनुसार दाना मिश्रण देना चाहिए। प्रसव के बाद पशु कमजोर हो जाता है, इसलिए उसे सुपाच्य, पौष्टिक तथा खनिज युक्त आहार देना चाहिए, ताकि उसकी शारीरिक शक्ति शीघ्र लौट सके और दूध उत्पादन सामान्य बना रहे।

संतुलित आहार के लाभ: दुधारू पशुओं को संतुलित आहार देने से अनेक महत्वपूर्ण लाभ प्राप्त होते हैं, जो सीधे पशु के स्वास्थ्य, उत्पादन क्षमता तथा पशुपालक की आयु को प्रभावित करते हैं। संतुलित आहार से पशुओं को सभी आवश्यक पोषक तत्व उचित मात्रा में मिलते हैं, जिससे उनका शारीरिक विकास सही ढंग से होता है और वे स्वस्थ एवं सक्रिय बने रहते हैं। इसका सबसे बड़ा लाभ दुग्ध उत्पादन में वृद्धि के रूप में देखा जाता है, क्योंकि पर्याप्त ऊर्जा और प्रोटीन मिलने से पशु अधिक और गुणवत्तापूर्ण दूध देता है। इसके साथ ही, संतुलित आहार पशु की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है, जिससे विभिन्न रोगों का खतरा कम हो जाता है और उपचार पर होने वाला खर्च घटता है।

निष्कर्ष: दुधारू पशुओं के लिए संतुलित आहार का समुचित प्रबंधन पशुपालन की सफलता का मूल आधार है। उचित पोषण के माध्यम से न केवल पशुओं के स्वास्थ्य और दुग्ध उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है, बल्कि उनकी प्रजनन क्षमता और रोग प्रतिरोधक शक्ति को भी सुदृढ़ बनाया जा सकता है। संतुलित आहार में हरा एवं सूखा चारा, दाना मिश्रण, खनिज तत्व, विटामिन तथा पर्याप्त स्वच्छ पानी का सही समावेश आवश्यक होता है। साथ ही, पशु की अवस्था, उत्पादन स्तर और मौसम के अनुसार आहार में उचित परिवर्तन करना भी जरूरी है। यदि वैज्ञानिक तरीके से आहार प्रबंधन अपनाया जाए, तो पशुओं की उत्पादकता बढ़ती है, रोगों की संभावना कम होती है और पशुपालकों को अधिक आर्थिक लाभ प्राप्त होता है। अतः संतुलित आहार का सही नियोजन और क्रियान्वयन दुधारू पशुपालन को अधिक लाभकारी, टिकाऊ और सफल बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

आशीष रजक सस्य विज्ञान विभाग,
कृषि संकाय, प्रो. राजेन्द्र सिंह (रज्जू भैया)
विश्वविद्यालय, प्रयागराज (उ.प्र.)

डॉ. ललित कुमार सनोदिया सहायक
प्रोफेसर, कृषि संकाय, प्रो. राजेन्द्र सिंह (रज्जू
भैया) विश्वविद्यालय, प्रयागराज (उ.प्र.)

परिचय

कृषि विज्ञान में नई-नई तकनीकों, उन्नत बीजों, उर्वरकों और कीटनाशकों का विकास लगातार होता रहता है। इन नई खोजों को सीधे किसानों तक पहुँचाने से पहले उनकी प्रभावशीलता को जांचना आवश्यक होता है। इसी उद्देश्य से खेत (Field) में प्रयोगात्मक फसल उगाई जाती है जिसे "Experimental Crop" कहा जाता है।

प्रयोगात्मक फसल क्या है?

प्रयोगात्मक फसल वह फसल होती है जिसे वैज्ञानिक या शोधकर्ता किसी विशेष उद्देश्य के लिए उगाते हैं, जैसे-

नई बीज किस्म का परीक्षण

उर्वरकों के प्रभाव का अध्ययन
सिंचाई विधियों की तुलना
कीटनाशकों/रोग नियंत्रण के उपाय
फील्ड प्रयोग की विशेषताएँ
यह प्राकृतिक परिस्थितियों में किया जाता है
इसमें मिट्टी, जलवायु, वर्षा का वास्तविक प्रभाव शामिल होता है
परिणाम अधिक व्यावहारिक और भरोसेमंद होते हैं

फील्ड प्रयोग को सही ढंग से करने के लिए वैज्ञानिक डिजाइन का उपयोग किया जाता है-

- 1. RBD (Randomized Block Design)**
खेत को ब्लॉकों में बाँटा जाता है
हर ब्लॉक में सभी उपचार होते हैं
मिट्टी की असमानता को कम करता है
- 2. CRD (Completely Randomized Design)**
उपचार पूरी तरह से यादृच्छिक (random) तरीके से दिए जाते हैं
छोटे और समान खेतों के लिए उपयुक्त

प्रयोग करने की विधि

भूमि चयन : समान उपजाऊ खेत का चयन
लेआउट बनाना : प्लॉट्स और ब्लॉक्स का निर्धारण
उपचार देना : जैसे अलग-अलग उर्वरक मात्रा

फील्ड पर प्रयोगात्मक फसल (Experimental Crop)

पुनरावृत्ति (Replication) – हर उपचार को कई बार दोहराना
डेटा रिकॉर्ड करना :
ऊँचाई, उत्पादन, रोग आदि का डेटा

डेटा विश्लेषण

(Analysis)

फील्ड प्रयोग के परिणामों का विश्लेषण करने के लिए ANOVA (Analysis of Variance) का उपयोग किया जाता है। इससे यह पता चलता है कि कौन-सा उपचार वास्तव में प्रभावी है।

मौसम पर निर्भरता
सही प्रबंधन की आवश्यकता



लाभ

नई तकनीक की सही जानकारी मिलती है
उत्पादन बढ़ाने में मदद
किसानों के लिए बेहतर विकल्प
वैज्ञानिक शोध को मजबूती
सीमाएँ
समय और लागत अधिक लगती है



निष्कर्ष

फील्ड पर प्रयोगात्मक फसल कृषि अनुसंधान का आधार है। इसके माध्यम से नई तकनीकों को वास्तविक परिस्थितियों में परखा जाता है और सही परिणाम किसानों तक पहुँचाए जाते हैं। इससे कृषि अधिक वैज्ञानिक, उत्पादक और लाभदायक बनती है।





✍ कुमारी सुष्मिता कुमारी मौर्या

(शोध छात्रा) पादप रोग विज्ञान

✍ शालिनी सिंह (शोध छात्रा)

✍ काजल मिश्रा (शोध छात्रा)

✍ सुधांशु (शोध छात्र) चंदौली (उ.प्र.)

परिचय: पशुओं पर आधारित खेती वह प्रणाली है जिसमें कृषि कार्यों के साथ-साथ पशुपालन (जैसे गाय, भैंस, बकरी, मुर्गी आदि) को शामिल किया जाता है। यह खेती का एक महत्वपूर्ण अंग है, खासकर भारत जैसे देश में जहाँ ग्रामीण अर्थव्यवस्था का बड़ा हिस्सा इस पर निर्भर करता है।

पशु आधारित खेती की आवश्यकताएँ

1. **उचित नस्ल-** उच्च उत्पादकता के लिए अच्छी नस्ल के पशुओं का चयन जरूरी है।

2. **चारा एवं पोषण -** हरा चारा, सूखा चारा और संतुलित आहार पशुओं के स्वास्थ्य और उत्पादन के लिए आवश्यक है।

3. **स्वास्थ्य देखभाल-** नियमित टीकाकरण, साफ-सफाई और समय-समय पर पशु चिकित्सक की सलाह जरूरी है।

4. **आवास -** पशुओं के लिए साफ, हवादार और सुरक्षित शेड होना चाहिए।

5. **पानी की उपलब्धता -** स्वच्छ और पर्याप्त पानी हर समय उपलब्ध होना चाहिए।

6. **प्रशिक्षण एवं जानकारी -** किसानों को पशुपालन की आधुनिक तकनीकों की जानकारी होना जरूरी है।

पशु आधारित खेती का महत्त्व

1. **आय का अतिरिक्त स्रोत-** दूध, अंडा, मांस आदि बेचकर किसान अतिरिक्त आय प्राप्त करते हैं।

2. **जैविक खाद -** पशुओं का गोबर खेतों के लिए प्राकृतिक खाद का काम करता है, जिससे मिट्टी की उर्वरता बढ़ती है।

3. **रोजगार के अवसर-** ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर बढ़ते हैं।

4. **कृषि कार्यों में सहायक -** बैल आदि पशु खेत जोतने और परिवहन में मदद करते हैं (हालांकि अब मशीनें भी आ गई हैं)।

5. **पोषण सुरक्षा -** दूध, अंडा और मांस से प्रोटीन एवं पोषक तत्व मिलते हैं।

6. **जोखिम कम करना -** यदि फसल खराब हो जाए तो पशुपालन से आय बनी रहती है।

निष्कर्ष- पशुओं पर आधारित खेती एक टिकाऊ और लाभदायक कृषि प्रणाली है। यह न केवल किसानों की आय बढ़ाती है, बल्कि मिट्टी की गुणवत्ता सुधारने और ग्रामीण विकास में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

जीवामृत, नीमास्र और ब्रह्मास्र: बनाने की विधि, उपयोग और सावधानियाँ

परिचय- आज के समय में रासायनिक खेती के

पशुओं पर आधारित खेती आवश्यकताएं एवं महत्व और उनके अपशिष्ट से बनने वाले जैविक उर्वरक और लाभ

दुष्प्रभावों को देखते हुए किसान प्राकृतिक खेती की ओर बढ़ रहे हैं। प्राकृतिक खेती में जीवामृत, नीमास्र और ब्रह्मास्र बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये न केवल मिट्टी की उर्वरता बढ़ाते हैं बल्कि कीटों से भी फसलों की रक्षा करते हैं।

1. जीवामृत बनाने की विधि

सामग्री: * 10 किग्रा गोबर (देशी गाय का) * 10 लीटर गोमूत्र * 2 किग्रा गुड़ * 2 किग्रा बेसन या दाल का आटा * एक मुट्ठी स्थानीय मिट्टी * 200 लीटर पानी

तरीका

1. एक बड़े ड्रम में पानी भरें।
2. उसमें गोबर और गोमूत्र मिलाएं।
3. फिर गुड़ और बेसन डालें।
4. अंत में मिट्टी डालकर अच्छी तरह मिलाएं।
5. इसे 5-7 दिन तक छाया में रखें और रोज़ 2-3 बार हिलाएं।

उपयोग

- * मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने के लिए
 - * सूक्ष्मजीवों की संख्या बढ़ाने के लिए
 - * फसल की वृद्धि तेज करने के लिए
- सावधानियाँ** * केवल देशी गाय का गोबर और गोमूत्र उपयोग करें

- * धूप में न रखें
- * समय-समय पर हिलाना जरूरी है

2. नीमास्र * बनाने की विधि

सामग्री: * 5 किग्रा नीम की पत्तियाँ/फल * 5 लीटर गोमूत्र * 1 किग्रा गोबर * 100 लीटर पानी

तरीका

1. नीम की पत्तियों को कूट लें।
2. पानी में सभी सामग्री मिलाएं।
3. 24-48 घंटे तक छाया में रखें।
4. छानकर स्प्रे के लिए उपयोग करें।

उपयोग

- * कीट नियंत्रण (खासकर रस चूसने वाले कीट)
 - * फसल को रोगों से बचाना
- सावधानियाँ** * छिड़काव सुबह या शाम को करें * अधिक मात्रा में उपयोग न करें * ताजा घोल ही उपयोग करें

3. ब्रह्मास्र

बनाने की विधि

सामग्री- * नीम, धतूरा, लहसुन, मिर्च, आक (प्रत्येक 2-2 किग्रा) * 10 लीटर गोमूत्र

तरीका

1. सभी पत्तियों और सामग्री को कूट लें।
2. गोमूत्र में मिलाकर धीमी आंच पर उबालें।
3. ठंडा होने के बाद 48 घंटे तक ढककर रखें।
4. छानकर बोतल में भर लें।

उपयोग * तेज कीटनाशक के रूप में

* इल्ली, तना छेदक और अन्य कीटों पर प्रभावी

सावधानियाँ * उपयोग से पहले पानी में मिलाकर ही छिड़काव करें * सीधे पौधों पर अधिक मात्रा में न डालें * बच्चों और पशुओं से दूर रखें

निष्कर्ष- जीवामृत, नीमास्र और ब्रह्मास्र प्राकृतिक खेती के मुख्य स्तंभ हैं। इनके उपयोग से किसान कम लागत में अच्छी और सुरक्षित फसल प्राप्त कर सकते हैं। सही विधि और सावधानियों का पालन करने से इनका अधिकतम लाभ लिया जा सकता है। जैविक उर्वरक का उपयोग आज की खेती में बहुत महत्वपूर्ण होता जा रहा है, खासकर जब मिट्टी की गुणवत्ता और पर्यावरण दोनों को सुरक्षित रखना जरूरी हो। **नीचे खेतों में जैविक उर्वरकों से होने वाले मुख्य लाभ दिए गए हैं-**

1. **मिट्टी की उर्वरता में वृद्धि-** जैविक उर्वरक जैसे गोबर की खाद, वर्मी-कम्पोस्ट, जीवामृत आदि मिट्टी में आवश्यक पोषक तत्व (नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटैश) धीरे-धीरे छोड़ते हैं, जिससे मिट्टी की उर्वरता लंबे समय तक बनी रहती है।

2. **मिट्टी की संरचना में सुधार-** ये उर्वरक मिट्टी को भुरभुरा बनाते हैं, जिससे पानी और हवा का संचार बेहतर होता है और जड़ों का विकास अच्छा होता है।

3. **पानी धारण क्षमता बढ़ती है-** जैविक उर्वरक मिट्टी की जल धारण क्षमता बढ़ाते हैं, जिससे सिंचाई की जरूरत कम हो जाती है।

4. **सूक्ष्म जीवों की वृद्धि-** इन उर्वरकों से मिट्टी में लाभकारी सूक्ष्मजीव बढ़ते हैं, जो पौधों के लिए पोषक तत्व उपलब्ध कराने में मदद करते हैं।

5. **पर्यावरण के लिए सुरक्षित-** रासायनिक उर्वरकों के विपरीत, जैविक उर्वरक पर्यावरण को नुकसान नहीं पहुंचाते और न ही जल एवं वायु प्रदूषण करते हैं।

6. **फसलों की गुणवत्ता में सुधार-** जैविक उर्वरक से उगाई गई फसलें अधिक पौष्टिक, स्वादिष्ट और स्वास्थ्य के लिए सुरक्षित होती हैं।

7. **लागत में कमी-** अधिकांश जैविक उर्वरक (जैसे गोबर, कम्पोस्ट) किसान स्वयं तैयार कर सकते हैं, जिससे खेती की लागत कम होती है।

8. **दीर्घकालिक लाभ-** जैविक उर्वरक मिट्टी को लंबे समय तक उपजाऊ बनाए रखते हैं, जिससे भविष्य में भी अच्छी पैदावार मिलती है।

निष्कर्ष: जैविक उर्वरक न केवल मिट्टी और फसल के लिए लाभदायक हैं, बल्कि यह पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य के लिए भी सुरक्षित हैं। इसलिए किसानों को रासायनिक उर्वरकों के स्थान पर जैविक उर्वरकों का अधिक उपयोग करना चाहिए।



✍ शाडिणजय सिंह, संदीप चौहान
✍ अखिलेश यादव (शोध छात्र) कृषि प्रसार शिक्षा विभाग आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या-224229 (उ.प्र.)

✍ अर्गंतिका गुमा (शोध छात्र) कृषि प्रसार शिक्षा विभाग, सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)

✍ स्नेहा सिंह (सहायक प्राध्यापक) कृषि प्रसार शिक्षा विभाग, राष्ट्रीय किसान स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शामली (उ.प्र.)

प्रस्तावना

जलवायु परिवर्तन के बढ़ते प्रभावों ने कृषि प्रणाली को अस्थिर बना दिया है, जिससे उत्पादन, मिट्टी की उर्वरता और किसानों की आय पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। ऐसी स्थिति में कार्बन फार्मिंग और कृषि वानिकी जैसी सतत कृषि प्रणालियाँ अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो रही हैं। ये न केवल वातावरण से कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित कर मिट्टी में संग्रहित करती हैं, बल्कि कृषि प्रणाली को अधिक टिकाऊ और लाभकारी भी बनाती हैं। इन तकनीकों के प्रभावी प्रसार और अपनाने में प्रसार एजेंटों की भूमिका केंद्रीय होती है। यह लेख कार्बन फार्मिंग और कृषि वानिकी के संदर्भ में प्रसार एजेंटों की भूमिकाओं का विस्तृत वर्णन प्रस्तुत करता है।

1. परिचय: आज के समय में कृषि क्षेत्र जलवायु परिवर्तन, भूमि क्षरण और संसाधनों की कमी जैसी गंभीर समस्याओं का सामना कर रहा है। पारंपरिक कृषि पद्धतियाँ इन चुनौतियों से निपटने में पर्याप्त नहीं हैं। इसलिए कार्बन फार्मिंग और कृषि वानिकी जैसी नवीन और टिकाऊ तकनीकों की आवश्यकता महसूस की जा रही है। कार्बन फार्मिंग का मुख्य उद्देश्य वातावरण में मौजूद कार्बन डाइऑक्साइड को पौधों और मिट्टी के माध्यम से अवशोषित करके उसे संग्रहित करना है। वहीं कृषि वानिकी में फसलों के साथ-साथ वृक्षों और पशुपालन को एकीकृत किया जाता है, जिससे पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने के साथ-साथ किसानों की आय भी बढ़ती है।

इन तकनीकों के बारे में जानकारी किसानों तक पहुँचाना, उन्हें अपनाने के लिए प्रेरित करना और उनके कार्यान्वयन में सहायता करना प्रसार एजेंटों का मुख्य कार्य होता है।

2. कार्बन फार्मिंग और कृषि वानिकी का महत्व: कार्बन फार्मिंग और कृषि वानिकी का महत्व बहुआयामी है। ये केवल पर्यावरण संरक्षण तक सीमित नहीं हैं, बल्कि आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से भी अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। पर्यावरणीय दृष्टि से, ये तकनीकें वातावरण में ग्रीनहाउस गैसों की मात्रा को कम करने में सहायक हैं।

कार्बन फार्मिंग और कृषि वानिकी में प्रसार एजेंटों की प्रमुख भूमिकाएं



वृक्षों और फसलों के माध्यम से कार्बन का अवशोषण होता है, जिससे जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को कम किया जा सकता है। साथ ही, ये मिट्टी की संरचना और उर्वरता को भी सुधारते हैं।

आर्थिक दृष्टि से, कृषि वानिकी किसानों को अतिरिक्त आय के स्रोत प्रदान करती है, जैसे कि लकड़ी, फल, चारा और अन्य वन उत्पाद। कार्बन फार्मिंग के माध्यम से किसान कार्बन क्रेडिट प्राप्त कर सकते हैं, जिससे उनकी आय में वृद्धि होती है।

सामाजिक दृष्टि से, ये तकनीकें ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर बढ़ाती हैं और किसानों के जीवन स्तर में सुधार करती हैं।

3. प्रसार एजेंटों की प्रमुख भूमिकाएं

3.1 ज्ञान का प्रसार: प्रसार एजेंट किसानों और वैज्ञानिकों के बीच एक महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में कार्य करते हैं। वे किसानों को कार्बन फार्मिंग और कृषि वानिकी के सिद्धांतों, तकनीकों और लाभों के बारे में सरल भाषा में समझाते हैं। वे नई अनुसंधान आधारित जानकारी को किसानों तक पहुँचाते हैं, जिससे किसान आधुनिक तकनीकों को अपनाने के लिए प्रेरित होते हैं।

3.2 प्रशिक्षण और क्षमता निर्माण: प्रसार एजेंट किसानों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम, कार्यशालाएँ और फील्ड डेमोंस्ट्रेशन आयोजित करते हैं। इन कार्यक्रमों के माध्यम से किसानों को व्यावहारिक ज्ञान दिया जाता है, जैसे कि वृक्षों का चयन, रोपण विधि, फसल प्रबंधन और मिट्टी संरक्षण तकनीक। इससे किसानों की क्षमता विकसित होती है और वे नई तकनीकों को आत्मविश्वास के साथ अपनाते हैं।

3.3 तकनीकी मार्गदर्शन प्रदान करना: कार्बन फार्मिंग और कृषि वानिकी को अपनाने के लिए उचित तकनीकी जानकारी आवश्यक होती है। प्रसार एजेंट किसानों को उनकी भूमि, जलवायु और संसाधनों के अनुसार उपयुक्त फसल और वृक्षों का चयन करने में मदद करते हैं। वे मिट्टी प्रबंधन, जल संरक्षण और पोषण प्रबंधन से संबंधित सुझाव भी प्रदान करते हैं।

3.4 नवाचारों को प्रोत्साहित करना: प्रसार एजेंट

किसानों को नई तकनीकों और नवाचारों को अपनाने के लिए प्रेरित करते हैं। वे सफल किसानों के उदाहरण प्रस्तुत करते हैं और नवाचारों के लाभों को स्पष्ट करते हैं। इससे किसानों में जोखिम लेने की क्षमता बढ़ती है और वे नई विधियों को अपनाने के लिए तैयार होते हैं।

3.5 सरकारी योजनाओं से जोड़ना: सरकार द्वारा चलाई जा रही विभिन्न योजनाएँ, जैसे कि कृषि वानिकी प्रोत्साहन योजनाएँ और जलवायु अनुकूल कृषि कार्यक्रम, किसानों के लिए लाभकारी होती हैं। प्रसार एजेंट किसानों को इन योजनाओं की जानकारी देते हैं और उन्हें इनका लाभ उठाने में सहायता करते हैं।

3.6 कार्बन क्रेडिट के प्रति जागरूकता: कार्बन फार्मिंग का एक महत्वपूर्ण पहलू कार्बन क्रेडिट है। प्रसार एजेंट किसानों को कार्बन बाजार की जानकारी देते हैं और यह समझाते हैं कि वे किस प्रकार कार्बन क्रेडिट के माध्यम से अतिरिक्त आय अर्जित कर सकते हैं।

3.7 समस्या समाधान और परामर्श: किसानों को नई तकनीकों को अपनाने में कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है, जैसे कि संसाधनों की कमी, तकनीकी जटिलताएँ और बाजार की अनिश्चितता। प्रसार एजेंट इन समस्याओं का समाधान प्रदान करते हैं और किसानों को सही दिशा में मार्गदर्शन करते हैं।

3.8 निगरानी और मूल्यांकन: प्रसार एजेंट यह सुनिश्चित करते हैं कि किसान नई तकनीकों को सही तरीके से अपना रहे हैं या नहीं। वे समय-समय पर निरीक्षण करते हैं और आवश्यक सुधारों का सुझाव देते हैं। इससे तकनीकों का प्रभावी कार्यान्वयन सुनिश्चित होता है।

4. चुनौतियाँ: हालाँकि प्रसार एजेंटों की भूमिका महत्वपूर्ण है, फिर भी उन्हें कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। किसानों में जागरूकता की कमी, सीमित संसाधन, तकनीकी ज्ञान का अभाव और बाजार की अनिश्चितता प्रमुख समस्याएँ हैं। इसके अलावा, कई बार नीतिगत समर्थन की कमी भी इन तकनीकों के प्रसार में बाधा बनती है।

5. सुझाव : इन चुनौतियों को दूर करने के लिए प्रसार सेवाओं को अधिक सशक्त बनाने की आवश्यकता है। डिजिटल तकनीकों का उपयोग बढ़ाकर किसानों तक जानकारी तेजी से पहुँचाई जा सकती है। साथ ही, किसानों के लिए नियमित प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए जाने चाहिए और उन्हें वित्तीय सहायता प्रदान की जानी चाहिए।

6. निष्कर्ष : कार्बन फार्मिंग और कृषि वानिकी भविष्य की टिकाऊ कृषि के महत्वपूर्ण स्तंभ हैं। इन तकनीकों के सफल प्रसार और अपनाने में प्रसार एजेंटों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। वे किसानों को जागरूक, प्रशिक्षित और सक्षम बनाते हैं। यदि प्रसार सेवाओं को और मजबूत किया जाए, तो यह न केवल कृषि उत्पादन को बढ़ाएगा बल्कि पर्यावरण संरक्षण में भी महत्वपूर्ण योगदान देगा।



डॉ. रामकुमार (विषय वस्तु विशेषज्ञ)
डॉ. शिव पूजन यादव, डॉ. डी.पी. सिंह
वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केंद्र,
बसूली, महाराजगंज,
आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी
विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उ. प्र.)

कृषकों की आय सृजन का महत्वपूर्ण उद्यम: मधुमक्खी पालन

परिचय: भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहाँ अधिकांश जनसंख्या अपनी आजीविका के लिए खेती पर निर्भर है। बदलते समय में किसानों की आय बढ़ाना एक बड़ी चुनौती बन गया है। ऐसे में मधुमक्खी पालन एक ऐसा लाभकारी और टिकाऊ उद्यम बनकर उभरा है, जो कम लागत में अधिक लाभ प्रदान करता है। यह न केवल अतिरिक्त आय का स्रोत है, बल्कि फसलों की उत्पादकता बढ़ाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। मधुमक्खी पालन एक वैज्ञानिक और व्यावसायिक गतिविधि है, जिसमें मधुमक्खियों का पालन करके शहद, मोम, परागकण, रॉयल जेली आदि उत्पाद प्राप्त किए जाते हैं। इन उत्पादों की बाजार में अच्छी मांग है, जिससे किसानों को नियमित आय प्राप्त होती है। विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में, यह रोजगार का एक सशक्त माध्यम बन सकता है। मधुमक्खियाँ परागण की प्रक्रिया में अहम भूमिका निभाती हैं। जब मधुमक्खियाँ फूलों से रस एकत्र करती हैं, तो वे परागकणों को एक फूल से दूसरे फूल तक पहुँचाती हैं, जिससे फसलों की उपज और गुणवत्ता में वृद्धि होती है। सरसों, सूरजमुखी, फल और सब्जियों की फसलों में मधुमक्खियों द्वारा परागण से 20-30% तक उत्पादन बढ़ सकता है। इस प्रकार मधुमक्खी पालन खेती के साथ-साथ आय बढ़ाने का एक प्रभावी साधन है।



मधुमक्खी पालन के लिए अधिक भूमि की आवश्यकता नहीं होती और इसे छोटे स्तर से भी शुरू किया जा सकता है। किसान अपनी खेत की मेड़ों या बगीचों में मधुमक्खी बक्से स्थापित कर सकते हैं। इसके लिए सरकार और विभिन्न कृषि संस्थानों द्वारा प्रशिक्षण और आर्थिक सहायता भी उपलब्ध कराई जाती है, जिससे नए उद्यमियों को प्रोत्साहन मिलता है। इसलिए छोटे और सीमांत किसान भी इसे आसानी से अपना सकते हैं। साथ ही, यह पर्यावरण के अनुकूल और टिकाऊ उद्यम है, जो जैव विविधता को बनाए रखने में भी सहायक है। वर्तमान में शहद और अन्य मधुमक्खी उत्पादों की बढ़ती मांग के कारण यह उद्यम न केवल ग्रामीण रोजगार का सशक्त माध्यम बन रहा है, बल्कि किसानों की आय बढ़ाने में भी महत्वपूर्ण योगदान दे रहा है।

आय सृजन में मधुमक्खी पालन की भूमिका: मधुमक्खी पालन किसानों की आय बढ़ाने का एक अत्यंत प्रभावी और टिकाऊ माध्यम है, जो प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों प्रकार से आर्थिक लाभ प्रदान करता है। प्रत्यक्ष रूप से, किसान मधुमक्खियों से प्राप्त होने वाले उत्पाद जैसे शहद, मोम, रॉयल जेली, परागकण और प्रोपोलिस को बाजार में बेचकर अच्छी आय अर्जित कर सकते हैं, क्योंकि इन उत्पादों की मांग घरेलू एवं अंतरराष्ट्रीय स्तर पर लगातार बढ़ रही है। शहद का उपयोग खाद्य पदार्थों, औषधियों और सौंदर्य प्रसाधनों में व्यापक रूप से किया जाता है, जिससे इसका व्यापारिक महत्व और भी बढ़ जाता है। अप्रत्यक्ष रूप से, मधुमक्खियाँ फसलों के परागण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं, जिससे फसलों की उपज और गुणवत्ता में 20-40% तक वृद्धि हो सकती है। यह विशेष रूप से तिलहन, दलहन, फल एवं सब्जी फसलों के लिए अत्यंत लाभकारी है, जिससे किसानों को बेहतर उत्पादन और अधिक लाभ प्राप्त

होता है। मधुमक्खी पालन की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसे कम पूंजी और सीमित संसाधनों के साथ भी शुरू किया जा सकता है, जिससे छोटे और सीमांत किसानों के लिए यह एक आदर्श पूरक व्यवसाय बन जाता है। इसके अतिरिक्त, यह उद्यम ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर भी उत्पन्न करता है और किसानों को वर्षभर आय का स्रोत प्रदान करता है। यदि इसे वैज्ञानिक तरीके से अपनाया जाए और उचित प्रबंधन किया जाए, तो मधुमक्खी पालन न केवल किसानों की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करता है, बल्कि कृषि प्रणाली को उत्पादकता और स्थिरता को भी बढ़ावा देता है।

परागण में मधुमक्खियों का महत्व: मधुमक्खियाँ प्राकृतिक परागणकर्ताओं में सबसे महत्वपूर्ण मानी जाती हैं और कृषि उत्पादन में इनकी भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। जब मधुमक्खियाँ फूलों से रस (नेक्टर) और परागकण एकत्र करने के लिए एक फूल से दूसरे फूल पर जाती हैं, तो वे अनजाने में परागकणों का स्थानांतरण करती हैं, जिससे निषेचन की प्रक्रिया पूरी होती है और फल एवं बीजों का निर्माण होता है। इस प्रकार, मधुमक्खियाँ फसलों की उत्पादकता, गुणवत्ता और समानता को बढ़ाने में महत्वपूर्ण योगदान देती हैं। विशेष रूप से सरसों, सूरजमुखी, तिलहन, फलदार वृक्षों (जैसे आम, सेब) तथा सब्जी फसलों में मधुमक्खियों द्वारा परागण से उपज में 20-40% या उससे अधिक वृद्धि देखी गई है। इसके अलावा, मधुमक्खियों द्वारा परागण से फलों का आकार, वजन, स्वाद और बीजों की गुणवत्ता भी बेहतर होती है, जिससे बाजार मूल्य में वृद्धि होती है। मधुमक्खियाँ अन्य परागणकर्ताओं की तुलना में अधिक कुशल होती हैं क्योंकि वे एक ही प्रजाति के फूलों पर बार-बार जाती हैं, जिससे परागण की दक्षता बढ़ती है। आधुनिक कृषि प्रणाली में, जहाँ रासायनिक कीटनाशकों और पर्यावरणीय परिवर्तन के कारण प्राकृतिक परागणकर्ताओं की संख्या घट रही है, वहाँ मधुमक्खी पालन के माध्यम से नियंत्रित परागण सेवाएँ प्रदान करना अत्यंत आवश्यक हो गया है। इस प्रकार, मधुमक्खियाँ न केवल जैव विविधता के संरक्षण में सहायक हैं, बल्कि खाद्य सुरक्षा और किसानों की आय वृद्धि में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

मधुमक्खी पालन के लाभ: मधुमक्खी पालन एक बहुआयामी और अत्यंत लाभकारी उद्यम है, जो किसानों को आर्थिक, कृषि एवं पर्यावरणीय तीनों स्तरों पर लाभ प्रदान करता है। सबसे प्रमुख लाभ यह है कि इसमें कम लागत और सीमित संसाधनों के साथ भी अधिक आय प्राप्त की जा सकती है, जिससे यह छोटे और सीमांत किसानों के लिए विशेष रूप से उपयुक्त बनता है। मधुमक्खियों से प्राप्त होने वाले उत्पाद जैसे शहद, मोम, रॉयल जेली, परागकण और प्रोपोलिस की बाजार में अच्छी मांग होती है, जिससे किसानों को नियमित और अतिरिक्त आय का स्रोत मिलता है। इसके अलावा, मधुमक्खियाँ फसलों के परागण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाकर उनकी उपज और गुणवत्ता में उल्लेखनीय वृद्धि करती हैं, जिससे कृषि उत्पादन में 20-40% तक बढ़ोतरी संभव होती है। यह उद्यम पर्यावरण के अनुकूल है, क्योंकि यह जैव विविधता के संरक्षण और पारिस्थितिक संतुलन को बनाए रखने में सहायक होता है। मधुमक्खी पालन से ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर भी उत्पन्न होते हैं, जिससे बेरोजगारी में कमी आती है और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूती मिलती है। साथ ही, यह उद्यम भूमि पर निर्भर नहीं है, इसलिए इसे कहीं भी आसानी से शुरू किया जा सकता है। उचित प्रशिक्षण और वैज्ञानिक प्रबंधन के साथ मधुमक्खी पालन किसानों के लिए एक स्थायी, सुरक्षित और दीर्घकालिक आय का साधन सिद्ध हो सकता है।

आवश्यक प्रबंधन एवं सावधानियाँ: मधुमक्खी पालन में सफलता प्राप्त करने के लिए उचित प्रबंधन एवं आवश्यक सावधानियों का पालन करना अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह एक संवेदनशील और वैज्ञानिक उद्यम है। सबसे पहले, मधुमक्खी बक्से (हाइव) को ऐसे स्थान पर स्थापित करना चाहिए जहाँ पर्याप्त मात्रा में पुष्प स्रोत उपलब्ध हों, स्वच्छ जल की व्यवस्था हो तथा तेज हवा, अत्यधिक धूप और वर्षा से सुरक्षा मिल सके। मधुमक्खियों के स्वास्थ्य की नियमित निगरानी करना आवश्यक है, ताकि किसी भी प्रकार के रोग एवं परजीवियों (जैसे वैसेआ माइट) का समय पर नियंत्रण किया जा सके। छत्तों की समय-समय पर जांच, रानी मधुमक्खी की सक्रियता सुनिश्चित करना, तथा कमजोर कॉलोनियों को मजबूत बनाना भी प्रबंधन का महत्वपूर्ण भाग है।

सरकारी योजनाएँ एवं समर्थन: मधुमक्खी पालन को प्रोत्साहित करने के लिए केंद्र एवं राज्य सरकारें अनेक योजनाएँ और समर्थन कार्यक्रम संचालित कर रही हैं, जिनका उद्देश्य किसानों की आय बढ़ाना, रोजगार के अवसर सृजित करना और कृषि उत्पादकता में सुधार करना है। भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय मधुमक्खी एवं शहद मिशन 'NBHM' के तहत मधुमक्खी पालन को बढ़ावा दिया जा रहा है, जिसमें मधुमक्खी बक्से, उपकरणों और प्रशिक्षण के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है। इसके अलावा खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग 'KVIC' भी 'हनी मिशन' के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में मधुमक्खी पालन को प्रोत्साहित कर रहा है, जिसके अंतर्गत किसानों को मधुमक्खी बक्से, कॉलोनियाँ और प्रशिक्षण उपलब्ध कराया जाता है। कई राज्य सरकारें भी अपने-अपने स्तर पर सब्सिडी, तकनीकी मार्गदर्शन और प्रशिक्षण कार्यक्रम संचालित कर रही हैं। राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक 'NABARD' द्वारा भी मधुमक्खी पालन के लिए ऋण सुविधा एवं वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है, जिससे किसान आसानी से इस उद्यम को शुरू कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त, कृषि विज्ञान केंद्र 'KVSSs' और विभिन्न कृषि विश्वविद्यालयों द्वारा समय-समय पर प्रशिक्षण कार्यक्रम, कार्यशालाएँ और प्रदर्शन आयोजित किए जाते हैं, जिससे किसानों को आधुनिक तकनीकों और वैज्ञानिक प्रबंधन की जानकारी मिलती है। इन सभी योजनाओं और सहयोग के माध्यम से मधुमक्खी पालन को एक सशक्त, लाभकारी और स्थायी उद्यम के रूप में विकसित किया जा रहा है, जो किसानों की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

निष्कर्ष: निष्कर्षतः, मधुमक्खी पालन कृषकों की आय सृजन का एक अत्यंत प्रभावी, टिकाऊ और पर्यावरण-अनुकूल उद्यम है, जो कम लागत में अधिक लाभ प्रदान करने की क्षमता रखता है। यह न केवल शहद, मोम, रॉयल जेली और अन्य उत्पादों के माध्यम से प्रत्यक्ष आय उपलब्ध कराता है, बल्कि फसलों के परागण में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाकर कृषि उत्पादन और गुणवत्ता में भी उल्लेखनीय वृद्धि करता है। विशेष रूप से छोटे और सीमांत किसानों के लिए यह एक आदर्श सहायक व्यवसाय है, जिसे सीमित संसाधनों और कम स्थान में भी आसानी से अपनाया जा सकता है। साथ ही, सरकार द्वारा प्रदान की जा रही विभिन्न योजनाएँ, प्रशिक्षण और वित्तीय सहायता इस उद्यम को और अधिक सुलभ और लाभकारी बनाती हैं। हालांकि, इसमें सफलता प्राप्त करने के लिए वैज्ञानिक प्रबंधन, उचित देखभाल और जागरूकता आवश्यक है। यदि मधुमक्खी पालन को आधुनिक तकनीकों और समुचित प्रशिक्षण के साथ अपनाया जाए, तो यह न केवल किसानों की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करेगा, बल्कि ग्रामीण विकास, रोजगार सृजन और पर्यावरण संरक्षण में भी महत्वपूर्ण योगदान देगा।



डॉ. शिव पूजन यादव, डॉ. रामकुमार
(वैज्ञानिक)

डॉ. डी. पी. सिंह एवं डॉ. विजय चन्द्रा
वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केंद्र,
बसुली, महाराजगंज, आचार्य नरेंद्र देव कृषि
एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज,
अयोध्या-224229 (उ. प्र.)

प्रत्येक किसान यह अपेक्षा करता है कि उसकी जोत के सम्पूर्ण क्षेत्र में अच्छी गुणवत्ता वाली अधिक से अधिक उपज प्राप्त हो। प्रारंभ में जब रासायनिक उर्वरक उपलब्ध नहीं थे, खेती में जैविक खादों का प्रयोग मुख्य रूप से किया जाता था जिससे कृषि उत्पादन अपेक्षित स्तर तक नहीं पहुँच पाता था, परन्तु 60 के दशक में जब हरित क्रांति का उद्भव हुआ, उर्वरकों का धीरे-धीरे प्रयोग बढ़ता गया जिससे उत्पादन में आशातीत वृद्धि हुई। उत्पादन बढ़ने के साथ साथ रासायनिक खादों की खपत में भी खूब बेहताशा वृद्धि हुई। 1951 के दशक में जहां हमारी खपत 10 किलो प्रति हेक्टेयर थी, वह आज 160 किलो प्रति हेक्टेयर को भी पार कर चुकी है। प्रारंभ में प्रमुख पोषक तत्वों में केवल नत्रजनिक उर्वरकों का प्रयोग हुआ लेकिन धीरे-धीरे फास्फेटिक उर्वरकों के महत्व को समझते हुए इनका प्रयोग भी होने लगा, परन्तु अन्य आवश्यक पोषक तत्वों यथा मैग्नीशियम, सल्फर, जिंक, आयरन, कापर, मैंगनीज, मलिनबेनम तथा बोरोन एवं क्लोरिन की मिट्टी में कमी होती रही फलस्वरूप इन तत्वों की पौधों को आवश्यकतानुसार उपलब्धता न होने से अधिकांश क्षेत्रों में उत्पादन में ठहराव आ गया तथा उत्पादन में कमी भी देखी गई। मृदा के जीवांश में लगातार हो रहे ह्रास से मृदा में भौतिक, रासायनिक एवं जैविक क्रियाओं में इस प्रकार परिवर्तन हुआ कि देश की बढ़ती आबादी के सापेक्ष खादनोत्पादन पर प्रश्नचिह्न लग गया। हाल के अनुसन्धान में पाया गया कि गोबर की खाद, हरी खाद या गेहूँ के भूसे द्वारा कुल पोषक तत्वों के 25 से 50 प्रतिशत आपूर्ति से फसल प्रणाली की उपज में वृद्धि होती है तथा उर्वरता बनी रहती है।

आवश्यक पोषक तत्व- फसलों के सम्पूर्ण विकास के लिए पौधों को 17 पोषक तत्वों की आवश्यकता पड़ती है। इनमें से तीन पोषक तत्व कार्बन, हाइड्रोजन व ऑक्सीजन हवा तथा जल से प्राप्त होती है। इसके अलावा अन्य पोषक तत्व नत्रजन, फॉस्फोरस, पोटेश, कैल्सियम, मैग्नीशियम, सल्फर आयरन, क्लोरिन, मैंगनीज, जिंक, कॉपर, बोरोन, मॉलिनबेनम, निकिल पौधे जमीन से प्राप्त कर लेते हैं। मिट्टी में इन सभी पोषक तत्वों की पर्याप्त मात्रा उपलब्ध होनी चाहिए, इसलिए इन सभी तत्वों की समानुपातिक मात्रा को बनाये रखने हेतु जमीन में खाद एवं उर्वरक डालने की जरूरत पड़ती है।

पोषक तत्व प्रबंधन क्यों ?

1. **फसल उत्पादन और उपज बढ़ाने के लिए** - पौधों को 17 आवश्यक पोषक तत्वों की जरूरत होती है। इनकी कमी से विकास रुक जाता है, पत्तियां पीली पड़ जाती हैं और उपज घटती है। सही प्रबंधन से फसल की उपज 10-15% तक बढ़ सकती है और उत्पाद की गुणवत्ता (स्वाद, पोषण मूल्य) बेहतर होती है।

2. **मिट्टी की उर्वरता और स्वास्थ्य बनाए रखने के लिए**- हरित क्रांति के बाद रासायनिक उर्वरकों के अत्यधिक उपयोग से मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ कम हो गए हैं, मिट्टी की संरचना बिगड़ रही है और सूक्ष्मजीव मर रहे हैं। पोषक तत्व प्रबंधन मिट्टी में ह्यूमस बढ़ाता है, जल

एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन की आवश्यकता एवं महत्व

धारण क्षमता सुधारता है और लंबे समय तक मिट्टी को उपजाऊ बनाए रखता है। इससे मिट्टी की थकान रुकती है।

3. **लागत बचत और आर्थिक लाभ के लिए** - बिना सोचे-समझे उर्वरक डालने से बहुत सारा पैसा बर्बाद होता है (नाइट्रोजन का 40-60% तक फसल द्वारा नहीं उपयोग होता)। सही प्रबंधन से उर्वरक की खपत 10-30% कम हो सकती है, जिससे किसान की लागत घटती है और मुनाफा बढ़ता है।

4. **पर्यावरण संरक्षण के लिए** - अत्यधिक नाइट्रोजन और फास्फोरस से जल प्रदूषण (नाइट्रेट प्रदूषण, यूट्रोफिकेशन) होता है, जिससे नदियां-तालाबों में शैवाल बढ़ जाते हैं और जल जीवन प्रभावित होता है। सही प्रबंधन से पोषक तत्वों का रिसाव (leaching/runoff) कम होता है, वायु प्रदूषण घटता है और ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन भी नियंत्रित रहता है।

5. **टिकाऊ खेती के लिए**- भविष्य में बढ़ती जनसंख्या और घटते संसाधनों में खाद्य सुरक्षा बनाए रखने के लिए जरूरी है। यह जैविक खेती और रासायनिक खेती के बीच संतुलन बनाता है, मिट्टी के प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करता है।

संक्षेप में कारण * फसल को पोषण की सही आपूर्ति? स्वस्थ पौधा? अधिक उपज * मिट्टी की उर्वरता का संतुलन? लंबे समय तक उत्पादकता * संसाधनों का कुशल उपयोग? कम लागत, कम बर्बादी * पर्यावरण की रक्षा? स्वच्छ जल, स्वस्थ मिट्टी, कम प्रदूषण

व्यावहारिक सुझाव * हमेशा 'मिट्टी परीक्षण' करवाएं और उसके आधार पर खाद डालें। * रासायनिक उर्वरक जैविक खाद (गोबर की खाद, कपोस्ट, वर्मीकंपोस्ट) फसल अवशेष का संयोजन करें। * 4R सिद्धांत अपनाएं- (सही स्रोत), (सही मात्रा), (सही समय), (सही जगह)।

समेकित पोषक तत्व का प्रबंधन- पोषक तत्वों के दो या दो से अधिक स्रोत (रासायनिक उर्वरक, हरीखाद, जैविकखाद एवं जीवाणु खाद) का संतुलित, समुचित एवं समयानुकूल प्रयोग कर खाद्यान्न फसलों, सब्जियों, फूल-फल एवं औषधीय फसलों से उच्च उत्पादकता निरंतर पाने की प्रबंधन तकनीक जिससे मृदा एवं पर्यावरण को हानि न पहुंचे "समेकित पोषक तत्व प्रबंधन" कहलाता है।

पोषक तत्व प्रबंधन का मूल सिद्धांत: मिट्टी में पोषक तत्वों का संतुलन इस प्रकार किया जाये कि पौधे की जरूरत एवं मांग के अनुसार सभी आवश्यक तत्व उपलब्ध होते रहें, जिससे अधिक से अधिक उपज मिल सके तथा भूमि का स्वास्थ्य भी बरकरार रहे। इसके लिए आवश्यकतानुसार कार्बनिक, अकार्बनिक स्रोतों से फसलों को सभी तत्व निश्चित अनुपात में उपलब्ध रहे। सभी तत्वों का पौधों के अंदर अलग-अलग कार्य एवं महत्व है, जो कि विभिन्न अवस्थाओं में पूर्ण होता है। कोई एक तत्व दूसरे तत्व का पूरक नहीं है। भूमि में किसी भी तत्व का संतुलन बिगड़ने पर एक-दूसरे तत्व की उपलब्धता पर फर्क पड़ता है तथा उत्पादन में भी कमी होती है।

एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन से लाभ

क. अधिकतम पैदावार प्राप्त करना एवं पोषक तत्वों को बर्बादी से बचना। ख. मृदा की उत्पादकता एवं स्वास्थ्य को बनाये रखना। ग. गुणवत्तापूर्ण खाद्यान्न उत्पादन तथा वातावरण की विपरीत परिस्थितियों से बचाव। घ. कीड़े-मकोड़ों के प्रभाव को प्राकृतिक तौर पर कम करना तथा लाभ/लागत अनुपात में वृद्धि।

कृषि में एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन हेतु सुझाव

क. मिट्टी परीक्षण के आधार पर ही उर्वरकों एवं जैविक खादों

का प्रयोग करें। ख. दलहनी फसलों में राइजोबियम कल्चर का प्रयोग अवश्य करें। ग. धान व गेहूँ के फसल-चक्र में सनई/ढेंचे की हरी खाद का प्रयोग करें तथा फसल चक्र में परिवर्तन करें। घ. आवश्यकतानुसार उपलब्धता के आधार पर गोबर तथा कूड़ा-करकट का प्रयोग कर कम्पोस्ट बनाई जाए। ङ. खेत में फसल अवशिष्ट जैविक पदार्थों को मिट्टी में मिला दिया जाए। च. विभिन्न प्रकार के जैव उर्वरकों तथा नत्रजनिक संश्लेषी फास्फेट को घुलनशील बनाने वाले बैक्टीरियल अल्ट्रा तथा फंगल बायोफर्टिलाइजर का प्रयोग करें। छ. कार्बनिक जीवांश एवं अकार्बनिक उर्वरकों का संतुलित उपयोग करें।

एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन के अवयव

क. उर्वरक ख. जैविक खाद 1. कम्पोस्ट, एफवाईएम, केचुए की खाद, 2. हरीखाद, 3. फसलों के अवशिष्ट, 4. खली (रेड़ी, महुआ, करंज, नीम इत्यादि), 5. अजोला

ग. जीवाणु खाद, 1. राइजोबियम (दलहनी फसलों के लिए), 2. नील हरित शैवाल, 3. अजोसपैरिलम, 4. अजोटोबक्टेरा, 5. फास्फेट गोलक जीवाणु

फसलों में जैविक खाद एवं फसलों के अवशिष्ट का महत्व

फसलों में जैविक खाद एवं फसल अवशेष का महत्व बहुत अधिक है। ये दोनों टिकाऊ कृषि (सस्टेनेबल एग्रीकल्चर) के प्रमुख आधार हैं, जो मिट्टी की उर्वरता बनाए रखते हैं, फसल उत्पादन बढ़ाते हैं और पर्यावरण की रक्षा करते हैं। जैविक खाद पशु अपशिष्ट (जैसे गोबर की खाद), पौधों के अवशेष, कपोस्ट, हरी खाद, वर्मीकंपोस्ट आदि से बनाई जाती है। यह रासायनिक उर्वरकों का प्राकृतिक विकल्प है। वही फसल अवशेष (क्रॉप रेसिड्यू) जैसे गेहूँ, धान, मक्का आदि फसलों के डंठल, पत्तियां, भूसू आदि शामिल हैं। इन्हें खेत में मिलाना या कपोस्ट बनाना बहुत फायदेमंद है। इन्हें जलाना हानिकारक है। **जैविक खाद एवं फसलों के अवशिष्ट फसलों को मुख्य, द्वितीयक एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों को प्रदान करते हैं, फसलों में इनका महत्व निम्न है-**

क. पोषक तत्वों के भंडारीकरण में सहायक। ख. मिट्टी में जीवांश की मात्रा में वृद्धि। ग. मिट्टी में पोषक तत्वों के निष्कालन को रोकना। घ. मिट्टी के भौतिक गुणों जैसे- जलधारण क्षमता, आक्सीजन का आवागमन, मिट्टी के भारीपन में कमी करना, मिट्टी को गर्म रखना इत्यादि के सुधर में सहायक। ङ. मिट्टी के रासायनिक गुणों में सुधार में सहायक। च. मिट्टी के जीवाणु जनित गुणों का विकास करना तथा उर्वरकों की दक्षता में वृद्धि करना।

निष्कर्ष: समेकित पोषक तत्व प्रबंधन कृषि में एक सतत और संतुलित तरीका है, जिसमें 'जैविक', 'रासायनिक' और 'जैव' (बायोलॉजिकल) पोषक स्रोतों का एकीकृत उपयोग किया जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य मिट्टी की उर्वरता बनाए रखना, फसलों को पर्याप्त पोषक तत्व उपलब्ध कराना, अधिक उत्पादन प्राप्त करना और पर्यावरण की रक्षा करना है। समेकित पोषक तत्व प्रबंधन, फसलों की जरूरत के अनुसार पोषक तत्वों की आपूर्ति सुनिश्चित करता है, जिससे रासायनिक उर्वरकों का अत्यधिक उपयोग कम होता है और मिट्टी की सेहत बनी रहती है। मिट्टी की उर्वरता निरंतर बनाए रखने के लिए मिट्टी सुधारक का समन्वित उपयोग मिट्टी जाँच के आधार पर संतुलित मात्र में प्रयोग से फसल का उत्पादन एवं उत्पादकता में निरंतरता बनाकर ही खाद्यान्न उत्पादन एवं कुपोषण की समस्या से निदान पाया जा सकता है।



श्री खेता राम सहायक आचार्य (वृक्षायुर्वेद)

डॉ. मयूख शर्मा सहायक आचार्य

प्रो. सुमित नथानी विभागाध्यक्ष

वृक्षायुर्वेद विभाग, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर
मानद विश्वविद्यालय, आयुष मंत्रालय, भारत सरकार

भूमिका

वृक्षायुर्वेद, आयुर्वेद की एक महत्वपूर्ण शाखा है, जो पौधों के स्वास्थ्य, वृद्धि, रोग प्रबंधन एवं संरक्षण से संबंधित पारंपरिक ज्ञान को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से प्रस्तुत करती है। वर्तमान समय में वैश्विक स्तर पर औषधीय पादपों की मांग में तीव्र वृद्धि, पर्यावरणीय असंतुलन, जैव विविधता का क्षरण एवं रासायनिक कृषि के दुष्प्रभावों ने वृक्षायुर्वेद के महत्व को पुनः स्थापित किया है।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में वृक्षायुर्वेद का महत्व

प्राकृतिक एवं सतत कृषि प्रणाली

वृक्षायुर्वेद जैविक एवं प्राकृतिक खेती को बढ़ावा देता है, जिसमें गो-आधारित उत्पाद, वनस्पति अर्क, एवं पारंपरिक उपचार विधियों का प्रयोग किया जाता है।

औषधीय पादपों की बढ़ती मांग

आयुष प्रणाली के विस्तार, हर्बल उद्योग, फार्मास्यूटिकल कंपनियों एवं निर्यात बाजार में वृद्धि के कारण औषधीय पौधों की मांग निरंतर बढ़ रही है।

पर्यावरण संरक्षण एवं जैव विविधता

वृक्षायुर्वेद स्थानीय प्रजातियों के संरक्षण, पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने एवं जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने में सहायक है।

औषधीय पादपों के संवर्धन, संरक्षण एवं विकास में वृक्षायुर्वेद की भूमिका

1. संवर्धन (Cultivation)

बीज शोधन (Seed treatment) एवं अंकुरण तकनीकें

जैविक खाद (जैसे जीवामृत, घनजीवामृत) का उपयोग

वृक्षायुर्वेदिक कीटनाशक एवं रोग नियंत्रण विधियाँ
मृदा स्वास्थ्य सुधार एवं पोषण प्रबंधन

2. संरक्षण (Conservation)

दुर्लभ एवं लुप्तप्राय औषधीय प्रजातियों का संरक्षण
इन-सिटू एवं एक्स-सिटू संरक्षण तकनीकें

सामुदायिक भागीदारी एवं पारंपरिक ज्ञान का संरक्षण

3. विकास (Development)

'वृक्षायुर्वेद आधारित औषधीय पादपों का समग्र मूल्य श्रृंखला मॉडल: संवर्धन, संरक्षण एवं सतत विकास का एक अभिनव अध्ययन'



चिकित्सा प्रणाली को मान्यता मिलने से वृक्षायुर्वेद की अंतरराष्ट्रीय मांग बढ़ेगी।

इंटीग्रेटेड एग्रीकल्चर मॉडल

वृक्षायुर्वेद आधारित बहु-फसली (Multi-cropping) एवं एग्रोफारेस्ट्री मॉडल विकसित होंगे।

डिजिटल एवं

टेक्नोलॉजी आधारित विकास

उच्च गुणवत्ता वाली औषधीय फसलों का उत्पादन मूल्य संवर्धन (Value Addition) एवं प्रसंस्करण

औषधीय पादप आधारित उद्यमिता का विकास

वृक्षायुर्वेद में करियर एवं स्कोप

1. शैक्षणिक एवं अनुसंधान क्षेत्र

कृषि विश्वविद्यालयों एवं आयुष संस्थानों में अध्यापन शोध परियोजनाएँ (ICMR, CCRAS, NMPB, DST आदि)

2. औद्योगिक क्षेत्र

हर्बल एवं फार्मास्यूटिकल कंपनियाँ
नर्सरी एवं औषधीय पादप उत्पादन इकाइयाँ
जैविक उत्पाद निर्माण एवं विपणन

3. सरकारी एवं नीतिगत क्षेत्र

AYUSH मंत्रालय, NMPB (National Medicinal Plants Board)
वन विभाग एवं कृषि विभाग
औषधीय पादप मिशन एवं योजनाएँ

4. उद्यमिता एवं स्वरोजगार

- * औषधीय पौधों की व्यावसायिक खेती
- * हर्बल नर्सरी एवं प्लांटेशन प्रोजेक्ट
- * वृक्षायुर्वेद परामर्श (Consultancy)
- * भविष्य की संभावनाएँ (Future Prospects)

वैश्विक स्तर पर विस्तार

WHO एवं वैश्विक संस्थाओं द्वारा पारंपरिक

मोबाइल ऐप (जैसे 'Vrikshamritam'), AI आधारित पौध रोग निदान एवं स्मार्ट खेती तकनीकें।

वलाइमेट-रेजिलिएंट खेती

जलवायु परिवर्तन के अनुकूल औषधीय पादपों की खेती में वृक्षायुर्वेद महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा।

नीतिगत समर्थन एवं निवेश

सरकार द्वारा औषधीय पादप मिशन, सब्सिडी एवं स्टार्टअप योजनाओं के माध्यम से इस क्षेत्र को बढ़ावा।

चुनौतियाँ

- * वैज्ञानिक प्रमाणिकता एवं मानकीकरण की कमी
- * प्रशिक्षित मानव संसाधन की आवश्यकता
- * बाजार संरचना एवं आपूर्ति श्रृंखला में असंतुलन
- * पारंपरिक ज्ञान का दस्तावेजीकरण

निष्कर्ष

वृक्षायुर्वेद न केवल एक पारंपरिक ज्ञान प्रणाली है, बल्कि यह आधुनिक कृषि, पर्यावरण संरक्षण एवं औषधीय पादपों के सतत विकास का एक सशक्त माध्यम है। औषधीय पौधों के संवर्धन, संरक्षण एवं विकास को केंद्र में रखते हुए, वृक्षायुर्वेद भविष्य में रोजगार, शोध एवं वैश्विक बाजार के लिए व्यापक अवसर प्रदान करता है। यदि इसे वैज्ञानिक दृष्टिकोण, नीति समर्थन एवं तकनीकी नवाचार के साथ जोड़ा जाए, तो यह क्षेत्र भारत की अर्थव्यवस्था एवं स्वास्थ्य प्रणाली को सुदृढ़ करने में महत्वपूर्ण योगदान दे सकता है।



पालव जोशी, डॉ. एस.एस. लाखावत

राजस्थान कॉलेज ऑफ एग्रिकल्चर, महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय उदयपुर (राजस्थान)

सार: भारत जैसे कृषि प्रधान देश में, ताजे फल और सब्जियां सबसे मूल्यवान लेकिन अत्यधिक खराब होने वाली वस्तुएं हैं। वैश्विक स्तर पर, ताजे उत्पादों का एक बड़ा हिस्सा खराब होने या शारीरिक क्षति के कारण नष्ट हो जाता है। विकाशशील क्षेत्रों में यह नुकसान 28% से 55% के बीच आंका गया है। यह लेख कटाई उपरांत प्रबंधन में मौजूद समस्याओं को एक "व्यावसायिक अवसर" के रूप में प्रस्तुत करता है। यह युवाओं के लिए आधुनिक तकनीकों—जैसे प्री-कूलिंग, स्मार्ट पैकेजिंग, एडिबल कोटिंग्स और कोल्ड चेन—पर आधारित उद्यमिता के नए रास्तों की पड़ताल करता है।

परिचय: फल और सब्जियों का उत्पादन करना एक चुनौती है, लेकिन उन्हें उपभोक्ताओं तक ताजा पहुंचाना उससे भी बड़ी चुनौती है। ताजे उत्पादों में नमी की मात्रा अधिक होती है और तुड़ाई के बाद भी उनमें क्षयन की प्रक्रिया जारी रहती है, जिससे वे सड़ने, एंजाइमेटिक गिरावट और माइक्रोबियल हमलों के प्रति संवेदनशील हो जाते हैं।

शीतलन में थोड़ी सी देरी या अनुचित हैंडलिंग से नुकसान का एक सिलसिला शुरू हो जाता है। आंकड़ों पर नजर डालें तो स्थिति की गंभीरता और अवसर दोनों स्पष्ट होते हैं—

* **वैश्विक नुकसान:** ताजे फलों और सब्जियों में खाद्य श्रेणियों के बीच सबसे अधिक नुकसान होता है, जो उत्पादन का 28% से 55% तक हो सकता है।

* **भारतीय परिदृश्य:** भारत के कई हिस्सों में, खराब कोल्ड चेन और भंडारण की कमी के कारण फलों में 14-36% और सब्जियों में 10-25% नुकसान का अनुमान लगाया गया है।

युवा उद्यमियों के लिए, यह "नुकसान" सीधा "लाभ" में बदला जा सकता है। उत्पादकों के लिए, कटाई उपरांत नुकसान को कम करने का मतलब लाभ और घाटे के बीच का अंतर है। उपभोक्ताओं के लिए इसका अर्थ है सुरक्षित भोजन, और ग्रह के लिए इसका अर्थ है संसाधनों का अनुकूलन। इसलिए, पोस्ट-हार्वेस्ट टेक्नोलॉजी केवल विज्ञान नहीं, बल्कि एक ठोस बिजनेस मॉडल है।

उद्यमिता के लिए प्रमुख तकनीकी क्षेत्र

युवा उद्यमी पारंपरिक खेती से हटकर "सेवा प्रदाता" या "तकनीकी निर्माता" के रूप में निम्नलिखित क्षेत्रों में स्टार्टअप शुरू कर सकते हैं:

रैपिड प्री-कूलिंग सर्विसेज—खेत की गर्मी को तुरंत कम करना फल को बचाने का पहला चरण है। क्षयन और सड़न को धीमा करने के लिए उपज को भंडारण तापमान के करीब लाना आवश्यक है।

तकनीक: फोर्सड एयर कूलिंग, वैक्यूम कूलिंग और हाइड्रो कूलिंग।

बिजनेस आइडिया: युवा उद्यमी मोबाइल प्री-कूलिंग यूनिट्स विकसित कर सकते हैं जो खेत पर जाकर सेवा दें।

उदाहरण: 'बुक चोय' पर किए गए एक हालिया परीक्षण में, वैक्यूम प्री-कूलिंग तकनीक माइक्रोबियल लोड को कम

फल विज्ञान में युवाओं के लिए उद्यमिता के नए अवसर: कटाई उपरांत प्रबंधन और तकनीकी नवाचार

करने और दृढ़ता बनाए रखने में अन्य तरीकों से बेहतर पाई गई। यह साबित करता है कि उच्च मूल्य वाली फसलों के लिए यह तकनीक बेहद कारगर है।

कोल्ड चेन और सौर ऊर्जा समाधान—भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में बिजली की समस्या एक बड़ी बाधा है। तापमान में छोटे बदलाव भी फसल को खराब कर सकते हैं।

बिजनेस आइडिया: ऑफ-ग्रिड और रुक-रुक कर बिजली वाले क्षेत्रों के लिए सौर ऊर्जा संचालित कोल्ड रूम (Solar-powered cold rooms) और विकेंद्रीकृत शीतलन प्रणाली एक उभरता हुआ बाजार है। यह छोटे स्तर की ताजा उपज श्रृंखलाओं में नुकसान को कम करने का एक स्थायी तरीका है।

एडिबल कोटिंग्स और बायो-पॉलिमर—प्लास्टिक पैकेजिंग के विकल्प के रूप में, फलों पर खाने योग्य पतली परत चढ़ाना एक बड़ा नवाचार है। चिटोसिन, स्टार्च, या एल्गिनेट जैसी सामग्री नमी और गैस के आदान-प्रदान को रोकती है।

प्रभाव: 2025 की एक समीक्षा से पता चलता है कि एडिबल कोटिंग्स गुणवत्ता से समझौता किए बिना माइक्रोबियल खराबी (जो कुल नुकसान का 20-30% है) को कम कर सकती हैं।

स्टार्टअप अवसर: स्थानीय रूप से उपलब्ध बायो-वेस्ट से कोटिंग सामग्री बनाना और सप्लाई करना।

स्मार्ट पैकेजिंग और सेंसर—यह क्षेत्र तकनीकी पृष्ठभूमि वाले युवाओं के लिए है। "इंटेलिजेंट पैकेजिंग" वह है जो उपज के साथ संवाद करे।

नवाचार: बैटरी-रहित स्मार्ट पैकेजिंग सिस्टम विकसित किए जा रहे हैं जो ताजगी सेंसर, एथिलीन डिटेक्टर और एन.एफ.सी. को एकीकृत करते हैं।

भविष्य: गैर-विनाशकारी इमेजिंग और मशीन लर्निंग का उपयोग करके उपज में तनाव के शुरुआती संकेतों का पता लगाना, जिससे दिखाई देने वाले नुकसान से पहले ही गुणवत्ता की भविष्यवाणी की जा सके।

केस स्टडीज: सफलता के प्रमाण

1. लीची का संरक्षण—लीची एक अत्यंत जल्दी खराब होने वाला फल है। एक हालिया अध्ययन में, लीची पर एल्गिनेट ओलिगोसैकराइड्स के उपचार का परीक्षण किया गया।

परिणाम: इस उपचार ने रंग बनाए रखने में वृद्धि की, पानी की कमी को कम किया, फलों की दृढ़ता को बनाए रखा और भंडारण के दौरान फफूंद की घटनाओं को कम किया। यह तकनीक निर्यातकों के लिए गेम-चेंजर हो सकती है।

2. टमाटर आपूर्ति श्रृंखला—टमाटर जैसी कोमल सब्जी के लिए तापमान नियंत्रण महत्वपूर्ण है। अध्ययनों से पता चलता है कि जहाँ खेत से रिटेलर तक तापमान नियंत्रण बनाए रखा जाता है, वहाँ नुकसान को 30-50% तक कम

किया जा सकता है। यह कोल्ड चेन लॉजिस्टिक्स में निवेश करने के लिए एक मजबूत तर्क है।

3. ग्रामीण भारत में सब्जी मूल्य श्रृंखला—एक ग्रामीण भारतीय सब्जी मूल्य श्रृंखला परियोजना के तहत, कोल्ड रूम और बेहतर पैकेजिंग को अपनाया गया।

परिणाम: इसने सब्जियों की शेल्फ लाइफ को लगभग 4 दिन बढ़ा दिया और बाजार में अस्वीकृति दर (rejection rates) को काफी कम कर दिया। यह सीधे तौर पर किसान की आय में वृद्धि है।

4. खरबूजे का निर्यात—मध्य अमेरिका से खरबूजे की शिपिंग के लिए संशोधित वातावरण पैकेजिंग का उपयोग किया जाता है। यह लंबी समुद्री यात्राओं के दौरान गुणवत्ता बनाए रखता है। भारतीय आम और केले के निर्यातकों के लिए यह एक बड़ा अवसर है।

चुनौतियां और बाधाएं—एक सफल उद्यमी को बाजार की बाधाओं को समझना चाहिए। इस क्षेत्र में मुख्य चुनौतियां निम्नलिखित हैं:

1. पूंजी निवेश: छोटे किसानों के पास कोल्ड रूम या सेंसर सुविधाओं में निवेश करने के लिए संसाधनों की कमी होती है। समाधान: 'पे-एस-यू-गो' सेवा मॉडल।

2. बुनियादी ढांचा: ग्रामीण क्षेत्रों में बिजली की अविश्वसनीयता एक प्रमुख चुनौती है। समाधान: सौर तकनीक।

3. अनुकूलता: कुछ प्रौद्योगिकियां प्रयोगशाला में अच्छा काम करती हैं लेकिन धूल भरे खेतों में नहीं। समाधान: रगड़ और टिकाऊ डिजाइन बनाना।

4. प्रशिक्षण: उन्नत पैकेजिंग या सेंसर सिस्टम के कार्यान्वयन के लिए आपूर्ति श्रृंखला में समन्वय और प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। किसान प्रशिक्षण और ज्ञान प्रसार नुकसान को कम करने की कुंजी है।

निष्कर्ष: ताजे उत्पादों का कटाई उपरांत नुकसान एक कठिन चुनौती है, लेकिन खाद्य सुरक्षा में सुधार, किसानों की आय बढ़ाने और आपूर्ति श्रृंखला दक्षता में सुधार के लिए यह "सबसे प्रबंधनीय अवसर" में से एक है। उन्नत शीतलन प्रणाली और स्मार्ट पैकेजिंग से लेकर सेंसर-संचालित निगरानी और बायोडिग्रेडेबल कोटिंग्स तक, पोस्ट-हार्वेस्ट प्रौद्योगिकियों का विकास यह वादा करता है कि ताजे उत्पादों को कम अपशिष्ट के साथ लंबे समय तक रखा जा सकता है। किसानों और सहकारी समितियों के लिए, इन प्रथाओं का तत्काल कार्यान्वयन रिटर्न बढ़ा सकता है।

युवाओं के लिए संदेश स्पष्ट है: कृषि में नवाचार केवल फसल उगाने तक सीमित नहीं है, बल्कि उस फसल को बचाने में भी है। जो उद्यमी इन तकनीकी अंतराल को भरेंगे, वे न केवल आर्थिक लाभ कमाएंगे बल्कि देश की खाद्य सुरक्षा में भी महत्वपूर्ण योगदान देंगे।

शैफाली तंवर (विद्यावाचस्पति शोधकर्ता)
 उद्यान विज्ञान विभाग

दीपेंद्र सिंह सारंगदेवत विद्यावाचस्पति
 शोधकर्ता, शस्य विज्ञान विभाग, राजस्थान कृषि
 महाविद्यालय, महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी
 विश्वविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान)

परिचय

वर्तमान समय में रासायनिक खेती के दुष्प्रभावों के कारण किसान टिकाऊ और प्राकृतिक खेती की ओर तेजी से बढ़ रहे हैं। इन्हीं विकल्पों में से एक है बायोडायनामिक खेती, जो न केवल मिट्टी की उर्वरता बढ़ाती है बल्कि फलों की गुणवत्ता और उत्पादन को भी सुधारती है। इस पद्धति में विशेष रूप से BD 500 (Horn Manure) और BD 501 (Horn Silica) का महत्वपूर्ण स्थान है, जो पौधों के विकास के दो अलग-अलग पहलुओं—मिट्टी और पौधे—पर काम करते हैं।

BD 500 क्या है और इसका प्रभाव

BD 500 को गाय के गोबर से तैयार किया जाता है, जिसे गाय के सींग में भरकर मिट्टी में दबाया जाता है और बाद में उपयोग किया जाता है।



मुख्य लाभ

- * मिट्टी की संरचना (Soil Structure) को सुधारता है
- * सूक्ष्मजीवों की संख्या बढ़ाता है
- * जड़ों के विकास को प्रोत्साहित करता है
- * पौधों में पोषक तत्वों के अवशोषण को बढ़ाता है

शोध के अनुसार, BD 500 जैसे बायोडायनामिक प्रिपरेशन मिट्टी की जैविक सक्रियता और पोषक तत्व उपलब्धता को बढ़ाते हैं, जिससे पौधों की वृद्धि और उत्पादन में सुधार होता है।

फल फसलों में प्रभाव

- * पौधे मजबूत बनते हैं * फूलों की संख्या बढ़ती है
- * फल सेट (Fruit set) में सुधार होता है

BD 501 क्या है और इसका प्रभाव

BD 501 को सिलिका (Quartz) से तैयार किया जाता है और इसे पौधों पर स्प्रे किया जाता है।

मुख्य लाभ

- * प्रकाश संश्लेषण (Photosynthesis) बढ़ाता है

बायोडायनामिक खेती (BD 500 और BD 501) का फल उत्पादन पर प्रभाव

- * पौधों की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ता है * फल की गुणवत्ता (रंग, चमक, स्वाद) सुधारता है * फलों की परिपक्वता (Maturity) को बेहतर बनाता है
- शोध से पता चलता है कि BD 501 प्रकाश और ऊर्जा के उपयोग को बेहतर बनाकर फल की गुणवत्ता और पौधों की वृद्धि में मदद करता है

फल फसलों में प्रभाव

- * फलों का रंग और चमक बढ़ती है * मिठास और स्वाद में सुधार * बाजार मूल्य (Market Value) बढ़ता है
- फल उत्पादन पर संयुक्त प्रभाव (BD 500 + BD 501)**
- जब BD 500 और BD 501 को साथ में उपयोग किया जाता है, तो यह मिट्टी और पौधे दोनों स्तर पर काम करते हैं।

प्रमुख प्रभाव

- * मिट्टी की उर्वरता + पौधे की कार्यक्षमता दोनों में सुधार * उत्पादन (Yield) में वृद्धि * फलों की गुणवत्ता (Size, Color, Taste) में सुधार * पौधों की तनाव सहनशीलता (Stress Tolerance) बढ़ती है
- विभिन्न अध्ययनों में पाया गया कि बायोडायनामिक प्रिपरेशन से
- * उपज (Yield) * गुणवत्ता (Quality) * और पौध विकास तीनों में सकारात्मक प्रभाव देखा गया

वैज्ञानिक दृष्टिकोण (महत्वपूर्ण बिंदु)

- * कई शोधों में सकारात्मक परिणाम मिले हैं

- * कुछ अध्ययनों में जैविक खेती की तुलना में अंतर कम पाया गया
- * इसका प्रभाव मिट्टी, जलवायु और प्रबंधन पर निर्भर करता है
- यानी, सही तरीके से उपयोग करने पर ही बेहतर परिणाम मिलते हैं

किसानों के लिए उपयोगी सुझाव

- * BD 500 का छिड़काव मिट्टी पर करें (शाम के समय)
- * BD 501 का स्प्रे सुबह के समय पौधों पर करें
- * दोनों का संयुक्त उपयोग अधिक लाभकारी होता है
- * जैविक खाद और मल्लिचिंग के साथ उपयोग करें
- * नियमित उपयोग से बेहतर परिणाम मिलते हैं

आर्थिक लाभ

- * रासायनिक खाद की लागत कम होती है
- * फलों की गुणवत्ता बढ़ने से बाजार में बेहतर कीमत मिलती है
- * दीर्घकाल में मिट्टी की उर्वरता बनी रहती है

निष्कर्ष

बायोडायनामिक खेती में BD 500 और BD 501 का उपयोग फल उत्पादन को टिकाऊ, गुणवत्तापूर्ण और लाभकारी बनाने का एक प्रभावी तरीका है। यह न केवल मिट्टी को जीवंत बनाता है बल्कि फलों की गुणवत्ता और बाजार मूल्य को भी बढ़ाता है। यदि किसान सही तकनीक और समय पर इनका उपयोग करें, तो यह खेती को अधिक लाभदायक और पर्यावरण के अनुकूल बना सकता है।

लता खाद एवं सीमेन्ट मण्डार





मो. 7974259803 (मुफ्ता ली)
9630470111 सागर (छोट)



हमारे यहाँ खाद, बीज एवं दवाईयाँ उचित रेट पर उपलब्ध है। थोक एवं खैरिज विक्रेता



पता: भितरवार रोड़, डबरा जिला ग्वा. (म.प्र.)



आशीष कुमार (सहायक प्रोफेसर) APEX SCHOOL
OF LAW, जयपुर, APEX UNIVERSITY, (जयपुर राजस्थान)

प्रस्तावना: वन अधिकार अधिनियम, 2006, भारत के वन संसाधनों के प्रबंधन में एक ऐतिहासिक मील का पत्थर है। यह अधिनियम विशेष रूप से आदिवासी समुदायों और पारंपरिक वन निवासियों को उनके पारंपरिक वन उपयोग और कृषि संबंधी अधिकारों को कानूनी मान्यता प्रदान करता है। इस अधिनियम का उद्देश्य न केवल वन संसाधनों का संरक्षण करना है, बल्कि इन समुदायों के जीवन और आजीविका को भी सशक्त बनाना है। अतः, यह अधिनियम कृषि, वन संसाधनों और सामाजिक न्याय के बीच एक महत्वपूर्ण सेतु का कार्य करता है। इस लेख में हम विस्तार से समझेंगे कि यह अधिनियम किस प्रकार आदिवासी समुदायों के कृषि अधिकारों को सुरक्षित करता है, साथ ही इसकी प्रासंगिकता और चुनौतियों पर भी चर्चा करेंगे।

वन अधिकार अधिनियम, 2006 का परिचय: वन अधिकार अधिनियम, 2006, भारत सरकार द्वारा पारित एक ऐतिहासिक कानून है। यह अधिनियम 2006 में लागू हुआ, जिसका उद्देश्य वन संसाधनों के उपयोग में पारंपरिक वन निवासियों को कानूनी अधिकार देना है। यह अधिनियम वन क्षेत्र में रहने वाले आदिवासियों और पारंपरिक समुदायों को उनके पारंपरिक अधिकारों का संरक्षण प्रदान करता है। इसके तहत, इन समुदायों को वन भूमि, वन संसाधनों और पारंपरिक उपयोग के अधिकार मिलते हैं। यह अधिनियम वन संसाधनों के संरक्षण के साथ-साथ सामाजिक न्याय और आर्थिक सर्वाधिकरण का भी माध्यम है। यह अधिनियम विशेष रूप से उन समुदायों के लिए महत्वपूर्ण है, जिन्होंने सदियों से वन संसाधनों का उपयोग अपने जीवन यापन के लिए किया है। इन समुदायों का जीवन और संस्कृति वन संसाधनों से गहराई से जुड़ी हुई है। अतः, यह अधिनियम उनके अधिकारों की रक्षा करता है और उन्हें वन संसाधनों का उपयोग करने का कानूनी अधिकार प्रदान करता है। इसके साथ ही, यह अधिनियम वन क्षेत्र में गैरकानूनी गतिविधियों को रोकने में भी मदद करता है।

आदिवासी समुदायों का पारंपरिक जीवन और वन संसाधनों का महत्व: आदिवासी समुदायों का जीवन सदियों से वन संसाधनों पर निर्भर रहा है। इन समुदायों ने अपने जीवन यापन के लिए जंगलों से अनाज, जड़ी-बूटियाँ, फल, लकड़ी और अन्य प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग किया है। इन संसाधनों का उपयोग न केवल भोजन और औषधि के रूप में होता है, बल्कि यह उनके सांस्कृतिक और धार्मिक जीवन का भी अभिन्न हिस्सा है। आदिवासी समुदायों का पारंपरिक जीवन जंगलों के साथ गहरे संबंध में है। वे जंगलों को अपनी जीवनशैली का आधार मानते हैं। इन समुदायों ने अपने अनुभव और परंपराओं के माध्यम से जंगलों का संरक्षण किया है। वे जंगलों का सम्मान करते हैं और उनके संसाधनों का सतत उपयोग सुनिश्चित करते हैं। यह भी ध्यान देना आवश्यक है कि इन समुदायों का कृषि प्रणाली भी जंगलों पर आधारित है। वे जंगलों से प्राप्त प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग कर अपने खेतों में खेती करते हैं। इस प्रकार, वन संसाधनों का संरक्षण और उनका सतत उपयोग इन समुदायों के जीवन का अभिन्न हिस्सा है।

वन अधिकार अधिनियम, 2006 का उद्देश्य और प्रावधान: वन अधिकार अधिनियम, 2006 का मुख्य उद्देश्य वन संसाधनों पर पारंपरिक वन निवासियों के अधिकारों को कानूनी रूप से मान्यता देना है। यह अधिनियम इन समुदायों को उनके पारंपरिक उपयोग के अधिकार प्रदान करता है। इसके तहत, वन क्षेत्र में रहने वाले समुदाय अपने पारंपरिक वन उपयोग के अधिकार का दावा कर सकते हैं। अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार, इन समुदायों को वन भूमि, वन संसाधनों, और पारंपरिक उपयोग के अधिकार मिलते हैं। इसके साथ ही, यह अधिनियम वन संसाधनों के संरक्षण और सतत उपयोग को भी सुनिश्चित करता है। इसमें यह भी उल्लेख

वन अधिकार अधिनियम, 2006 और कृषि : आदिवासी समुदायों एवं पारंपरिक वन निवासियों के कृषि अधिकार

है कि इन समुदायों को वन संसाधनों का उपयोग करने का अधिकार है, लेकिन यह उपयोग पर्यावरणीय संरक्षण के अनुरूप होना चाहिए। यह अधिनियम ग्राम सभा या स्थानीय निकाय को भी अधिकार देता है कि वे वन संसाधनों के प्रबंधन में भाग लें। इससे स्थानीय समुदायों को निर्णय लेने की प्रक्रिया में भागीदारी मिलती है। इसके अलावा, यह अधिनियम गैरकानूनी गतिविधियों को रोकने के लिए भी प्रावधान करता है।

कृषि और वन अधिकार: पारंपरिक वन निवासियों का दृष्टिकोण: पारंपरिक वन निवासी, विशेष रूप से आदिवासी समुदाय, अपने जीवन में कृषि और वन संसाधनों का संयोजन करते हैं। वे जंगलों से प्राप्त प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग कर अपने खेतों में खेती करते हैं। इस प्रक्रिया में, वे पारंपरिक कृषि तकनीकों का प्रयोग करते हैं, जो पर्यावरण के अनुकूल होती हैं। इन समुदायों का मानना है कि वन संसाधनों का संरक्षण उनके जीवन का आधार है। इसलिए, वे सतत उपयोग और संरक्षण के सिद्धांतों का पालन करते हैं। उनके कृषि अभ्यास में जंगलों का संरक्षण और पुनःप्राप्ति का ध्यान रखा जाता है। यह परंपरागत कृषि प्रणाली जैव विविधता को बनाए रखने में मदद करती है। इसके अतिरिक्त, इन समुदायों का मानना है कि उनके कृषि अधिकारों का संरक्षण उनके जीवन और संस्कृति के संरक्षण के समान है। वे अपने पारंपरिक ज्ञान और अनुभव का उपयोग कर खेती करते हैं। इस प्रकार, वन अधिकार अधिनियम, 2006, इन समुदायों को उनके कृषि अधिकारों का कानूनी संरक्षण प्रदान करता है।

वन अधिकार अधिनियम, 2006 और कृषि डू कानूनी अधिकारों का विस्तार: वन अधिकार अधिनियम, 2006, ने आदिवासी और पारंपरिक वन निवासियों को उनके कृषि संबंधी अधिकारों का विस्तार किया है। यह अधिनियम उन्हें वन भूमि पर खेती करने, वृक्षारोपण करने और प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग करने का अधिकार देता है। इससे इन समुदायों को अपनी आजीविका को स्थिर करने का अवसर मिलता है। अधिनियम के तहत, ग्राम सभाओं को भी अधिकार दिया गया है कि वे वन संसाधनों के प्रबंधन में भाग लें। इससे स्थानीय समुदायों को निर्णय

प्रक्रिया में भागीदारी मिलती है। यह प्रक्रिया पारंपरिक ज्ञान और अनुभव को भी मान्यता देती है। इसके अलावा, यह अधिनियम वन संसाधनों के सतत उपयोग को सुनिश्चित करता है। यह सुनिश्चित करता है कि वन संसाधनों का अत्यधिक दोहन न हो। इससे न केवल पर्यावरण का संरक्षण होता है, बल्कि इन समुदायों की कृषि और जीवन यापन की आजीविका भी सुरक्षित रहती है।

चुनौतियाँ और समाधान: हालांकि, वन अधिकार अधिनियम, 2006, ने कई सकारात्मक बदलाव लाए हैं, फिर भी कई चुनौतियों का सामना भी करना पड़ता है। सबसे पहली चुनौती है, जागरूकता की कमी। कई आदिवासी समुदाय अभी भी अपने अधिकारों से अनजान हैं। इसके अलावा, सरकारी नीतियों और कार्यान्वयन में खामियाँ भी हैं। दूसरी चुनौती है, वन संसाधनों का अवैध दोहन और गैरकानूनी गतिविधियाँ। इससे वन संसाधनों का संरक्षण प्रभावित होता है। साथ ही, कई बार स्थानीय समुदायों को उनके अधिकारों का सही से लाभ नहीं मिल पाता। इन चुनौतियों का समाधान करने के लिए, आवश्यक है कि सरकार और संबंधित संस्थान जागरूकता अभियानों का संचालन करें। साथ ही, स्थानीय समुदायों को शिक्षित और सशक्त बनाना चाहिए। तकनीकी सहायता और प्रशिक्षण से भी इन समुदायों को अपने अधिकारों का बेहतर उपयोग करने में मदद मिल सकती है।

निष्कर्ष: अंत में, यह कहा जा सकता है कि वन अधिकार अधिनियम, 2006, ने आदिवासी और पारंपरिक वन निवासियों के जीवन में बदलाव लाया है। यह अधिनियम उनके कृषि अधिकारों को कानूनी रूप से सुरक्षित करता है और उन्हें वन संसाधनों का सतत उपयोग करने का अधिकार प्रदान करता है। साथ ही, यह अधिनियम सामाजिक न्याय और पर्यावरण संरक्षण के बीच संतुलन बनाने का प्रयास करता है। फिर भी, इन अधिकारों का सही से कार्यान्वयन और संरक्षण आवश्यक है। इसके लिए, सभी संबंधित पक्षों को मिलकर काम करना चाहिए। तभी हम वन संसाधनों का संरक्षण कर सकते हैं और आदिवासी समुदायों के जीवन को बेहतर बना सकते हैं। अतः, यह अधिनियम एक मजबूत आधार प्रदान करता है, जिसे सही दिशा में लागू कर हम स्थायी विकास की दिशा में कदम बढ़ा सकते हैं।



मनोज गुप्ता

जय पीताम्बर बीज भण्डार

हमारे यहाँ समस्त कंपनियों के बीज उचित दाम पर मिलते हैं।
खाद एवं दवाईयाँ मिलाने का प्रमुख स्थान

रेल स्ट्रिंग कारखाने के सामने, डबरा रोड, सिधौली, न्वालियर
मोबा.: 9301366887, फोन : 0751-2434056



✍ **पालव जोशी एवं डॉ. एस.एस. लाखावत**
राजस्थान कॉलेज ऑफ एग्रिकल्चर, महाराणा प्रताप कृषि
एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, उदयपुर, (राजस्थान)

सार: भारत जैसे कृषि प्रधान देश में, ताजे फल और सब्जियां सबसे मूल्यवान लेकिन अत्यधिक खराब होने वाली वस्तुएं हैं। वैश्विक स्तर पर, ताजे उत्पादों का एक बड़ा हिस्सा खराब होने या शारीरिक क्षति के कारण नष्ट हो जाता है। विकासशील क्षेत्रों में यह नुकसान 28% से 55% के बीच आंका गया है। यह लेख कटाई उपरांत प्रबंधन में मौजूद समस्याओं को एक "व्यावसायिक अवसर" के रूप में प्रस्तुत करता है। यह युवाओं के लिए आधुनिक तकनीकों—जैसे प्री-कूलिंग, स्मार्ट पैकेजिंग, एडिबल कोटिंग्स और कोल्ड चेन-पर आधारित उद्यमिता के नए रास्तों की पड़ताल करता है।

परिचय: फल और सब्जियों का उत्पादन करना एक चुनौती है, लेकिन उन्हें उपभोक्ताओं तक ताजा पहुंचाना उससे भी बड़ी चुनौती है। ताजे उत्पादों में नमी की मात्रा अधिक होती है और तुड़ाई के बाद भी उनमें श्वसन की प्रक्रिया जारी रहती है, जिससे वे सड़ने, एंजाइमेटिक गिरावट और माइक्रोबियल हमलों के प्रति संवेदनशील हो जाते हैं।

शीतलन में थोड़ी सी देरी या अनुचित हैंडलिंग से नुकसान का एक सिलसिला शुरू हो जाता है। **आँकड़ों पर नजर डालें तो स्थिति की गंभीरता और अवसर दोनों स्पष्ट होते हैं—** वैश्विक नुकसान: ताजे फलों और सब्जियों में खाद्य श्रेणियों के बीच सबसे अधिक नुकसान होता है, जो उत्पादन का 28% से 55% तक हो सकता है।

भारतीय परिदृश्य: भारत के कई हिस्सों में, खराब कोल्ड चेन और भंडारण की कमी के कारण फलों में 14-36% और सब्जियों में 10-25% नुकसान का अनुमान लगाया गया है।

युवा उद्यमियों के लिए, यह "नुकसान" सीधा "लाभ" में बदला जा सकता है। उत्पादकों के लिए, कटाई उपरांत नुकसान को कम करने का मतलब लाभ और घाटे के बीच का अंतर है। उपभोक्ताओं के लिए इसका अर्थ है सुरक्षित भोजन, और ग्रह के लिए इसका अर्थ है संसाधनों का अनुकूलन। इसलिए, पोस्ट-हार्वेस्ट टेक्नोलॉजी केवल विज्ञान नहीं, बल्कि एक ठोस बिजनेस मॉडल है।

उद्यमिता के लिए प्रमुख तकनीकी क्षेत्र : युवा उद्यमी पारंपरिक खेती से हटकर "सेवा प्रदाता" या "तकनीकी निर्माता" के रूप में निम्नलिखित क्षेत्रों में स्टार्टअप शुरू कर सकते हैं:

रैपिड प्री-कूलिंग सर्विसेज: खेत की गर्मी को तुरंत कम करना फल को बचाने का पहला चरण है। श्वसन और सड़न को धीमा करने के लिए उपज को भंडारण तापमान के करीब लाना आवश्यक है।

तकनीक: फोर्टेड एयर कूलिंग, वैक्यूम कूलिंग और हाइड्रो कूलिंग।

बिजनेस आइडिया: युवा उद्यमी मोबाइल प्री-कूलिंग यूनिट्स विकसित कर सकते हैं जो खेत पर जाकर सेवा दें।

उदाहरण: 'बुक चोय' पर किए गए एक हालिया परीक्षण में, वैक्यूम प्री-कूलिंग तकनीक माइक्रोबियल लोड को कम

फल विज्ञान में युवाओं हेतु उद्यमिता के नए अवसर कटाई उपरांत प्रबंधन और तकनीकी नवाचार

करने और दृढ़ता बनाए रखने में अन्य तरीकों से बेहतर पाई गई। यह साबित करता है कि उच्च मूल्य वाली फसलों के लिए यह तकनीक बेहद कारगर है।

कोल्ड चेन और सौर ऊर्जा समाधान: भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में बिजली की समस्या एक बड़ी बाधा है। तापमान में छोटे बदलाव भी फसल को खराब कर सकते हैं।

बिजनेस आइडिया: ऑफ-ग्रिड और रुक-रुक कर बिजली वाले क्षेत्रों के लिए सौर ऊर्जा संचालित कोल्ड रूम (Solar-powered cold rooms) और विकेंद्रीकृत शीतलन प्रणाली एक उभरता हुआ बाजार है। यह छोटे स्तर की ताजा उपज श्रृंखलाओं में नुकसान को कम करने का एक स्थायी तरीका है।

एडिबल कोटिंग्स और बायो-पॉलिमर : प्लास्टिक पैकेजिंग के विकल्प के रूप में, फलों पर खाने योग्य पतली परत चढ़ाना एक बड़ा नवाचार है। चिटोसिन, स्टार्च, या एल्लिगेट जैसी सामग्री नमी और गैस के आदान-प्रदान को रोकती है।

प्रभाव: 2025 की एक समीक्षा से पता चलता है कि एडिबल कोटिंग्स गुणवत्ता से समझौता किए बिना माइक्रोबियल खराबी (जो कुल नुकसान का 20-30% है) को कम कर सकती है।

स्टार्टअप अवसर: स्थानीय रूप से उपलब्ध बायो-वेस्ट से कोटिंग सामग्री बनाना और सप्लाई करना।

स्मार्ट पैकेजिंग और सेंसर: यह क्षेत्र तकनीकी पृष्ठभूमि वाले युवाओं के लिए है। "इंटेलिजेंट पैकेजिंग" वह है जो उपज के साथ संवाद करे।

नवाचार: बैटरी-रहित स्मार्ट पैकेजिंग सिस्टम विकसित किए जा रहे हैं जो ताजगी सेंसर, एथिलीन डिटेक्टर और एन.एफ.सी. को एकीकृत करते हैं।

भविष्य: गैर-विनाशकारी इमेजिंग और मशीन लर्निंग का उपयोग करके उपज में तनाव के शुरुआती संकेतों का पता लगाना, जिससे दिखाई देने वाले नुकसान से पहले ही गुणवत्ता की भविष्यवाणी की जा सके।

केस स्टडीज: सफलता के प्रमाण

1. लीची का संरक्षण: लीची एक अत्यंत जल्दी खराब होने वाला फल है। एक हालिया अध्ययन में, लीची पर एल्लिगेट ओलिगोसैकराइड्स के उपचार का परीक्षण किया गया।

परिणाम: इस उपचार ने रंग बनाए रखने में वृद्धि की, पानी की कमी को कम किया, फलों की दृढ़ता को बनाए रखा और भंडारण के दौरान फफूंद की घटनाओं को कम किया। यह तकनीक निर्यातकों के लिए गेम-चेंजर हो सकती है।

2. टमाटर आपूर्ति श्रृंखला: टमाटर जैसी कोमल सब्जी के लिए तापमान नियंत्रण महत्वपूर्ण है। अध्ययनों से पता चलता है कि जहाँ खेत से रिटेलर तक तापमान नियंत्रण बनाए रखा जाता है, वहाँ नुकसान को 30-50% तक कम

किया जा सकता है। यह कोल्ड चेन लॉजिस्टिक्स में निवेश करने के लिए एक मजबूत तर्क है।

3. ग्रामीण भारत में सब्जी मूल्य श्रृंखला

एक ग्रामीण भारतीय सब्जी मूल्य श्रृंखला परियोजना के तहत, कोल्ड रूम और बेहतर पैकेजिंग को अपनाया गया।

परिणाम: इसने सब्जियों की शेल्फ लाइफ को लगभग 4 दिन बढ़ा दिया और बाजार में अस्वीकृति दर (rejection rates) को काफी कम कर दिया। यह सीधे तौर पर किसान की आय में वृद्धि है।

4. खरबूजे का निर्यात : मध्य अमेरिका से खरबूजे की शिपिंग के लिए संशोधित वातावरण पैकेजिंग का उपयोग किया जाता है। यह लंबी समुद्री यात्राओं के दौरान गुणवत्ता बनाए रखता है। भारतीय आम और केले के निर्यातकों के लिए यह एक बड़ा अवसर है।

चुनौतियां और बाधाएं: एक सफल उद्यमी को बाजार की बाधाओं को समझना चाहिए। इस क्षेत्र में मुख्य चुनौतियां निम्नलिखित हैं:

1. पूंजी निवेश: छोटे किसानों के पास कोल्ड रूम या सेंसर सुविधाओं में निवेश करने के लिए संसाधनों की कमी होती है। समाधान: 'पे-एस-यू-गो' सेवा मॉडल।

2. बुनियादी ढांचा: ग्रामीण क्षेत्रों में बिजली की अविश्वसनीयता एक प्रमुख चुनौती है। समाधान: सौर तकनीक।

3. अनुकूलता : कुछ प्रौद्योगिकियां प्रयोगशाला में अच्छे काम करती हैं लेकिन धूल भरे खेतों में नहीं। समाधान: रगड़ और टिकाऊ डिजाइन बनाना।

4. प्रशिक्षण: उन्नत पैकेजिंग या सेंसर सिस्टम के कार्यान्वयन के लिए आपूर्ति श्रृंखला में समन्वय और प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। किसान प्रशिक्षण और ज्ञान प्रसार नुकसान को कम करने की कुंजी है।

निष्कर्ष : ताजे उत्पादों का कटाई उपरांत नुकसान एक कठिन चुनौती है, लेकिन खाद्य सुरक्षा में सुधार, किसानों की आय बढ़ाने और आपूर्ति श्रृंखला दक्षता में सुधार के लिए यह "सबसे प्रबंधनीय अवसरों" में से एक है। उन्नत शीतलन प्रणाली और स्मार्ट पैकेजिंग से लेकर सेंसर-संचालित निगरानी और बायोडिग्रेडेबल कोटिंग्स तक, पोस्ट-हार्वेस्ट प्रौद्योगिकियों का विकास यह वादा करता है कि ताजे उत्पादों को कम अपशिष्ट के साथ लंबे समय तक रखा जा सकता है। किसानों और सहकारी समितियों के लिए, इन प्रथाओं का तत्काल कार्यान्वयन रिटर्न बढ़ा सकता है।

युवाओं के लिए संदेश स्पष्ट है: कृषि में नवाचार केवल फसल उगाने तक सीमित नहीं है, बल्कि उस फसल को बचाने में भी है। जो उद्यमी इन तकनीकी अंतराल को भरेंगे, वे न केवल आर्थिक लाभ कमाएंगे बल्कि देश की खाद्य सुरक्षा में भी महत्वपूर्ण योगदान देंगे।



डॉ. दिनेश रजक, डॉ. विशाल कुमार
डॉ. देवेन्द्र कुमार प्रसंस्करण एवं खाद्य अभियंत्रिकी
विभाग, कृषि अभियंत्रण एवं प्रौद्योगिकी महविद्यालय,
डॉ. रा. प्र. कें. कृ. वि. पूसा, समस्तीपुर, (बिहार)

प्रस्तावना: बाजरा भारत की प्रमुख मोटे अनाज (मिलेट) फसलों में से एक है, जो विशेष रूप से शुष्क एवं अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में उगाई जाती है। यह फसल पोषण की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसमें प्रोटीन, फाइबर, आयरन और अन्य खनिज प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। बढ़ती जनसंख्या और पोषण सुरक्षा की आवश्यकता को देखते हुए बाजरा का महत्व निरंतर बढ़ रहा है। कटाई के बाद फसल का सही तरीके से प्रबंधन करना उतना ही आवश्यक है जितना कि उसकी खेती। यदि कटाई उपरांत उचित प्रसंस्करण और भंडारण नहीं किया जाए, तो दानों की गुणवत्ता प्रभावित होती है तथा कीट, फफूंद और नमी के कारण भारी नुकसान हो सकता है। इसलिए बाजरा के दानों को सुरक्षित रखने, उनकी गुणवत्ता बनाए रखने तथा बाजार में बेहतर मूल्य प्राप्त करने के लिए वैज्ञानिक एवं उचित तकनीकों का अपनाना आवश्यक है। इस संदर्भ में "कटाई उपरांत बाजरा का प्राथमिक प्रसंस्करण एवं भंडारण" विषय अत्यंत महत्वपूर्ण है, जो किसानों को फसल के बाद होने वाले नुकसान को कम करने और उत्पादन से अधिकतम लाभ प्राप्त करने में सहायता करता है।

1. बाजरा की कटाई का सही समय- बाजरा की फसल को तब काटना चाहिए जब बालियाँ पूरी तरह पक जाएं और दाने सख्त हो जाएं। सामान्यतः दानों में नमी 18-20% के आसपास होने पर कटाई उपयुक्त रहती है। समय पर कटाई न करने से दानों का झड़ना और पक्षियों द्वारा नुकसान हो सकता है। बाजरा की अच्छी उपज और गुणवत्ता के लिए सही समय पर कटाई करना बहुत महत्वपूर्ण होता है। यदि कटाई जल्दी या देर से की जाए, तो दानों की गुणवत्ता और उत्पादन दोनों प्रभावित होते हैं।

कटाई के उपयुक्त संकेत- बाजरा की फसल कटाई के लिए तैयार होने पर निम्न लक्षण दिखाई देते हैं-

बालियाँ (ear heads) पूरी तरह विकसित और सख्त हो जाती हैं।

* दाने कठोर (hard) और चमकदार दिखाई देते हैं।

* पौधे की पत्तियाँ पीली या सूखी होने लगती हैं।

* दानों में नमी लगभग 18-20% के आसपास रहती है।

कटाई का सही समय- सामान्यतः बुवाई के 75-90 दिनों बाद बाजरा की फसल कटाई के लिए तैयार हो जाती है (यह किस्म और जलवायु पर निर्भर करता है)। * कटाई सुबह या शाम के समय करना बेहतर होता है, ताकि दानों के झड़ने (shattering) की संभावना कम रहे।

समय पर कटाई के लाभ * दानों की गुणवत्ता अच्छी बनी रहती है। * झड़ने और पक्षियों द्वारा नुकसान कम होता है। * भंडारण के दौरान नुकसान कम होता है।

देर या जल्दी कटाई के नुकसान

* **जल्दी कटाई:** दाने कच्चे रह जाते हैं, जिससे वजन और गुणवत्ता कम होती है।

* **देर से कटाई:** दाने झड़ सकते हैं या कीट व पक्षियों से नुकसान बढ़ सकता है।

कटाई उपरांत बाजरा का प्राथमिक प्रसंस्करण एवं भंडारण

2. सुखाना -कटाई के बाद फसल को धूप में अच्छी तरह सुखाना चाहिए।

* बालियों को 3-5 दिनों तक धूप में फैलाकर सुखाएं। * दानों की नमी 12-14% तक कम करना आवश्यक है। * अच्छी तरह सुखाने से फफूंद और कीटों का प्रकोप कम होता है।

बाजरा की कटाई के बाद दानों को सुरक्षित रखने के लिए उचित सुखाना अत्यंत आवश्यक होता है। यदि दानों में अधिक नमी रह जाती है, तो भंडारण के दौरान फफूंद, कीट और खराबी का खतरा बढ़ जाता है।

सुखाने का महत्व- * दानों की नमी कम करके उन्हें लंबे समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है। * फफूंद और कीटों के प्रकोप को रोका जा सकता है। * दानों की गुणवत्ता और पोषण मूल्य बनाए रहते हैं।

सुखाने की विधि * कटाई के बाद बालियों को साफ स्थान पर फैलाकर धूप में सुखाएं। * 3-5 दिनों तक नियमित रूप से धूप में पलटते रहें, ताकि समान रूप से सुखाई हो। * यदि संभव हो तो प्लास्टिक शीट या तिरपाल का उपयोग करें, जिससे दाने मिट्टी से संपर्क में न आए।

नमी का उचित स्तर * मड़ाई से पहले दानों की नमी लगभग 14-15% तक होनी चाहिए। * भंडारण के लिए नमी को 10-12% तक कम करना जरूरी है।

सावधानियां * वर्षा या अधिक आद्रता के समय सुखाने से बचें। * रात में दानों को ढककर रखें, ताकि नमी पुनः न बढ़े। * सुखाते समय पशु-पक्षियों से बचाव करें।

3. मड़ाई -सूखी फसल की मड़ाई हाथ से, बैलों से या श्रेणर मशीन द्वारा की जा सकती है।

* मड़ाई के दौरान साफ-सफाई का ध्यान रखें। * टूटे और खराब दानों को अलग करें।

बाजरा की कटाई और सुखाने के बाद अगला महत्वपूर्ण चरण मड़ाई है, जिसमें बालियों से दानों को अलग किया

जाता है। सही तरीके से मड़ाई करने से दानों की गुणवत्ता बनी रहती है और नुकसान कम होता है।

मड़ाई का महत्व * बालियों से दानों को अलग करने की मुख्य प्रक्रिया। * साफ और गुणवत्तापूर्ण दाने प्राप्त होते हैं। * आगे की प्रसंस्करण एवं भंडारण के लिए दाने तैयार होते हैं।

मड़ाई की विधियाँ

i. हाथ से मड़ाई- a.छोटे किसानों द्वारा अपनाई जाने वाली पारंपरिक विधि। b.बालियों को डंडे से पीटकर या रगड़कर दाने अलग किए जाते हैं।

ii.पशुओं द्वारा मड़ाई- a.बैलों से फसल को रौंदवाकर दाने अलग किए जाते हैं। b.यह विधि ग्रामीण क्षेत्रों में प्रचलित है।

iii.श्रेणर मशीन द्वारा मड़ाई -a.आधुनिक और तेज विधि। b.कम समय में अधिक मात्रा में मड़ाई संभव होती है।

मड़ाई के दौरान सावधानियां: * फसल पूरी तरह सूखी होनी चाहिए। * साफ और समतल स्थान पर मड़ाई करें। * टूटे, कच्चे और खराब दानों को अलग करें। * मशीन का उपयोग करते समय सुरक्षा का ध्यान रखें।

मड़ाई के लाभ * समय और श्रम की बचत (विशेषकर मशीन से)। * दानों की गुणवत्ता बेहतर रहती है। * आगे की सफाई और भंडारण आसान हो जाता है।

4. सफाई और छंटाई (Cleaning & Grading) मड़ाई के बाद दानों को छलनी या हवा के माध्यम से साफ किया जाता है।

* कंकड़, भूसा और अन्य अशुद्धियाँ हटाएं। * समान आकार के दानों की ग्रेडिंग करने से बाजार मूल्य बेहतर मिलता है।

मड़ाई के बाद बाजरा के दानों में भूसा, कंकड़, धूल तथा अन्य अशुद्धियाँ मिल जाती हैं। इन्हें हटाकर दानों को साफ और गुणवत्ता के आधार पर अलग करना ही सफाई और छंटाई कहलाता है।

कुंज एजेंसीज



अपने भाई चप्पा सेठ की दुकान

हमारे यहां सभी प्रकार के खाद
बीज एवं कीटनाशक दवाईयां
उचित रेट पर मिलती है

प्रो. कार्तिक गुप्ता 9589545404
प्रो. हार्दिक गुप्ता 9644689094

भितरवार रोड, डबरा, जिला-ग्वालियर (म.प्र.)



डॉ. सुनील कुमार मंडल सहायक प्राध्यापक,
क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, झंझारपुर- 847403 (बिहार)

डॉ. सुरेन्द्र प्रसाद स्नातकोत्तर कृषि महाविद्यालय, पूसा,
डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि वि.वि. पूसा, समस्तीपुर, बिहार

प्रस्तावना

मल्लिचंग, उपरी मिट्टी को पत्तियों, घास, टहनियों, फसल अवशेषों पुआल, आदि जैसे पौधों के पदार्थों से ढकने की प्रक्रिया है। मल्लिच आवरण केचुओं एवं मिट्टी के अन्य सूक्ष्मजीवों की सक्रियता को बढ़ाता है। ये छोटे और बड़े छिद्रों वाली मिट्टी की संरचना को बनाने में मदद करते हैं जिनसे वर्षा का पानी आसानी से मिट्टी में रिस सकता है। सतही अपवाह कम होता है। जैसे-जैसे मल्लिच की सामग्री विघटित होती है, तो मल्लिच मिट्टी में कार्बनिक पदार्थों की मात्रा को बढ़ाती है। मिट्टी का कार्बनिक पदार्थ स्थिर और भुरभुरी संरचना वाली अच्छी मिट्टी बनाने में मदद करता है। इस प्रकार, मिट्टी के कण पानी के द्वारा आसानी से बह नहीं पायेंगे। इसलिए मिट्टी के कटाव को रोकने में मल्लिच एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इस आलेख में निम्न उल्लेखित जैविक कृषि में मल्लिचंग की तकनीकों का वर्णन किया गया है। मल्लिच के लाभों और इसके उपयोग के कारणों पर विवरण दिया गया है। मल्लिचंग सामग्री के चयन और स्रोत के साथ-साथ मल्लिच के उपयोग और उसके प्रयोग के बारे में सुझाव भी दिये गए हैं।

1. **मल्लिच का उपयोग क्यों करें?**— मल्लिच मिट्टी को हवा और पानी के कटाव से बचाता है—मिट्टी के कण बहकर या उड़कर नहीं जा सकते।

2. **यह मिट्टी की अच्छी संरचना बनाए रखकर वर्षा और सिंचाई की पानी के रिसाव को बेहतर बनाता है:** कोई पपड़ी नहीं बनती, छिद्र खुले रहते हैं।

3. **यह वाष्पीकरण को कम करके मिट्टी को नम रखता है:** पौधों को कम सिंचाई की आवश्यकता होती है या वे शुष्क क्षेत्रों या मौसमों में उपलब्ध वर्षा का अधिक कुशलता से उपयोग कर सकते हैं।

4. **मृदा जीवों को पोषण और सुरक्षा प्रदान करता है:** जैविक मल्लिच सामग्री मृदा जीवों के लिए एक उत्कृष्ट भोजन है और उनके विकास के लिए उपयुक्त परिस्थितियाँ प्रदान करती है।

5. **खरपतवार की वृद्धि को रोकता है:** पर्याप्त मल्लिच परत होने पर, खरपतवारों को उसमें से उगने में कठिनाई होगी।

6. **यह मिट्टी को अत्यधिक गर्म होने से रोकता है:** मल्लिच मिट्टी को छाया प्रदान करता है और नमी बनाए रखने से यह ठंडी रहती है।

7. **यह फसलों को पोषक तत्व प्रदान करता है:** सड़ते समय, जैविक मल्लिच सामग्री लगातार अपने पोषक तत्व छोड़ती रहती है, जिससे मिट्टी उर्वर बनती है।

मल्लिच सामग्री का चयन

मल्लिचंग के लिए प्रयुक्त सामग्री का प्रकार इसके प्रभाव को बहुत प्रभावित करेगा, जो सामग्री आसानी से विघटित हो जाती है, वह मिट्टी की सुरक्षा केवल थोड़े समय के लिए ही करेगी, लेकिन विघटित होते समय फसलों को पोषक तत्व प्रदान करेगी।

जैविक खेती में कार्बनिक मल्लिचंग की भूमिका



कठोर सामग्री धीरे-धीरे विघटित होगी और इसलिए मिट्टी को लंबे समय तक ढक कर रखेगी।

यदि मल्लिच सामग्री के अपघटन को तेज़ करना है, तो पशुओं के गोबर जैसी जैविक खाद—को मल्लिच के ऊपर फैलाया जा सकता है, जिससे नाइट्रोजन की मात्रा बढ़ जाती है। जहाँ मृदा अपघटन एक समस्या है, वहाँ धीरे-धीरे विघटित होने वाली मल्लिच सामग्री (कम नाइट्रोजन सामग्री, उच्च कार्बन/नाइट्रोजन का अनुपात) शीघ्र विघटित होने वाली सामग्री की तुलना में दीर्घकालिक सुरक्षा प्रदान करेगी।

मल्लिचंग सामग्री के प्रमुख स्रोत:

(क) सुखी खरपतवार या आवरण फसलों। (ख) फसल अवशेष। (ग) घास की कतरने। (घ) पेड़ों की छंटाई सामग्री। (ङ) बाड़ों से कटी हुई घास। (च) कृषि प्रसंस्करण या वानिकी से अपशिष्ट। (छ) पुआल।

मल्लिचंग की समस्याएं

- * मल्लिचंग के कई फायदे हैं, लेकिन कुछ खास परिस्थितियों में ये समस्याएँ भी पैदा कर सकती हैं।
- * कुछ जीव मल्लिच परत की नम और सुरक्षित परिस्थितियों में बहुत ज्यादा बढ़ सकते हैं। जैसे स्लम और घोघे मल्लिच परत के नीचे बहुत तेजी से बढ़ सकते हैं।
- * चींटियाँ या दीमक, जो फसलों को नुकसान पहुँचा सकते हैं, उन्हें भी रहने के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ मिल सकती हैं।
- * जब फसल अवशेषों का उपयोग मल्लिचंग के लिए किया जाता है, तो कुछ मामलों में कीटों और बीमारियों के संक्रमण का खतरा बढ़ जाता है।
- * तना छेदक जैसे हानिकारक कीट कपास, मक्का या गन्ने जैसी फसलों के डंठलों में जीवित रह सकते हैं।
- * यदि अगली फसल में रोग फैलने का खतरा हो, तो विषाणु या कवक रोगों से संक्रमित पौधों की सामग्री का उपयोग नहीं करना चाहिए।
- * जब कार्बनयुक्त सामग्री, जैसे पुआल या डंटल, का उपयोग मल्लिचंग के लिए किया जाता है, तो सूक्ष्मजीव मिट्टी से नाइट्रोजन का उपयोग इन सामग्रियों को विघटित करने के लिए कर सकते हैं।
- * पौधों की वृद्धि के लिए नाइट्रोजन स्थायी रूप से उपलब्ध नहीं



हो सकती है।

- * मल्लिचंग के लिए मुख्य बाधा आमतौर पर जैविक पदार्थों की अनउपलब्धता होती है।
 - * इसके उत्पादन या संग्रहण में आमतौर पर श्रम की आवश्यकता होती है और यह फसलों के उत्पादन के साथ प्रतिस्पर्धा कर सकता है।
- उपाय:** इन जोखिमों से निपटने के लिए फसल-चक्र अतिआवश्यक है।

मल्लिच के प्रयोग का समय

- * यदि संभव हो, तो मल्लिच को बरसात के मौसम से पहले या उसके शुरू होने पर ही उपयोग करना चाहिए, क्योंकि उस समय मिट्टी सबसे अधिक संवेदनशील होती है।
- * यदि मल्लिच की परत बहुत मोटी नहीं है, तो बीज या पौधे सीधे मल्लिचंग सामग्री के बीच बोए या रोपे जा सकते हैं।
- * सब्जियों के खेतों में, छोटे पौधों के कुछ हद तक मजबूत व बढ़े हो जाने के बाद ही मल्लिच लगाना सबसे अच्छा होता है, क्योंकि ताजी मल्लिच सामग्री के अपघटन से उन्हें नुकसान पहुँच सकता है।
- * यदि मल्लिच बुवाई या रोपण से पहले डाला जाता है, तो मल्लिच की परत बहुत मोटी नहीं होनी चाहिए, ताकि पौधे सफलतापूर्वक मिट्टी से निकाल सकें।
- * मल्लिच को खड़ी फसलों में भी डाला जा सकता है परन्तु मिट्टी की निराई-गुड़ाई के तुरंत बाद।
- * मल्लिच पत्तियों के बीच, सीधे एकल पौधों के चारों ओर (विशेषकर वृक्ष वाली फसलों के लिए) या खेत में समान रूप से फैलाया जा सकता है।

निष्कर्ष

जैविक कृषि में विभिन्न कार्बनिक मल्लिच की सामग्रियाँ का उपयोग खरपतवारों की आवादी को कम करने और मिट्टी की नमी को पर्याप्त स्तर तक संरक्षित करने के लिए यह एक सस्ता स्रोत है। इसलिए व्यवस्थित रूप से प्रबंधित मल्लिचंग की रणनीतियाँ खेतों में पानी की नमी या सुखे की स्थिति में फसलों के सिंचाई जल की आवश्यकता की पूर्ति कर सकता है। अंततः मल्लिचंग फसलों की वृद्धि, विकास, उत्पादन और गुणवत्ता पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाल सकता है।



अशोक ढिल्लों एवं आशीष शिवरान
कृषि विज्ञान केन्द्र, महेन्द्रगढ़, चौ. चरण सिंह
हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

हमारे देश में लगभग 65-70% लोग खेती-बाड़ी के व्यवसाय में सीधे एवं गैर सीधे तौर पर जुड़े हुए हैं। हमारा देश कृषि प्रधान होने के बावजूद अन्य देशों की अपेक्षा प्रति हे. औसत उपज काफी कम है। उदाहरण के तौर पर गेहूँ की उत्पादकता आयरलैंड एवं नीदरलैंड जैसे देशों की 93.78 क्विं. प्रति हे. है जबकि भारत की 35.33 क्विं. प्रति हे. है। खेती पर लागत वर्तमान समय में बहुत अधिक बढ़ गई है। खेती की जुताई, निराई, गुड़ाई, खाद, बीज, दवाईयाँ, कटाई, मजदूरी आदि का खर्च बहुत अधिक बढ़ गया है। आज देश में प्रति व्यक्ति जमीन की जोत 1.1 प्रति हे. से भी कम हो गई है। किसान भाइयों जमीन की जोत को तो नहीं बढ़ाया जा सकता लेकिन खेती की आधुनिक तकनीक अपना कर एवं फार्म प्रबन्ध में छोटी-छोटी बातों को ध्यान में रखकर खेती की लागत को कम और ज्यादा उत्पादन लिया जा सकता है जो निम्नलिखित हैं-

खेती की मिट्टी एवं पानी की जांच- किसान भाइयों को सबसे पहले अपने खेत की मिट्टी एवं पानी की जांच करवानी चाहिए, जिससे कि यह पता चल सके की खेत की मिट्टी किस फसल के लिए ज्यादा उपयुक्त है तथा खेत में नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश आदि तत्वों की कितनी मात्रा उपलब्ध है। जिससे फसल में उचित मात्रा के अनुसार इन तत्वों की कमी दूर की जा सके। खेत में लगे ट्यूबवेल के पानी की जांच से किसान भाइयों को यह पता चल जाता है कि पानी कौन-कौन सी फसल हेतु अधिक लाभप्रद है और कौन सी फसल के लिए हानिकारक साबित हो सकता है। किसान खेत की मिट्टी व पानी की जांच कृषि विज्ञान केंद्र तथा राज्य सरकार के कृषि विभाग की प्रयोगशालाओं में मुफ्त या बहुत कम शुल्क में करवा सकते हैं।

खेत की तैयारी- खेत में दो-तीन गहरी जुताईयाँ बिजाई से पहले डिस्क हरो, मिट्टी पलट हल या देशी हल से करनी चाहिए। क्योंकि इससे भूमि के एक फीट नीचे तक की कड़ी परत टूट जाती है तथा इस भूमि में मौजूद तमाम कीट व खरपतवारों के बीज नष्ट हो जाते हैं। मिट्टी नरम होने के कारण फसल की जड़ों का विकास भी अधिक होता है। इससे खेत में उत्पादन की क्षमता बढ़ जाती है। खेत में किसी भी तरह का घास-फूस नहीं होना चाहिए वरना यह फसल के लिए हानिकारक साबित होता है जिससे पैदावार पर काफी बुरा प्रभाव पड़ता है।

बीज का चयन- मिट्टी एवं पानी के परीक्षण के बाद उन्नत एवं प्रमाणित किस्म के बीजों का चयन करना चाहिए जिससे कि किसान भाई को अच्छी पैदावार मिले और फसल में बिमारियों का प्रकोप भी कम हो। खेत में पौधों की सही संख्या होनी चाहिए क्योंकि कम या ज्यादा संख्या होने से पैदावार पर बुरा प्रभाव पड़ता है। पौधों की संख्या कम होने पर पैदावार कम होगी। पौधों की संख्या ज्यादा होने पर पैदावार ज्यादा नहीं होगी क्योंकि ज्यादा पौधे होने से उन में आपस में विकास को लेकर संसाधनों के इस्तेमाल के लिए आपस में ही प्रतिযোগिता शुरू हो जाती है। इसकी वजह से उपज में भारी कमी हो जाती है। कृषि वैज्ञानिकों के द्वारा हर एक फसल के लिए पौधे से पौधे और कतार से कतार की पूरी तय की जा चुकी है। पौधों की सही संख्या रहने पर 25 प्रतिशत तक पैदावार में बढ़ोतरी की जा सकती है।

बीजोपचार- किसान भाइयों को बिजाई से पहले बीज का उपचार करना चाहिए, जिससे फसल में बीमारियाँ कम लगती हैं और फसल अच्छी होती है। उदाहरण के तौर पर गेहूँ की बीज को विटावैक्स आदि फफूंदनाशक से उपचारित करना चाहिए। चने की अच्छी पैदावार लेने के लिए राइजोबियम के टीके से उपचारित करना चाहिए। राइजोबियम के टीके चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार के माइक्रोबायोलॉजी विभाग से प्राप्त किए जा सकते हैं।

अधिक पैदावार लेने के लिए किसान खेती में अपनाएं उचित प्रबन्धन

बीज मात्रा, बिजाई का समय एवं तरीका- फसल की अच्छी पैदावार लेने के लिए बीज का सही मात्रा में डालना चाहिए और बीजाई सही समय पर करनी चाहिए। फसल की बिजाई का तरीका भी सही होना चाहिए। खेत में फसल के पौधों की लाईन से लाईन, पौधे की पौधे से सही दूरी होने से खेत में पैदावार अच्छी होती है। पछेती बिजाई के लिए पछेती किस्मों एवं अगेती बिजाई के लिए अगेती किस्मों का प्रयोग करना चाहिए। वैज्ञानिकों के शोधों के आधार पर यह पता लगा है कि अगेती बुवाई होने से अच्छा जमाव होने के साथ-साथ कीड़ों एवं बिमारियों का कम से कम हमला होता है और अच्छी उपज प्राप्त होती है।

खरपतवार नियंत्रण- फसल में खरपतवारों का न नियंत्रण करने से 30-60 प्रतिशत तक उपज का नुकसान हो जाता है। इसलिए यह किसान भाइयों के लिए जरूरी हो जाता है कि खरपतवारों को खेत में समय पर ही खत्म कर दिया जाए क्योंकि समय निकल जाने के बाद खरपतवारों को नियंत्रित करने पर खर्च भी ज्यादा लग जाता है और पूरी तरह से नियंत्रण भी नहीं होता है। खरपतवारों की नियंत्रण के लिए दवाईयों का प्रयोग कृषि विश्वविद्यालयों द्वारा बताई गई मात्रा के अनुसार ही प्रयोग करनी चाहिए। फसल में सही समय पर सही तरीके से खरपतवार नियंत्रण करने से पैदावार में 25-30 प्रतिशत तक फायदा लिया जा सकता है।

उर्वरकों का प्रयोग- खेत की मिट्टी की जांच के आधार पर फसल में उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए। बहुत से किसान भाइयों को नाइट्रोजन, पोटाश और फॉस्फोरस के खेतों में प्रयोग का सही ज्ञान नहीं होता। कुछ किसान पोटाश, फॉस्फोरस को फसल के उपर छिड़कते हैं जो कि ठीक नहीं है और इससे उर्वरक भी खराब चला जाता है। इसलिए इन उर्वरकों (पोटाश और फॉस्फोरस) जमीन में नीचे डालना चाहिए। इन उर्वरकों को 1.5-2.0 इंच नीचे बीज की बिजाई करते समय केरा तथा पोरा विधि से डालना चाहिए। नाइट्रोजन उर्वरक को नीचे भी डाला जा सकता है और उपर भी छिड़का जा सकता है। नाइट्रोजन की मात्रा को फसल में पानी लगाने के बाद दो बार छिड़कना अच्छा रहता है।

सिंचाई का समय एवं तरीका- फसल में सिंचाई करने से पहले मौसम की जानकारी होना भी बहुत जरूरी है। इसकी जानकारी के आधार पर ही सिंचाई करनी चाहिए। अच्छी पैदा लेने के लिए सही समय पर फसल में सिंचाई करनी चाहिए। उदाहरण के लिए गेहूँ की अच्छी पैदावार

लेने के लिए फसल में 5-6 बार सिंचाई करनी चाहिए। फसल में पहली सिंचाई 3 सप्ताह बाद तथा दूसरी सिंचाई 25-30 दिन बाद देना जरूरी है क्योंकि पहली तथा दूसरी सिंचाई के सही समय होने पर

फसल में अधिक फुटाव होता है। फसल में दाने बनने के समय पर पानी की कमी नहीं होनी चाहिए। सिंचाई के लिए फव्वारा व टपका विधि का भी प्रयोग कर सकते हैं जिससे पानी की काफी बचत होती है।

निराई-गुड़ाई- भूमि में नमी संरक्षण व खरपतवारों के नियंत्रण के लिए पहली तथा दूसरी सिंचाई के बाद एक या दो गोड़इयाँ जरूर करनी चाहिए नहीं तो फसल कमजोर रहा जाती है और पैदावार में काफी कमी आ जाती है। इसलिए किसान भाइयों को खेत में निराई-गुड़ाई आदि करके खेत में से खरपतवारों को निकाल देना चाहिए। निराई-गुड़ाई फसल में लम्बे समय तक नमी बनाए रखने में भी मददगार साबित होती है।

कीटनाशकों का प्रयोग- कीटनाशकों का प्रयोग कृषि विश्वविद्यालयों द्वारा बताई गई मात्रा के अनुसार ही इस्तेमाल करना चाहिए। किसान भाइयों को कीटों की पहचान होना भी बहुत जरूरी है क्योंकि प्रत्येक कीट फसल को नुकसान नहीं पहुंचाता बल्कि कुछ मित्र कीट फसलों के लिए लाभकारी भी होते हैं। जब फसल में हानिकारक कीटों की संख्या आर्थिक कगार से अधिक हो और मित्र कीटों की संख्या अपर्याप्त हो तभी किसानों को कीटनाशकों का प्रयोग करना चाहिए।

बीमारियों की रोकथाम- फसल में समय-समय पर कई बिमारियाँ लग जाती हैं जैसे पीला रतुआ या धारीदार रतुआ आदि। फसल पर फफूंदनाशक दवाईयों आदि का छिड़काव वैज्ञानिक सलाह पर करके बीमारियों की रोकथाम करनी चाहिए।

मंडी भाव- किसान भाई अपनी फसल को मंडी में बेचने से पहले उसे घर पर ही तोलकर देख ले ताकि यदि मंडी में फसल के उत्पादन को तोलने में कोई गड़बड़ हो तो इसका उसे पता चल सके। घर पर ही अनाज/उत्पाद की साफ-सफाई करके ही मंडी में ले जाना चाहिए ताकि किसान को अपने उत्पाद का अच्छा भाव मिल सके। किसान को अपनी फसल को मंडी में ले जाने से पहले अपनी नजदीक की मंडी के भाव का पता होना चाहिए जिससे की वह अपने उत्पाद के अच्छे भाव ले सके। उसे अपना उत्पाद 2-3 हिस्सों में बेचना चाहिए क्योंकि सीजन में कम भाव मिलता है बाद में ऑफ-सीजन में ज्यादा भाव मिलने की संभावना होती है यदि फिर भी मंडी में कम भाव मिले तो अपने उत्पाद को भंडारित करना चाहिए और उचित भाव मिलने का इंतजार करना चाहिए।

सत्येन्द्र (बेरू वाले) Mob. 9425630881
9691896745

श्री जीवन कृषक सेवा केन्द्र

हमारे यहाँ सभी प्रकार के खेती के बीज, कीटनाशक खरपतवार नाशक दवाईयाँ एवं खाद उचित रेट पर मिलता है।

पता- पिछोर तिराहा, ग्वालियर रोड, डबरा, जिला-ग्वालियर (म.प्र.)



डॉ. आदित्य कृषि और पर्यावरण विज्ञान विभाग, राष्ट्रीय खाद्य प्रौद्योगिकी
उद्यमशीलता एवं प्रबंधन संस्थान (निफ्टेम-के), सोनीपत, हरियाणा

खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय, भारत सरकार के अंगीत भारत का राष्ट्रीय महत्व का संस्थान

प्रो. (डॉ.) जे.एन. भाटिया सेवानिवृत्त वरिष्ठ-मुख्य वैज्ञानिक, चौधरी
चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार, हरियाणा एवं विजिटिंग
प्रोफेसर, श्री गुरु ग्रंथ साहिब विश्व विश्वविद्यालय, फतेहगढ़ साहिब, पंजाब

दूधिया मशरूम पर परिचय: दूधिया मशरूम एक उष्णकटिबंधीय प्रजाति है, जो विशेष रूप से गर्मियों के मौसम में आसानी से उगाई जा सकती है। इसकी खेती न केवल किसानों के लिए अतिरिक्त आय का स्रोत है, बल्कि पोषण की दृष्टि से भी यह अत्यंत महत्वपूर्ण है। दूधिया मशरूम प्रोटीन का अच्छा स्रोत है और इसमें वसा की मात्रा बहुत कम होती है, जिससे यह स्वास्थ्य के प्रति जागरूक लोगों के लिए उपयुक्त है। इसमें विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स (जैसे बी2, बी3, बी5), विटामिन B तथा खनिज जैसे पोटेशियम, फॉस्फोरस और आयरन प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। यह एंटीऑक्सीडेंट गुणों से भरपूर होता है, जो शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने में सहायक हैं। इसके नियमित सेवन से हृदय स्वास्थ्य में सुधार, पाचन तंत्र को मजबूती, तथा वजन नियंत्रण में भी मदद मिलती है। दूधिया मशरूम की खेती कम लागत में शुरू की जा सकती है और इसके लिए अधिक भूमि की आवश्यकता नहीं होती। यह 25-35°C तापमान पर अच्छी तरह उगता है, जिससे यह ग्रीष्मकालीन खेती के लिए आदर्श बनता है। इसकी शेल्फ लाइफ अन्य मशरूम की तुलना में अधिक होती है, जिससे परिवहन और विपणन में सुविधा होती है। इसके अतिरिक्त, यह ग्रामीण युवाओं और छोटे किसानों के लिए स्वरोजगार का एक बेहतर विकल्प है। इस प्रकार, दूधिया मशरूम की खेती न केवल आर्थिक दृष्टि से लाभकारी है, बल्कि पोषण और स्वास्थ्य के लिए भी अत्यंत उपयोगी है।

दूधिया मशरूम की विशेषताएँ, उपयुक्त समय, तापमान-आर्द्रता तथा पोषाधार का विवरण- दूधिया मशरूम, जिसका वैज्ञानिक नाम कैलोसाइबे इंडिका है, यह एक उष्णकटिबंधीय प्रजाति है जिसे सामान्यतः 'मिल्की मशरूम' के नाम से जाना जाता है। यह मशरूम अपने सफेद, मांसल एवं आकर्षक फलनिकाय के कारण बाजार में विशेष पहचान रखता है। इसकी एक प्रमुख विशेषता यह है कि अन्य मशरूम प्रजातियों की तुलना में यह अधिक समय तक ताजगी बनाए रखता है, जिससे इसके भंडारण और विपणन में सुविधा होती है। इसके अतिरिक्त, यह उच्च तापमान सहन करने की क्षमता रखता है, जो इसे विशेष रूप से गर्मियों में खेती के लिए उपयुक्त बनाता है। दूधिया मशरूम की खेती के लिए मध्य फरवरी से अक्टूबर तक का समय सबसे अनुकूल माना जाता है। इस अवधि में भारत के अधिकांश क्षेत्रों में तापमान और आर्द्रता इसके विकास के लिए उपयुक्त रहते हैं, जिससे उत्पादन अच्छा प्राप्त होता है। इसकी सफल खेती के लिए 25°C से 35°C तापमान तथा 70-85% आर्द्रता आवश्यक होती है। यही कारण है कि यह मशरूम उच्च तापमान में भी अच्छी वृद्धि करता है और अन्य मशरूम प्रजातियों की तुलना में अधिक सहनशील माना जाता है। पोषाधार के रूप में गेहूँ का भूसा और धान का पुआल सबसे अधिक उपयोग किए जाते हैं। ये दोनों कृषि अपशिष्ट आसानी से उपलब्ध होते हैं और कम लागत में प्राप्त हो जाते हैं, जिससे दूधिया मशरूम की खेती आर्थिक रूप से लाभकारी बनती है। इन सब विशेषताओं के कारण दूधिया मशरूम न केवल उगाने में सरल है, बल्कि किसानों हेतु एक व्यावसायिक रूप से लाभदायक विकल्प भी है।

खेती की विधि- माध्यम तैयार करने के लिए भूसे को 24 घंटे तक पानी में भिगोकर 2-3 घंटे तक उबाला जाता है। अतिरिक्त पानी को निधार कर एवं ठंडा कर इस भूसे में 5 प्रतिशत की दर से गेहूँ का चोकर अच्छी तरह

दूधिया मशरूम की उन्नत उत्पादन तकनीक

मिलाकर उसमें 4% की दर से बीजाई की जाती है। बीजाई किए हुए माध्यम को पॉलीथिन के बैगों में भरकर 20°-30°C तापमान पर 20-40 दिन तक रखा जाता है। स्पान के माध्यम से फैलने के बाद दो वर्ष पुरानी गोबर की खाद को शोषित करके आवरण मृदा (4 सेंमी.) बिछा दी जाती है। तथा तापमान 30°C से अधिक रखा जाता है। आवरण मृदा बिछने के बाद फसल में प्रतिदिन दो बार पानी दिया जाता है। आवरण मृदा बिछने के 10-12 दिन बाद मशरूम निकलना प्रारंभ होते हैं जो कि 5-6 दिन बाद तोड़ने योग्य हो जाते हैं। प्रति किग्रा. भूसे से 500-600 ग्राम तक मशरूम प्राप्त किये जा सकते हैं। इस मशरूम को उगाने का मुख्य लाभ यह है कि यह ग्रीष्म ऋतु में 35°C पर भी उगाया जा सकता है जबकि बाल्वेरियल के अलावा अन्य मशरूम नहीं उगाये जा सकते हैं तथा इसको तुड़ई के बाद कमरे के तापक्रम पर अन्य मशरूम की तुलना में सबसे अधिक समय तक रखा जा सकता है। मशरूम को ताजा उपयोग करने के अतिरिक्त धूप में सुखाकर, डिबाबन्दी द्वारा अथवा अचार बनाकर लम्बे समय तक रखा जा सकता है।

पोषण एवं औषधीय महत्व: दूधिया मशरूम भारत में व्यावसायिक रूप से उगाई जाने वाली तीसरी प्रमुख मशरूम प्रजाति है, जो बटन और ऑयस्टर मशरूम के बाद आती है। इसकी मजबूत संरचना इसे विभिन्न व्यंजनों में उपयोग के लिए उपयुक्त बनाती है। पोषण की दृष्टि से दूधिया मशरूम एक उच्च-प्रोटीन खाद्य स्रोत है, जिसमें सूखे वजन के आधार पर लगभग 20% से 30% तक प्रोटीन पाया जाता है, जो कई अन्य खाद्य मशरूम के बराबर या उनसे अधिक है। इसमें वसा की मात्रा बहुत कम (लगभग 2-4% सूखा वजन) होती है, जिसमें मुख्यतः लाभकारी असंतृप्त फैटी एसिड जैसे लिनोलिक अम्ल पाए जाते हैं। यह मशरूम विटामिन बी-समूह (लगभग 1.95 mg/100 g), विटामिन D, विटामिन C (लगभग 1.03 mg/100 g ताजा वजन) और विटामिन E (लगभग 0.8 mg/g सूखा वजन) का अच्छा स्रोत है। खनिजों में पोटेशियम (लगभग 28,209 ppm) और फॉस्फोरस (381-469 ppm) प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। इसके अलावा इसमें लगभग 10-15% आहार रेशा (डायटरी फाइबर) होता है, जो पाचन स्वास्थ्य के लिए लाभकारी है। अन्य मशरूम जैसे बटन या ऑयस्टर की तुलना में दूधिया मशरूम की शेल्फ लाइफ अधिक होती है,

जो सामान्य परिस्थितियों में लगभग एक सप्ताह तक ताजा रह सकता है। इसकी सघन एवं ठोस संरचना इसे उष्णकटिबंधीय परिस्थितियों में बिना रेफ्रिजरेशन के भी खराब होने से बचाती है। खाद्य उपयोग की दृष्टि से यह मशरूम अत्यंत बहुउपयोगी है और इसे सब्जी, सूप, करी, स्टिर-फ्राई, पिज्जा टॉपिंग तथा बेकरी उत्पादों (जैसे कुकीज़) में प्रयोग किया जाता है। इसे सुखाकर या कैनिंग के माध्यम से भी संरक्षित किया जा सकता है, जिससे इसकी उपलब्धता पूरे वर्ष बनी रहती है। दूधिया मशरूम में कई जैव सक्रिय यौगिक पाए जाते हैं, जिनमें पॉलीसैकेराइड्स (जैसे व-ग्लूकान और कैलोसाइबिन), फिनोलिक अम्ल (कैफिक अम्ल, सिरिंगिक अम्ल, p-कौमारिक अम्ल) तथा फ्लेवोनॉइड्स (रुटिन और कैटेचिन) शामिल हैं। ये यौगिक प्रबल एंटीऑक्सीडेंट गुण प्रदर्शित करते हैं और शरीर में मुक्त कणों को निष्क्रिय करने में सहायक होते हैं। इस मशरूम के अर्क में जीवाणुरोधी गुण भी पाए गए हैं, जो ग्राम-पॉजिटिव और ग्राम-नेगेटिव दोनों प्रकार के बैक्टीरिया के विरुद्ध प्रभावी हैं। इसके अतिरिक्त, इसमें सूजनरोधी गुण भी होते हैं, जो प्रोटीन डिनैचुरेशन को कम करने और कोशिका झिल्ली को स्थिर करने में सहायक होते हैं। कैंसररोधी क्षमता के संदर्भ में भी दूधिया मशरूम के अर्क ने विभिन्न कोशिका लाइनों (जैसे HeLa, PC3, HT29, HepG2 और MCF-7) में कोशिका वृद्धि को रोकने की क्षमता प्रदर्शित की है। हाल के अध्ययनों में यह भी पाया गया है कि यह सर्वाइकल कैंसर कोशिकाओं पर प्रभावी हो सकता है, विशेष रूप से VEGF जैसे आणविक लक्ष्यों के साथ अंतःक्रिया के माध्यम से। इसके अतिरिक्त, इसके अर्क घाव भरने में सहायक पाए गए हैं, जो इसके एंटीमाइक्रोबियल और एंटी-इन्फ्लेमेटरी गुणों के कारण ऊतक मरम्मत को बढ़ावा देते हैं। मधुमेह प्रबंधन में भी यह उपयोगी सिद्ध हुआ है, जहाँ इसके मेथेनॉलिक अर्क ने रक्त शर्करा स्तर को कम करने में प्रभाव दिखाया है। प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करने में भी यह मशरूम सहायक है, क्योंकि इसमें उपस्थित ग्लूकान और प्रोटीन नैचुरल किलर कोशिकाओं, मैक्रोफेज तथा स्प्लेनोसाइट्स को सक्रिय कर शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाते हैं। इसकी अधिक शेल्फ लाइफ इसके जैवसक्रिय यौगिकों को लंबे समय तक संरक्षित रखने में भी सहायक होती है।

अक्षिता एग्री

राघवेंद्र सिंह

8959728253



**खाद, बीज एवं कीटनाशक दवाओं
के थोक एवं खेरीज विक्रेता**

**हमारे यहां सभी प्रकार के बीज एवं कीटनाशक दवाएं एवं खरपतवार नाशक
दवाएं और अधिक उपज की दवाएं उचित दामों पर मिलती हैं**

पता : अरैया रोड, आंतरी, जिला-ग्वालियर (म.प्र.)



मिन् (शोध छात्र) संसाधन प्रबंधन और उपभोक्ता विज्ञान विभाग, इंद्रा चक्रवर्ती सामुदायिक विज्ञान महाविद्यालय, चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार, (हरियाणा)

यशपाल यादव शोध छात्र, फार्म मशीनरी एवं पावर इंजीनियरिंग विभाग, कॉलेज ऑफ टेक्नोलॉजी एंड इंजीनियरिंग, एमपीयूएटी, उदयपुर (राजस्थान)

"पर्यावरण की रक्षा कोई बड़ी मुहिम नहीं, बल्कि रोज की छोटी आदतों का परिणाम है"

प्रस्तावना

आज के दौर में हमारे घरों से निकलने वाला कचरा, बढ़ती बिजली की खपत और पानी की बर्बादी पर्यावरण के लिए गंभीर समस्या बनती जा रही है। हम अक्सर सोचते हैं कि पर्यावरण संरक्षण केवल बड़े स्तर पर ही संभव है, लेकिन असल बदलाव हमारे अपने घर से शुरू होता है। यदि हम अपने घर के संसाधनों का सही उपयोग करना सीख जाएं, तो हम न केवल अपने खर्च को कम कर सकते हैं, बल्कि प्रकृति की रक्षा में भी महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं।

क्या है हरित गृह प्रबंधन?

हरित गृह प्रबंधन का अर्थ है—घर में पानी, बिजली, भोजन और वस्तुओं का ऐसा उपयोग करना जिससे कम बर्बादी हो और पर्यावरण सुरक्षित रहे। यह एक सोच है, जो हमारे दैनिक जीवन को जिम्मेदार और संतुलित बनाती है।

घर में हरित दृष्टिकोण कैसे अपनाएं ?

1. पानी का समझदारी से उपयोग करें

- * पानी बचाएं, भविष्य बचाएं
- * नल को बेवजह खुला न छोड़ें
- * बारिश के पानी का संग्रह करें
- * कम पानी में काम करने की आदत डालें
- याद रखें: "जल है तो कल है।"

2. ऊर्जा की समझदारी से बचत

- * LED बल्ब और ऊर्जा-सक्षम उपकरण अपनाएं
- * कमरे से निकलते समय स्विच बंद करें
- * दिन में प्राकृतिक रोशनी का उपयोग करें
- छोटा कदम:** बिजली बचत = पैसा बचत + पर्यावरण सुरक्षा

3. कचरा नहीं, संसाधन समझें

ग्रीन टिप बॉक्स

- * गीला और सूखा कचरा अलग करें
- * रसोई के कचरे से खाद बनाएं
- * प्लास्टिक का उपयोग कम करें

संसाधन प्रबंधन में हरित दृष्टिकोण : एक जिम्मेदार गृह प्रबंधन

कचरे को सही तरीके से संभालना ही Zero Waste की शुरुआत है।

4. सोच-समझकर खरीदारी करें

- * जरूरत के अनुसार ही सामान खरीदें
- * कपड़े के बैग और स्टील/कांच के बर्तन इस्तेमाल करें
- * बार-बार उपयोग होने वाली चीजें चुनें
- मंत्र: "कम खरीदें, सही खरीदें।"

5. पुरानी चीजों को दें नया जीवन

- "पुराने कपड़ों से बैग बनाएं
- " डिब्बों को स्टोरेज के लिए उपयोग करें
- " टूटे सामान को ठीक करके दोबारा इस्तेमाल करें इसे ही कहते हैं Reuse और Upcycling

6. घर में लाएं हरियाली

- " इनडोर पौधे लगाएं
- " छोटा किचन गार्डन बनाएं
- " प्राकृतिक हवा और रोशनी को प्राथमिकता दें
- प्रेरणा: "हर घर में एक पौधा, प्रकृति से सीधा नाता।"

महिलाएं: बदलाव की असली शक्ति

जब एक महिला बदलती है, तो पूरा परिवार बदलता है।"

घर के प्रबंधन में महिलाओं की भूमिका सबसे महत्वपूर्ण होती है।



"वे खरीदारी का निर्णय लेती हैं
"संसाधनों का उपयोग तय करती हैं
"बच्चों में अच्छी आदतें विकसित करती हैं
यदि महिलाएं हरित सोच अपनाएं, तो पूरा समाज इस दिशा में आगे बढ़ सकता है।

फायदे जो आपको तुरंत मिलेंगे

- * घर का खर्च कम होगा
- * स्वास्थ्य बेहतर रहेगा
- * घर साफ और व्यवस्थित रहेगा
- * पर्यावरण सुरक्षित रहेगा

निष्कर्ष

हरित दृष्टिकोण अपनाना कोई कठिन कार्य नहीं है, बल्कि यह हमारी रोजमर्रा की छोटी-छोटी आदतों से शुरू होता है। यदि हम अपने घर से ही संसाधनों का सही उपयोग करना शुरू करें, तो यह एक बड़ा बदलाव ला सकता है। एक जिम्मेदार गृह प्रबंधन न केवल हमारे परिवार को बेहतर बनाता है, बल्कि पूरे समाज और पर्यावरण को भी सुरक्षित करता है।

नन्दिनी इन्टरप्राइजेज खाद बीज एवं कीटनाशक



प्रो. रामदीन कुशवाह
84610-11860

हमारे यहां सभी प्रकार के खाद बीज एवं कीटनाशक दवाईयां उचित रेट पर मिलती हैं



पता : चीनोर रोड, छीमक, जिला-ग्वालियर (म.प्र.)



✍ पुष्पेन्द्र यादव, रोहन शेरवत, शुभांशु सिंह
कृषि विस्तार प्रभाग, भाकू अनुप, कृषि अनुसंधान
भवन-1, पूसा नई दिल्ली- 110012

✍ राहुल यादव रामा विश्वविद्यालय मंधना,
कानपुर, उत्तर प्रदेश, 209217

✍ डॉ. कौसल कुमार पाण्डेय शस्य विज्ञान
विभाग, श्री मुरली मनोहर टाउन पोस्ट ग्रेजुएट
कॉलेज, बलिया, उत्तर प्रदेश- 277001

सारांश

गन्ना और स्ट्राबेरी की अंतरफसल प्रणाली एक अभिनव कृषि मॉडल है, जिसमें दीर्घावधि वाली मुख्य फसल (गन्ना) के साथ अल्पावधि और उच्च मूल्य वाली फल फसल (स्ट्राबेरी) को उगाया जाता है। यह प्रणाली भूमि, जल और पोषक तत्वों के कुशल उपयोग के साथ किसानों की आय बढ़ाने का प्रभावी साधन बन सकती है। गन्ने की लंबी वृद्धि अवधि के दौरान खेत के खुले स्थानों का उपयोग स्ट्राबेरी उत्पादन हेतु किया जाता है, जिससे प्रति इकाई क्षेत्र अधिक उत्पादन और लाभ प्राप्त होता है। इस लेख में गन्ना-स्ट्राबेरी अंतरफसल के वैज्ञानिक आधार, कृषि प्रबंधन, आर्थिक लाभ, चुनौतियाँ और संभावनाओं का विस्तृत विवेचन किया गया है।

मुख्य बिंदु

अंतरफसल, गन्ना, स्ट्राबेरी, कृषि नवाचार, उच्च मूल्य फसल, संसाधन उपयोग दक्षता

परिचय

भारतीय कृषि परिदृश्य में बढ़ती जनसंख्या, सीमित भूमि संसाधन और जलवायु परिवर्तन जैसी चुनौतियों के कारण किसानों को पारंपरिक एकल फसल प्रणाली से आगे बढ़कर बहु-फसली प्रणालियों को अपनाने की आवश्यकता है। अंतरफसल खेती ऐसी ही एक वैज्ञानिक और व्यावहारिक पद्धति है, जिसमें एक ही खेत में दो या अधिक फसलों को एक साथ या क्रमिक रूप से उगाया जाता है।

गन्ना भारत की प्रमुख औद्योगिक नकदी फसल है, जिसकी वृद्धि अवधि लंबी होती है और आरंभिक अवस्था में खेत के बड़े भाग में खाली स्थान उपलब्ध रहता है। दूसरी ओर, स्ट्राबेरी एक उच्च मूल्य वाली फल फसल है, जो कम समय में तैयार होकर किसानों को शीघ्र आर्थिक लाभ देती है। गन्ने के साथ स्ट्राबेरी की अंतरफसल प्रणाली किसानों को अतिरिक्त आय, रोजगार और संसाधनों के बेहतर उपयोग का अवसर प्रदान करती है।

1. गन्ना और स्ट्राबेरी अंतरफसल प्रणाली का वैज्ञानिक आधार

अंतरफसल प्रणाली का मुख्य उद्देश्य खेत के सभी संसाधनों जैसे भूमि, सूर्य प्रकाश, जल और पोषक तत्वों का अधिकतम उपयोग करना है। गन्ना एक लंबी अवधि की फसल है, जिसकी प्रारंभिक वृद्धि धीमी होती है और पत्तियों के बीच पर्याप्त खाली स्थान रहता है। इस स्थान का उपयोग स्ट्राबेरी जैसी कम ऊँचाई वाली और जल्दी तैयार होने वाली फसल के लिए किया जा सकता है। स्ट्राबेरी की जड़ प्रणाली उथली होती है, जबकि गन्ने की जड़ें अपेक्षाकृत गहरी होती हैं। इससे

'गन्ने और स्ट्राबेरी की अंतरफसल खेती : आय, संसाधन और नवाचार का समन्वय'



दोनों फसलों के बीच पोषक तत्वों के लिए प्रतिस्पर्धा कम होती है। इसके अतिरिक्त, गन्ने की ऊँची पत्तियाँ आंशिक छाया प्रदान करती हैं, जो स्ट्राबेरी के लिए अनुकूल सूक्ष्म जलवायु बनाती हैं। इस प्रणाली से भूमि उपयोग दक्षता बढ़ती है, क्योंकि एक ही भूमि पर दो फसलों से उत्पादन प्राप्त होता है। साथ ही, विविध फसलें उगाने से कीट-रोग दबाव कम होता है और कृषि पारिस्थितिकी संतुलित रहती है।

2. खेती की तकनीक और फसल प्रबंधन

(क) भूमि की तैयारी और रोपण- गन्ने की रोपाई सामान्यतः गहरी जुताई और मेड़-नाली पद्धति से की जाती है। गन्ने की पत्तियों के बीच 90-120 सेमी की दूरी रखी जाती है, जिससे अंतरफसल के लिए पर्याप्त स्थान मिलता है। स्ट्राबेरी की रोपाई गन्ने की रोपाई के 60-90 दिन बाद की जा सकती है, जब गन्ना पर्याप्त रूप से स्थापित हो जाए। स्ट्राबेरी पौधों को पत्तियों के बीच उठी हुई क्यारियों में लगाया जाता है।

(ख) जल और पोषक तत्व प्रबंधन

गन्ना और स्ट्राबेरी दोनों ही अधिक जल की आवश्यकता वाली फसलें हैं, इसलिए ड्रिप सिंचाई प्रणाली इस अंतरफसल के लिए अत्यंत उपयुक्त है। ड्रिप सिंचाई से जल की बचत होती है और दोनों फसलों को समान रूप से जल उपलब्ध कराया जा सकता है। उर्वरकों का प्रबंधन फसल-विशिष्ट होना चाहिए। गन्ने के लिए नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटैश की अधिक मात्रा की आवश्यकता होती है, जबकि स्ट्राबेरी के लिए संतुलित पोषण के साथ सूक्ष्म पोषक तत्व जैसे बोरॉन और जिंक आवश्यक होते हैं। जैविक खाद, वर्मी कम्पोस्ट और हरी खाद का उपयोग मिट्टी की उर्वरता बनाए रखने में सहायक होता है।

(ग) खरपतवार, कीट और रोग प्रबंधन

अंतरफसल प्रणाली में खरपतवार नियंत्रण अत्यंत महत्वपूर्ण है। मल्टिचिंग (प्लास्टिक या जैविक) स्ट्राबेरी के लिए अत्यधिक लाभकारी होती है, जिससे नमी संरक्षित रहती है और खरपतवार कम होते हैं। कीट और रोग प्रबंधन में समेकित कीट प्रबंधन (IPM) रणनीतियाँ अपनाई जानी चाहिए। फसल विविधता के कारण कई कीटों का प्रकोप कम हो जाता है, परंतु दोनों फसलों के लिए विशिष्ट कीट-रोगों की निगरानी आवश्यक है।

3. आर्थिक लाभ और सामाजिक प्रभाव

गन्ना-स्ट्राबेरी अंतरफसल प्रणाली किसानों के लिए आर्थिक रूप से अत्यंत लाभकारी सिद्ध हो सकती है। गन्ना सामान्यतः 10-12 महीनों में तैयार होता है, जबकि स्ट्राबेरी 4-5 महीनों में फल देना शुरू कर देती है। इससे किसानों को मध्य अवधि में आय प्राप्त होती है, जिससे नकदी प्रवाह सुधरता है। स्ट्राबेरी उच्च मूल्य वाली फसल है, जिसका बाजार मूल्य गन्ने की तुलना में कई गुना अधिक होता है। यदि उचित विपणन व्यवस्था उपलब्ध हो, तो प्रति हेक्टेयर आय में उल्लेखनीय वृद्धि संभव है। इसके अतिरिक्त, स्ट्राबेरी की खेती में श्रम की अधिक आवश्यकता होती है, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर बढ़ते हैं। यह विशेष रूप से महिलाओं और युवाओं के लिए आय का स्रोत बन सकता है।

4. चुनौतियाँ और संभावनाएँ

हालाँकि गन्ना-स्ट्राबेरी अंतरफसल प्रणाली में अनेक लाभ हैं, परंतु कुछ चुनौतियाँ भी हैं। स्ट्राबेरी एक संवेदनशील फसल है, जिसे नियंत्रित तापमान, उचित नमी और उच्च प्रबंधन की आवश्यकता होती है। भारत के कई क्षेत्रों में गर्म जलवायु स्ट्राबेरी के लिए चुनौतीपूर्ण हो सकती है, इसलिए शीतकालीन मौसम में या संरक्षित खेती (पॉलीहाउस, शेडनेट) में इसकी खेती अधिक सफल होती है। इसके अतिरिक्त, स्ट्राबेरी के विपणन के लिए शीत श्रृंखला (Cold Chain) और प्रसंस्करण सुविधाओं की आवश्यकता होती है, ताकि फल की गुणवत्ता बनी रहे। छोटे किसानों के लिए प्रारंभिक निवेश भी एक बाधा हो सकता है, विशेषकर ड्रिप सिंचाई और मल्टिचिंग सामग्री के लिए। भविष्य में, कृषि विस्तार सेवाओं, सरकारी सहायता योजनाओं और किसान उत्पादक संगठनों (FPOs) के माध्यम से इन चुनौतियों को कम किया जा सकता है। गन्ना-स्ट्राबेरी अंतरफसल प्रणाली कृषि विविधीकरण और उच्च मूल्य कृषि की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम हो सकती है।

निष्कर्ष

गन्ना और स्ट्राबेरी की अंतरफसल खेती भारतीय कृषि के लिए एक नवीन और लाभकारी मॉडल प्रस्तुत करती है। यह प्रणाली भूमि उपयोग दक्षता बढ़ाने, संसाधनों का बेहतर प्रबंधन करने और किसानों की आय में वृद्धि करने का प्रभावी साधन है। गन्ने की लंबी अवधि और स्ट्राबेरी की अल्प अवधि वाली प्रकृति दोनों फसलों को एक दूसरे के पूरक बनाती है। हालाँकि इस प्रणाली में तकनीकी ज्ञान, उच्च प्रबंधन और प्रारंभिक निवेश की आवश्यकता होती है, परंतु उचित प्रशिक्षण, सरकारी समर्थन और बाजार सुविधाओं के माध्यम से इसे व्यापक रूप से अपनाया जा सकता है। भविष्य में गन्ना-स्ट्राबेरी अंतरफसल प्रणाली न केवल किसानों की आर्थिक स्थिति सुधार सकती है, बल्कि कृषि क्षेत्र में नवाचार और सतत विकास को भी बढ़ावा दे सकती है। अगर आप चाहें तो मैं इस लेख को पत्रिका-प्रकाशन योग्य फॉर्मेट (लेखक नाम, संस्था, सारणी, चित्र विवरण, कीवर्ड बॉक्स, लाइन स्पेसिंग निर्देश) के साथ भी व्यवस्थित कर सकता हूँ, या शब्द संख्या ठीक 1500 के आसपास एडिट करके दे सकता हूँ।



डॉ. मो. इरफान अहमद अंसारी

सह-प्राध्यापक सह वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं प्रधान अन्वेषक,

अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना

(फसलोपरांत अभियंत्रण एवं प्रौद्योगिकी), कृषि अभियंत्रण

विभाग, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, रांची, झारखंड

प्रस्तावना: महुआ भारत के मध्य एवं पूर्वी भागों का एक महत्वपूर्ण बहुउपयोगी वृक्ष है, जो विशेष रूप से झारखंड के ग्रामीण एवं आदिवासी क्षेत्रों में आजीविका, पोषण और संस्कृति का अभिन्न हिस्सा है। राज्य के रांची, खूंटी, गुमला, सिमडेगा, लोहरदगा, पलामू, लातेहार, पश्चिमी एवं पूर्वी सिंहभूम, सरायकेला-खरसावां, दुमका, गोड्डा तथा संथाल परगना क्षेत्र में महुआ प्रचुर मात्रा में पाई जाती है। राज्य में प्रतिवर्ष लगभग 2 लाख मीट्रिक टन महुआ फूलों का उत्पादन होता है, जो ग्रामीण परिवारों के लिए मौसमी आय का प्रमुख स्रोत है। महुआ के फूल पोषक तत्वों से भरपूर होते हैं तथा इनमें प्राकृतिक मिठास, विशिष्ट सुगंध और औषधीय गुण पाए जाते हैं। महुआ केवल एक वन उपज नहीं है, बल्कि यह ग्रामीण जीवन, परंपरा, खाद्य सुरक्षा और आर्थिक सशक्तिकरण से जुड़ा हुआ संसाधन है। इसके फूलों का उपयोग भोजन, पेय, पशु चारा, औषधीय उत्पाद तथा विभिन्न मूल्य संबंधित खाद्य पदार्थों के निर्माण में किया जाता है। अनुचित प्रबंधन के कारण महुआ फूलों में फफूंदी, खराब गंध, रंग परिवर्तन और पोषक तत्वों की हानि हो सकती है, जिससे बाजार मूल्य भी कम हो जाता है। महुआ के फूलों का उचित ढंग से संग्रहण, सुखाना, भंडारण और प्रसंस्करण करने से किसानों, महिला स्वयं सहायता समूहों तथा ग्रामीण उद्यमियों की आय में कई गुना वृद्धि हो सकती है।

महुआ के फूलों का पोषण एवं औषधीय महत्व: महुआ फूलों प्राकृतिक शर्करा, खनिज तथा जैव सक्रिय यौगिकों का अच्छा स्रोत हैं। इनमें लगभग 68% कार्बोहाइड्रेट, 4-7% प्रोटीन तथा अल्प मात्रा में वसा पाई जाती है। इनमें डेक्टोज, फ्रक्टोज, सुक्रोज तथा माल्टोज जैसी प्राकृतिक शर्कराएँ होती हैं, जिससे यह त्वरित ऊर्जा प्रदान करते हैं। महुआ फूलों में कैल्शियम, आयरन, फॉस्फोरस, मैग्नीशियम, पोटैशियम और जिंक जैसे खनिज तत्व पाए जाते हैं। इसके अतिरिक्त इनमें विटामिन C तथा विटामिन B समूह भी उपस्थित होते हैं। फ्लेवोनॉयड, टैनिन, सैपोनिन तथा एंटीऑक्सीडेंट यौगिकों की उपस्थिति के कारण महुआ को कार्यात्मक खाद्य माना जाता है।

महुआ के फूलों का संग्रहण: महुआ के फूल सामान्यतः मार्च से मई के बीच पेड़ों से गिरते हैं। संग्रहण का सबसे उपयुक्त समय सुबह 5 से 8 बजे के बीच माना जाता है। महुआ फूलों की गुणवत्ता बनाए रखने के लिए संग्रहण से पहले पेड़ के नीचे की भूमि को साफ करना आवश्यक है। पत्तियाँ, घास, पत्थर और अन्य कचरा हटाकर वहाँ साफ प्लास्टिक शीट, तिरपाल, चटाई या जाल बिछाया जाना चाहिए। इससे फूल सीधे मिट्टी के संपर्क में नहीं आते और उनकी स्वच्छता बनी रहती है। **संग्रहण के दौरान निम्नलिखित बातों का विशेष ध्यान रखना चाहिए:**

* गिरे हुए फूलों को प्रतिदिन सुबह एकत्र करना चाहिए। * सड़े, काले, गीले, गंदे या कीट-ग्रस्त फूलों को अलग कर देना चाहिए। * फूलों को साफ टोकरीयों, प्लास्टिक क्रेट या बांस की टोकरी में रखना चाहिए। * संग्रहित फूलों को लंबे समय तक खुले में नहीं छोड़ना चाहिए। * आवश्यकता पड़ने पर फूलों की हल्की सफाई और छंटाई करनी चाहिए। * बेहतर गुणवत्ता के लिए फूलों की डंडी या पुकेसर को अलग किया जा सकता है। उचित संग्रहण से फूलों का रंग, स्वाद

महुआ के फूलों का संग्रहण, सुखाना, भंडारण एवं मूल्य संवर्धन



और बाजार मूल्य बेहतर बना रहता है।

महुआ के फूलों का सुखाना: ताजे महुआ फूलों में लगभग 85-90% तक नमी होती है, इसलिए वे जल्दी खराब हो जाते हैं। संग्रहण के तुरंत बाद फूलों को सुखाना आवश्यक होता है। यदि सुखाने की प्रक्रिया सही ढंग से न की जाए, तो फूलों का प्राकृतिक हल्का पीला रंग, स्वाद और सुगंध प्रभावित हो सकते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में महुआ फूलों को साफ चटाई, तिरपाल, कपड़े या मोटा काला प्लास्टिक पर पतली परत में फैलाकर धूप में सुखाया जाता है। सामान्यतः इन्हें 3-4 दिनों तक धूप में सुखाया जाता है। इस दौरान दिन में 2-3 बार फूलों को पलटना आवश्यक होता है ताकि वे समान रूप से सूख सकें। रात में फूलों को अंदर सुरक्षित स्थान पर रखना चाहिए ताकि उनमें पुनः नमी न आ सके।

महुआ के फूलों का भंडारण: महुआ के फूलों का सही भंडारण अत्यंत आवश्यक है, क्योंकि नमी, कीट तथा फफूंदी के कारण भंडारित फूल जल्दी खराब हो सकते हैं। उचित भंडारण की स्थिति में महुआ के फूलों को 8-12 महीने तक सुरक्षित रखा जा सकता है। भंडारण के लिए केवल पूरी तरह सूखे फूलों का ही उपयोग करना चाहिए तथा साफ, सूखी और हवादार जगह का चयन करना चाहिए। फूलों को एयरटाइट प्लास्टिक कंटेनर, पॉलीलाइन बैग, जूट बैग या फूड ग्रेड प्लास्टिक ड्रम में रखा जा सकता है। बैग और कंटेनर को जमीन से ऊपर लकड़ी के तख्ते पर रखना चाहिए।

महुआ के फूलों का मूल्य संवर्धन: महुआ के फूलों का मूल्य संवर्धन ग्रामीण उद्यमिता और स्वरोजगार का महत्वपूर्ण माध्यम बन सकता है। कच्चे फूल बेचने की तुलना में प्रसंस्कृत उत्पाद तैयार करके अधिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है। महुआ में प्राकृतिक मिठास अधिक होने के कारण इससे महुआ पाउडर, लड्डू, बर्फी, हलवा, पुआ, बिस्कुट, केक, कुकीज़, जैम, जैली, कैंडी, स्कैश, सिरप, शरबत, हेल्थ ड्रिंक, एनर्जी बार, मिश्रित मिलेट उत्पाद, पोषक पेय तथा पशु चारा एवं ऊर्जा युक्त फीड जैसे अनेक उत्पाद विकसित किए जा सकते हैं। महुआ के फूलों को सुखाकर पाउडर बनाया जा सकता है और इसे आटा, केक, बिस्कुट, कुकीज़ तथा स्वास्थ्य पेय में मिलाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त रागी, ज्वार, बाजरा तथा अन्य मोटे अनाजों के साथ मिलाकर पौष्टिक उत्पाद भी विकसित किए जा सकते हैं।

महुआ फूल आधारित उत्पादों में उपयोग होने वाले खाद्य योजक: महुआ आधारित उत्पादों की गुणवत्ता, रंग, स्वाद और शेल्फ लाइफ बढ़ाने के लिए कुछ खाद्य योजकों का उपयोग किया जा सकता है। इनमें साइट्रिक अम्ल का उपयोग रंग और स्वाद संरक्षण के लिए, पोटैशियम मेटाबाइसल्फाइट (KMS) का उपयोग संरक्षक के रूप में,

सोडियम बेंजोएट का उपयोग पेय और स्कैश के संरक्षण हेतु, पेक्टिन का उपयोग जैम और जैली बनाने में, माल्टोडेक्सट्रिन का उपयोग पाउडर उत्पादों में प्रवाह बनाए रखने हेतु तथा ग्वार गम का उपयोग गाढ़ापन बढ़ाने के लिए किया जा सकता है। इन योजकों का उपयोग निर्धारित मानकों और खाद्य सुरक्षा नियमों के अनुसार किया जा सकता है।

ग्रामीण रोजगार और महिला सशक्तिकरण: महुआ के फूलों का संग्रहण, प्रसंस्करण और विपणन ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार सृजन का महत्वपूर्ण माध्यम बन सकता है। महिला स्वयं सहायता समूह, किसान उत्पादक संगठन तथा ग्रामीण युवा छोटे स्तर पर महुआ प्रसंस्करण इकाइयाँ स्थापित कर सकते हैं। कम लागत वाले उपकरणों जैसे सफाई टेबल, पुकेसर हटाने की मशीन, ट्रे ड्रायर, ग्राइंडर, आटा मिश्रक, बेकिंग ओवन, वजन मशीन, पैकेजिंग मशीन, इत्यादि की सहायता से छोटे स्तर पर उद्योग शुरू किए जा सकते हैं। महुआ आधारित सूक्ष्म उद्योग महिलाओं की आय बढ़ाने, स्वरोजगार विकसित करने तथा गांवों में आर्थिक गतिविधियों को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। महुआ आधारित उत्पादों की मांग ग्रामीण हाट-बाजार तक सीमित नहीं है, बल्कि शहरी बाजार, ऑर्गेनिक स्टोर, ट्राइबल आउटलेट तथा ऑनलाइन प्लेटफॉर्म तक बढ़ रही है।

निष्कर्ष: महुआ झारखंड के ग्रामीण एवं आदिवासी समाज की आजीविका, पोषण, संस्कृति और आर्थिक विकास का महत्वपूर्ण आधार है। वैज्ञानिक तरीके से संग्रहण, स्वच्छ सुखाने, सुरक्षित भंडारण तथा प्रसंस्करण द्वारा महुआ के फूलों को सिरप, पेय पदार्थ, शहद, बेकरी उत्पाद, मिठाइयाँ, स्नैक्स तथा अन्य उच्च मूल्य वाले उत्पादों में परिवर्तित किया जा सकता है। वर्तमान समय में प्राकृतिक, जैविक और पारंपरिक उत्पादों की मांग तेजी से बढ़ रही है, जिससे महुआ आधारित उत्पाद भविष्य में खाद्य एवं पेय उद्योग में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर सकते हैं। यदि इन उत्पादों का वैज्ञानिक तरीके से निर्माण, आकर्षक पैकेजिंग, ब्रांडिंग और विपणन किया जाए, तो किसानों, महिला स्वयं सहायता समूहों, ग्रामीण युवाओं और लघु उद्यमियों के लिए रोजगार और आय के नए अवसर उत्पन्न हो सकते हैं। महुआ का व्यावसायिक उपयोग पर्यावरण-अनुकूल, स्थानीय संसाधन आधारित तथा सतत विकास की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। इससे =वन से धन= की अवधारणा को मजबूती मिलेगी, ग्रामीण अर्थव्यवस्था को बल मिलेगा तथा आत्मनिर्भरता बढ़ेगी। इस प्रकार महुआ फूलों का वैज्ञानिक प्रबंधन, मूल्य संवर्धन और विपणन न केवल ग्रामीण समृद्धि, महिला सशक्तिकरण और सतत आजीविका को बढ़ावा दे सकता है, बल्कि =वन से धन= की अवधारणा को भी साकार कर सकता है।



✍ निखिल शर्मा, अंशु कुमार पाण्डेय (शोधार्थी)

✍ अजय कुमार जोशी (अधिष्ठाता)

✍ सविता (सहायक प्राध्यापक) वीर चंद्र सिंह
गढ़वाली उत्तराखण्ड उद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय,
भरसा, पौड़ी गढ़वाल, उत्तराखण्ड 246123

✍ अदिति पाण्डेय शोधार्थी, कीट विज्ञान

विभाग, जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय,
कृषिनागर, अधरताल, जबलपुर, (म.प्र.)

परिचय: चाउ-चाउ (सेचियम एड्यूल) कुकुरबिटेसी (कद्दु वर्गीय) परिवार से संबंधित है। चाउ-चाउ का यह पौधा भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्रों की जनजातियों के आहार का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। चाउ-चाउ कुकुरबिटेसी कुल का एकबीजपत्री (एक बीज वाला) फल है, जिसका गुणसूत्र क्रमांक $2n=28$ है। यह विश्व भर में उपोष्णकटिबंधीय और उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में पाया जाता है तथा हिमालय पर्वत श्रृंखला में मुख्यतः हिमाचल प्रदेश एवं उत्तराखण्ड के नीचले हिस्सों में उगाया जाता है, इसे 1200-1500 मीटर ऊंचाई तक उगाया जा सकता है, यह अपने फलों, कोमल टहनियों, युवा पत्तियों और कंदयुक्त जड़ों के लिए उगाई जाने वाली सबसे लोकप्रिय सब्जियों में से एक है, जिसे आमतौर पर स्क्रैश कहा जाता है। फलों का कम कैलोरी मान इसे मरीजों के आहारशिशु आहार के लिए उपयुक्त बनाता है और मधुमेह रोगियों के लिए आलू के स्थान पर उपयोग भी किया जा सकता है। तकनीकी रूप से, चाउ-चाउ एक फल है, लेकिन इसका उपयोग अक्सर सब्जी के रूप में किया जाता है। चाउ-चाउ एक शाकीय बहुवर्षीय बेल है जो 5 वर्षों तक आर्थिक रूप से लाभकारी रहता है। इसमें सजीवजनक (विविध) तरह का अंकुरण होता है। इसका उत्पत्ति स्थान मेक्सिको और ग्वाटेमाला माना जाता है तथा इसे 18वीं और 19वीं शताब्दी के बीच एटिल्स और दक्षिण अमेरिका से भारत में लाया गया था। इसके फल चमकीले हरे, बड़े और नाशपाती के आकार के समान होते हैं। जैव सक्रिय यौगिक (बायोएक्टिव कंपाउंड्स) के कारण चायोट के कई पौष्टिक और औषधीय फायदे हैं, जो की इसके उत्पादन की मांग को और बढ़ा देते हैं।

चाउ-चाउ के पोषण का महत्व एवं स्वास्थ्य लाभ: चाउ-चाउ सब्जी संतुलित मानव आहार का एक महत्वपूर्ण घटक है। यह उच्च पोषक तत्वों से भरपूर है और इसमें आवश्यक खनिज, रेशे, एंटीऑक्सीडेंट और विटामिन सी की प्रचुर मात्रा पाई जाती है, जिससे वैश्विक पोषण सुरक्षा प्राप्त करने में भी इसका महत्वपूर्ण योगदान है। रेशे स्वस्थ पाचन तंत्र के लिए भी एक महत्वपूर्ण पोषक तत्व है और यह शरीर को स्वस्थ रखता है। फल के गूदे की कोमलता इसे उपहार स्वरूप देने के लिए विशेष रूप से उपयुक्त बनाती है। शिशु आहार, जूस, सॉस और पेस्ट को गाढ़ा करने के लिए इसका उपयोग किया जाता है। इसमें फाइबेकमिकल और औषधीय गुण भी पाए जाते हैं। कुछ शोधों से यह सिद्ध हुआ है कि इसमें फेनोलिक एसिड, टैनिन और स्टिलबेन सहित पॉलीफेनॉल होते हैं। पॉलीफेनॉल में एलर्जी-रोधी, सूजन-रोधी, विषाणु-रोधी, कैंसर-रोधी और हाइपोग्लाइसेमिक प्रभाव होते हैं। यह स्वस्थ गर्भावस्था में सहायक हो सकता है इसमें कैंसर रोधी गुण होते हैं और यह बढ़ती उम्र के लक्षणों को धीमा कर सकता है। **चायोट कई पोषक तत्वों और एंटीऑक्सीडेंट यौगिकों से भरपूर है, इसलिए चायोट सब्जी का स्वास्थ्य के लिए निम्नलिखित संभावित उपयोग हो सकते हैं, किस्में दो प्रकार की हो फल वाले और सफेद फल वाले।**

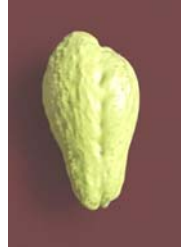
चाउ चाउ (सेचियम एड्यूल) भारत में एक कम उपयोगी फसल पोषण और स्वास्थ्य लाभ एवं उत्पादन तकनीक

जलवायु और मृदा: चाउ-चाउ एक ग्रीष्मकालीन मौसम की फसल है, जिसे ठंडी जलवायु और अच्छी नमी वाले क्षेत्रों में आसानी से उगाया जा सकता है। इसके विकास के लिए इष्टतम तापमान 18-22 डिग्री सेल्सियस है और 1200-1500 मी. की ऊंचाई पर अनुकूल रूप से उगाता है। मैदानी इलाकों में यह सर्दियों के मौसम में अच्छी तरह से उगाता है। सर्दियों के मौसम में इसे मध्यम तापमान में उगाया जाता है। 4.4 डिग्री सेल्सियस से कम तापमान पौधे को नुकसान पहुंचाता है और 29 डिग्री सेल्सियस से अधिक तापमान पर फूलों के गिरने की समस्या देखी जाती है जिससे छोटे और विकृत फल लगते हैं एवं उपज में गिरावट होती है। यह पाले के प्रति अत्यधिक संवेदनशील है। चाउ-चाउ उगाने हेतु पर्याप्त नमी और उच्च कार्बनिक पदार्थ वाली उपजाऊ, उच्च जल निकास वाली दोमट मिट्टी आदर्श होती है। चाउ-चाउ हेतु आदर्श पीएच 5.5-6.5 होता है।

चेयोट का पौधरोपण: अप्रैल-मई माह के दौरान किया जाता है जो इसके वृद्धि एवं विकास के लिए अनुकूल होता है। **प्रवर्धन:** चेयोट का प्रवर्धन आमतौर पर अंकुरित फलों द्वारा किया जाता है, जिनमें सजीवजनक अंकुरण होता है। हालांकि, ठंडे भंडारण के लिए (10 डिग्री सेल्सियस) तापमान में रखने पर बीज का अंकुरण विलंबित हो सकता है। इसमें वानस्पतिक प्रवर्धन भी किया जाता है, उसके लिए 15-20 सेमी से अधिक लंबाई की तने की कटिंग का भी उपयोग किया जा सकता है। ज्यादा पैदावार देने वाली बेलों से तोड़े गए पूरी तरह पके और अंकुरित फलों को गड्डों में 2-3 फल प्रति गड्डा के हिसाब से लगाया जाता है।

भूमि की तैयारी एवं फसल अंतरण: चाउ चाउ की वृद्धि के लिए अच्छी तरह से ढीली, अच्छी जल निकासी वाली और जैविक पदार्थों से भरपूर मिट्टी की आवश्यकता होती है। गोबर की खाद को मिट्टी में मिलाया जाता है और गड्डों को एक तिहाई गोबर की खाद से भर दिया जाता है, और अंकुरित फलों को सीधे गड्डों के बीच में लगाया जाता है। पौध रोपण के लिए 0.5 मीटर × 0.5 मीटर × 0.5 मीटर या 45 सेमी × 45 सेमी × 45 सेमी आकार के गड्डे बनाये जाते हैं, तथा गड्डे से गड्डे एवं कतार से कतार की दूरी 2.4 × 1.8 मीटर या 3 × 2 मीटर रखी जाती है और खोदे हुए गड्डों में 10 किलो गोबर की खाद, 250 ग्राम यूरिया, 500 ग्राम सुपर फॉस्फेट और 500 ग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश भरें। जिससे कि पौधे को प्रारंभिक अवस्था में पोषक तत्व की प्राप्ति हो सके।

प्रशिक्षण (ट्रेनिंग): घर के बगीचे में, बेलों को सहारा देने के लिए 2 मीटर की ऊंचाई पर पंजाल या जाली बनाई जाती है। बेलें छोटे पेड़ों पर भी चढ़ सकती हैं। बेल को जमीन से लगभग 30 सेंटीमीटर की लंबाई पर सहारा देना शुरू कर देना चाहिए। एक बार जब बेल जड़ पकड़ लेती है, तो उसकी शाखाएँ लताओं के कारण आसानी से फेल जाती हैं। **छंटाई:** एक वर्ष में दो फलने-फूलने का मौसम होता है और प्रत्येक मौसम के अंत में बेलों की छंटाई की जाती है, जिससे तने का केवल



लगभग 1.5 मीटर का एक छोटा सा हिस्सा ही बचा रहता है। मुख्यतः दिसंबर में बेलों की छंटाई की जाती है, जिसमें जमीन से 120 से 150 सेंटीमीटर तक तने का केवल एक हिस्सा छोड़ा जाता है। यह प्रक्रिया मई में

दोहराई जाती है और इस प्रकार दो फसलें प्राप्त होती हैं, एक सर्दियों की छंटाई के बाद और दूसरी मई में गर्मियों की छंटाई के बाद।

बीज दर: चेयोट के अच्छे प्रवर्धन के लिए पूरी तरह से पके हुए फलों का उपयोग किया जाता है, जिनकी अंकुरण प्रक्रिया तेज होती है। क्योंकि इसका वानस्पतिक प्रवर्धन होता है, इसलिए बीज की दर रोपण हेतु आवश्यक फलों की संख्या पर निर्भर करती है। प्रति हे. में लगभग 1000-1200 फलों की बीज दर होती है। प्रत्येक फल में एक बीज होता है, इसलिए इसे रोपण सामग्री के रूप में उपयोग किया जाता है।

पोषण प्रबंधन: नियमित खाद की आवश्यकता नहीं होती है। कुछ किसान राख, बकरी की खाद, गोबर की खाद और अमोनियम सल्फेट का प्रयोग करते हैं। अमोनियम सल्फेट 57 ग्रा. प्रति गड्डे की दर से डाला जाता है। इससे फल का आकार और कुल उपज में सुधार होता है। गोबर की खाद सबसे संतोषजनक प्रतीत होती है और इसे वसंत ऋतु की शुरुआत में, पौधों के बढ़ने से पहले डालना चाहिए। एनपीके 120:80:80 किलोग्राम प्रति हे. की दर से फॉस्फोरस और पोटेशियम की पूरी खुराक और नाइट्रोजन की आधी खुराक के साथ बेल के विकास के समय और शेष आधी नाइट्रोजन की खुराक फूल आने से पहले डाली जाती है।

सिंचाई: चाउ-चाउ किस्म के पौधों की स्वस्थ वृद्धि और फल उत्पादन के लिए उचित सिंचाई अत्यंत महत्वपूर्ण है।

सिंचाई के लिए महत्वपूर्ण चरण:

* **वानस्पतिक अवस्थाएं:** बेल की स्वस्थ वृद्धि को बढ़ावा देने के लिए नियमित सिंचाई आवश्यक है।

* **आने की अवस्थाएं:** अच्छे फल लगने के लिए फूल आने के दौरान पर्याप्त नमी होना महत्वपूर्ण है।

* **फल लगने की अवस्था:** फल बनने और विकसित होने के दौरान, लगातार नमी बड़े और बेहतर गुणवत्ता वाले फल पैदा करने में मदद करती है। पानी की बौछार से सिंचाई करने से परागण के दौरान मधुमक्खियों की गतिविधि बाधित हो सकती है, जिसके परिणामस्वरूप फूल झड़ सकते हैं।

फसल कटाई: कटाई का चरम मौसम अक्टूबर से दिसंबर और मई से जून के बीच होता है। फूल आने के लगभग 30 दिनों में ही ये फल विक्री योग्य आकार के हो जाते हैं और पूरी तरह पकने से पहले ही इन्हें तोड़ लिया जाता है। एक मौसम में कोमल फलों की कटाई 2-3 महीने तक चलती है।

उपज: एक पौधा पहले वर्ष में 70-100 फल (40-50 किलोग्राम) उपज देता है। दूसरे वर्ष के दौरान 500-600 फल।

✍ **सृष्टि, प्रतिभा सिंह** (पीएच.डी. शोधार्थी) सब्जी विज्ञान विभाग, बागवानी महाविद्यालय, डॉ. यशवंत सिंह परमार बागवानी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, सोलन, हिमाचल प्रदेश-173230

✍ **डॉ. सतीश कुमार शर्मा** (प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष) पादप रोगविज्ञान विभाग, बागवानी महाविद्यालय, डॉ. यशवंत सिंह परमार बागवानी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, सोलन, हिमाचल प्रदेश-173230

✍ **डॉ. अंजू शर्मा** (सहायक प्रोफेसर) बुनियादी विज्ञान विभाग, वानिकी महाविद्यालय, डॉ. यशवंत सिंह परमार बागवानी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, सोलन, हिमाचल प्रदेश-173230

सारांश:

भिंडी भारत सहित उष्ण एवं उपोष्ण क्षेत्रों में व्यापक रूप से उगाई जाने वाली एक महत्वपूर्ण सब्जी फसल है। इस फसल की उत्पादकता को प्रभावित करने वाले प्रमुख जैविक कारकों में येलो वेन मोजेक वायरस सबसे अधिक विनाशकारी माना जाता है। यह रोग मुख्यतः *Bemisia tabaci* (सफेद मक्खी) द्वारा प्रसारित होता है और तेजी से पूरे खेत में फैल सकता है। सक्रमित पौधों में पत्तियों की नसों का पीला पड़ना, मोजेक पैटर्न बनना, पत्तियों का विकृत होना तथा पौधे की वृद्धि रुक जाना प्रमुख लक्षण हैं। गंभीर संक्रमण की स्थिति में फलन प्रभावित होता है, फल छोटे और कठोर बनते हैं तथा बाजार मूल्य में भारी गिरावट आती है। अनुकूल परिस्थितियों में यह रोग 80-100% तक उपज हानि कर सकता है। चूंकि यह एक विषाणुजनित रोग है, इसका प्रत्यक्ष उपचार संभव नहीं है, इसलिए इसका नियंत्रण मुख्यतः वाहक नियंत्रण, प्रतिरोधी किस्मों के उपयोग तथा समेकित कीट प्रबंधन रणनीतियों के माध्यम से किया जाता है।

परिचय

भिंडी भारत की प्रमुख सब्जी फसलों में से एक है, जिसे विभिन्न जलवायु परिस्थितियों में वर्षभर उगाया जा सकता है। यह फसल पोषण की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसमें विटामिन, खनिज एवं फाइबर प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। हालांकि, भिंडी की खेती में अनेक रोग एवं कीट समस्याएँ उत्पन्न होती हैं, जिनमें येलो वेन मोजेक वायरस सबसे गंभीर है। यह रोग विशेष रूप से उन क्षेत्रों में अधिक पाया जाता है जहाँ तापमान अधिक (25-35°C) तथा वातावरण शुष्क होता है, जो सफेद मक्खी की वृद्धि के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ प्रदान करता है। येलो वेन मोजेक वायरस का आर्थिक महत्व अत्यधिक है, क्योंकि यह न केवल उत्पादन को कम करता है बल्कि उत्पाद की गुणवत्ता को भी प्रभावित करता है। फल विकृत और कठोर हो

भिंडी में येलो वेन मोजेक वायरस

लक्षण और नियंत्रण उपाय

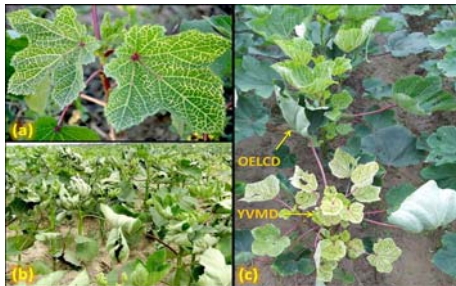
जाते हैं, जिससे उनकी बाजार में मांग घट जाती है। यह रोग बीज द्वारा नहीं फैलता, बल्कि केवल कीट वाहक के माध्यम से एक पौधे से दूसरे पौधे में फैलता है। अतः इसके प्रबंधन के लिए कीट नियंत्रण, फसल प्रबंधन तथा वैज्ञानिक कृषि तकनीकों का समन्वित उपयोग अत्यंत आवश्यक है।

रोग का कारक

- येलो वेन मोजेक वायरस, Begomovirus समूह का एक DNA युक्त विषाणु है, जो Begomovirus वर्ग में आता है।
- यह वायरस पौधों की कोशिकाओं में प्रवेश कर उनके क्लोरोप्लास्ट एवं चयापचय क्रियाओं को प्रभावित करता है।
- परिणाम स्वरूप क्लोरोफिल का निर्माण बाधित होता है, जिससे पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं।

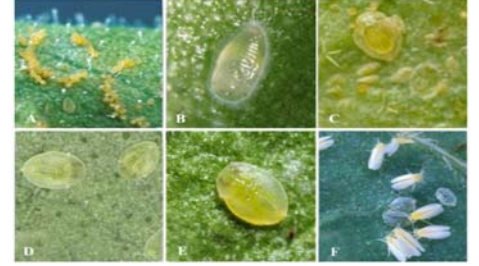
लक्षण

- प्रारंभ में पत्तियों की नसों में हल्का पीलापन दिखाई देता है।
- धीरे-धीरे पूरी नसों चमकीले पीले रंग की हो जाती हैं।
- पत्तियों के मध्य भाग में मोजेक पैटर्न विकसित होता है।
- पत्तियाँ छोटी, मोटी एवं विकृत हो जाती हैं।
- पौधे की वृद्धि रुक जाती है।
- फल छोटे, कठोर एवं विकृत हो जाते हैं।



वाहक

- इस रोग का मुख्य वाहक *Bemisia tabaci* है।
- यह कीट सक्रमित पौधों से वायरस ग्रहण करता है।



- स्वस्थ पौधों पर जाकर वायरस का संचार करता है।
- इसकी संख्या अधिक होने पर रोग तेजी से फैलता है।

रोग का प्रसार

- यह रोग बीज जनित नहीं है। ● केवल सफेद मक्खी के माध्यम से फैलता है। ● सक्रमित खेतों के पास नई फसल लगाने से संक्रमण तेजी से बढ़ता है।

अनुकूल परिस्थितियाँ

- तापमान: 25-35°C ■ शुष्क एवं कम वर्षा वाला वातावरण ■ सफेद मक्खी की अधिक जनसंख्या ■ लगातार भिंडी की खेती

नियंत्रण उपाय

- (क) सांस्कृतिक उपाय ■ प्रतिरोधी किस्मों का उपयोग ■ समय पर बुवाई ■ खरपतवार नियंत्रण ■ सक्रमित पौधों को हटाना
- (ख) यांत्रिक उपाय ● पीले चिपचिपे ट्रैप का उपयोग
- (ग) जैविक नियंत्रण ● नीम तेल का छिड़काव ● प्राकृतिक शत्रुओं का संरक्षण
- (घ) रासायनिक नियंत्रण ■ इमिडाक्लोप्रिड ■ थियामेथॉक्सम ■ एसिटामिप्रिड
- (ङ) समेकित कीट प्रबंधन ● सभी उपायों का संयुक्त उपयोग ● नियमित निगरानी एवं समय पर नियंत्रण

निष्कर्ष

येलो वेन मोजेक वायरस भिंडी की खेती के लिए अत्यंत हानिकारक रोग है, जो अनुकूल परिस्थितियों में पूरी फसल को नष्ट कर सकता है। चूंकि यह एक विषाणुजनित रोग है, इसलिए इसका प्रत्यक्ष उपचार संभव नहीं है। इस रोग के प्रभावी नियंत्रण के लिए सफेद मक्खी का प्रबंधन, प्रतिरोधी किस्मों का चयन, तथा समेकित कीट प्रबंधन का पालन अत्यंत आवश्यक है। यदि किसान समय पर उचित उपाय अपनाते हैं, तो इस रोग से होने वाली हानि को काफी हद तक कम किया जा सकता है और बेहतर उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।



सृष्टि पीएच.डी. शोधार्थी, डॉ. यशवंत सिंह
परमार बागवानी एवं वानिकी विश्वविद्यालय,
सोलन, हिमाचल प्रदेश-173230

सब्जी फसलों में पौध प्रबंधन: नर्सरी, हार्डनिंग एवं रोपाई से बेहतर उत्पादन

सारांश

सब्जी उत्पादन की सफलता काफी हद तक रोपाई के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले पौधों की गुणवत्ता पर निर्भर करती है। स्वस्थ और मजबूत पौधे बेहतर अंकुरण, तीव्र वृद्धि और अधिक उपज सुनिश्चित करते हैं। हालांकि, कई किसान अनुचित पौध प्रबंधन के कारण कम जीवित रहने की दर, रोपाई के बाद पौधों को झटका लगना और उत्पादकता में कमी जैसी समस्याओं का सामना करते हैं। इनमें से, रोपाई से पहले पौधों को कठोर बनाना पौधों की मृत्यु दर का एक प्रमुख कारण है।

पौधों को कठोर बनाना एक सरल लेकिन अत्यंत प्रभावी प्रक्रिया है जो पौधों को सूर्य के प्रकाश, हवा और नमी की कमी जैसी बाहरी पर्यावरणीय परिस्थितियों के अनुकूल धीरे-धीरे ढलने में मदद करती है। उचित नर्सरी तैयार करने और वैज्ञानिक रोपाई तकनीकों के साथ मिलकर यह फसल की पैदावार में उल्लेखनीय सुधार करती है। यह लेख नर्सरी प्रबंधन, पौधों को कठोर बनाने की विधियों और रोपाई प्रथाओं के महत्व पर विस्तार से चर्चा करता है। इन तकनीकों को अपनाने से किसानों को नुकसान कम करने, फसल के अंकुरण में सुधार करने और अंततः सब्जी की खेती से अपनी आय बढ़ाने में मदद मिल सकती है।

परिचय

सब्जी की खेती किसानों के लिए आय का एक महत्वपूर्ण स्रोत बनती जा रही है, क्योंकि इसकी उत्पादकता अधिक होती है, कम समय में तैयार हो जाती है और बाजार में इसकी मांग निरंतर बनी रहती है। पारंपरिक खेतों में उगाई जाने वाली फसलों की तुलना में, सब्जियां प्रति इकाई क्षेत्रफल पर अधिक लाभ देती हैं और एक वर्ष में कई फसलें उगाने की सुविधा प्रदान करती हैं। बढ़ती जनसंख्या और पोषण के प्रति जागरूकता के साथ, ताजी सब्जियों की मांग लगातार बढ़ रही है, जिससे किसानों के लिए बेहतर आर्थिक अवसर पैदा हो रहे हैं।

सब्जी की खेती की सफलता काफी हद तक रोपण के लिए उपयोग किए जाने वाले पौधों की गुणवत्ता पर निर्भर करती है। मजबूत और स्वस्थ पौधे खेत में जल्दी स्थापित हो जाते हैं, तेजी से बढ़ते हैं और अधिक उपज देते हैं। दूसरी ओर, कमजोर या अनुचित तरीके से प्रबंधित पौधे खराब फसल, धीमी वृद्धि और कम उत्पादकता का कारण बनते हैं। इसलिए, उचित पौध प्रबंधन सब्जी की खेती में एक महत्वपूर्ण कदम है।

अधिकांश मामलों में, पौधों को नर्सरी में संरक्षित और नियंत्रित परिस्थितियों में उगाया जाता है, जहां उन्हें पर्याप्त नमी, छाया और देखभाल मिलती है। हालांकि, खेत की परिस्थितियां काफी अलग होती हैं, जहां अक्सर पौधे उच्च तापमान, तेज धूप, हवा और अनियमित जल आपूर्ति के संपर्क में आते हैं। जब पौधों को बिना तैयारी के सीधे नर्सरी से खेत में रोपा जाता है, तो वे अचानक पर्यावरणीय तनाव का अनुभव करते हैं, जिसे आमतौर पर रोपण आघात के रूप में जाना जाता है। इससे पौधों में मुरझाहट, विकास में देरी और कभी-कभी मृत्यु भी हो जाती है। इस समस्या से निपटने के लिए, पौधों को कठोर बनाना



आवश्यक है। रोपण से पहले पौधों को धीरे-धीरे खेत की परिस्थितियों के अनुकूल ढालने की प्रक्रिया को कठोर बनाना कहते हैं, जिससे वे तनाव सहन करने और आसानी से अनुकूलित होने में सक्षम हो जाते हैं। उचित नर्सरी तैयार करने और वैज्ञानिक रोपण विधियों के साथ-साथ, कठोर बनाना पौधों के जीवित रहने और फसल के समग्र प्रदर्शन को बेहतर बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसलिए, सब्जी की खेती में उच्च उत्पादकता और लाभप्रदता प्राप्त करने के लिए इन विधियों को अपनाना आवश्यक है।

पौध रोपण: सब्जी की खेती में पौध रोपण पहला और सबसे महत्वपूर्ण चरण है। यह पौध के प्रारंभिक विकास चरणों के दौरान उनकी उचित देखभाल और प्रबंधन सुनिश्चित करता है।

स्थान का चयन- * अच्छी जल निकासी वाली, उपजाऊ भूमि चुनें * जलभराव से बचें * सिंचाई की सुगम उपलब्धता सुनिश्चित करें

मिट्टी की तैयारी- * बारीक, ढीली मिट्टी तैयार करें * कम्पोस्ट या गोबर की खाद जैसी जैविक खाद मिलाएं * बेहतर जल निकासी के लिए उठी हुई क्यारियों का उपयोग करें

बीज उपचार- * बीजों को रोगों से बचाने के लिए फफूंदनाशक या जैविक एजेंटों से उपचारित करें * प्रमाणित और उच्च गुणवत्ता वाले बीजों का उपयोग करें

बुवाई और देखभाल- * बीजों को उचित गहराई और दूरी पर बोएं * हल्की सिंचाई करें * पौधों को छाया जाल या जैविक सामग्री से सुरक्षित रखें

पौधों को कठोर बनाना: रोपण से पहले पौधों को कठोर बनाना एक महत्वपूर्ण चरण है, जिसमें पौधों को धीरे-धीरे खेत की परिस्थितियों के अनुकूल बनाया जाता है।

कठोर बनाने का महत्व

* रोपण के झटके को कम करता है * पौधों के जीवित रहने की दर बढ़ता है * जड़ों और तनों की मजबूती बढ़ता है * गर्मी, हवा और पानी की कमी के प्रति सहनशीलता बढ़ता है

कठोर बनाने की विधियाँ

* रोपण से 5-7 दिन पहले सिंचाई धीरे-धीरे कम करें * पौधों को प्रतिदिन कुछ घंटों के लिए धूप में रखें * इस दौरान खाद डालना बंद कर दें * रोपण से 1-2 दिन पहले सिंचाई रोक दें * छाया कम करके हवा का संचार बढ़ाएँ

अवधि- * फसल और जलवायु परिस्थितियों के आधार पर, कठोर बनाने की प्रक्रिया आमतौर पर 5-10 दिनों तक की जाती है।

रोपण तकनीक: सही तरीके से रोपण करने से खेत में पौधों की बेहतर स्थापना सुनिश्चित होती है।

सही अवस्था * पौधे स्वस्थ और उचित उम्र के होने चाहिए

रोपण का समय * रोपण सुबह जल्दी या शाम को देर से करें * गर्मी के मौसम में रोपण से बचें

दूरी और रोपण * अनुशासित दूरी बनाए



रखें * पौधों को उचित गहराई पर लगाएं * सिंचाई * रोपण के तुरंत बाद हल्की सिंचाई करें * प्रारंभिक वृद्धि के दौरान मिट्टी में नमी बनाए रखें

सामान्य गलतियाँ और उनके समाधान

गलती- * रोपाई से पहले पौधों को कठोर न बनाना * नर्सरी में अधिक पानी देना * घटिया गुणवत्ता वाले बीजों का उपयोग * गर्म मौसम में रोपाई

समाधान- * हमेशा पौधों को कठोर बनाएं * उचित नमी बनाए रखें * प्रमाणित बीजों का उपयोग करें * ठंडे मौसम में रोपाई करें

निष्कर्ष: सब्जी की खेती की सफलता निर्धारित करने में पौध प्रबंधन एक महत्वपूर्ण कारक है। नर्सरी में उचित तरीके से पौधे उगाना, उन्हें कठोर बनाना और रोपाई करना मिलकर बेहतर पौध विकास, कम मृत्यु दर और अधिक उपज सुनिश्चित करते हैं। इनमें से, पौधों को कठोर बनाना खेत की परिस्थितियों और पर्यावरणीय तनावों का सामना करने के लिए तैयार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यद्यपि यह एक सरल और कम लागत वाली प्रक्रिया है, फिर भी किसान अक्सर इसे नजरअंदाज कर देते हैं, जिससे अनावश्यक नुकसान होता है। उचित कठोर बनाने की तकनीकों के साथ-साथ वैज्ञानिक नर्सरी और रोपाई विधियों को अपनाकर किसान फसल की पैदावार में उल्लेखनीय सुधार कर सकते हैं। इससे न केवल उत्पादकता बढ़ती है बल्कि लागत भी कम होती है और समग्र लाभप्रदता में वृद्धि होती है। इसलिए, टिकाऊ और लाभदायक सब्जी उत्पादन प्राप्त करने के लिए किसानों के लिए पौध प्रबंधन प्रक्रियाओं, विशेष रूप से कठोर बनाने पर उचित ध्यान देना आवश्यक है।



मध्य भारत कृषक भारती

Participate into the Future of Agriculture & Agro Farming Technology

KISAN
**AGRI & AGRO
TECH EXPO**
ANDHRA PRADESH

The International B2B and B2C Exhibition
and Conference on Agriculture &
Horticulture Technologies

26-28 JUNE 2026

(10.30 am to 6.30 pm)

**Vijayawada, Amaravathi,
Andhra Pradesh**



**This Event Endorsement
& Supported by***

* Confirmation invited



Organised by:



SHINY TRADE
EXHIBITIONS

Call/E-mail for more Information:

+91-9849583036, 9989113036

agri.agrotechexpo@gmail.com

- Farm Machinery
- Agriculture Inputs
- Cold Chain
- Processing Technologies
- Dairy, Poultry & Live Stock
- Organic Farming

Amaravati - The People's Capital of Andhra Pradesh, The Land of Infinite Opportunities

मई-2026



मध्य भारत कृषक भारती

मई-2026



संतुलित उर्वरक उपयोग

सही मात्रा – सही समय – सही तरीका

उपज अधिक, लागत कम, मुनाफा अधिक



संतुलित उर्वरक क्या है?

फसल की अच्छी वृद्धि और अधिक उपज के लिए नाइट्रोजन (N), फॉस्फोरस (P), पोटैश (K) के साथ सूक्ष्म पोषक तत्वों का संतुलित उपयोग आवश्यक है। केवल यूरिया का अधिक उपयोग मिट्टी की उर्वरता को घटाता है और लाभ कम करता है।



संतुलित उर्वरक उपयोग के लाभ

- फसल की अच्छी वृद्धि और अधिक उपज
- मिट्टी की सेहत में सुधार
- लागत में कमी व मुनाफा अधिक
- मिट्टी की उर्वरता और जैविक कार्बन में वृद्धि
- पर्यावरण संरक्षण



संतुलित उर्वरक का सही उपयोग कैसे करें?



मिट्टी की जांच कराएं

मिट्टी की जांच से पोषक तत्वों की कमी का पता चलता है और सही उर्वरक चयन में मदद मिलती है।



संतुलित उर्वरकों का उपयोग करें

केवल नाइट्रोजन नहीं, बल्कि N, P, K और सूक्ष्म पोषक तत्वों का संतुलित उपयोग करें।



सही समय पर प्रयोग करें

बुवाई के समय फॉस्फोरस और पोटैश दें तथा नाइट्रोजन को भागी में दें।



सही तरीका अपनाएं

यूरिया को छिड़कने के बजाय मिट्टी में डालें या पंक्तियों के पास डालें और सिंचाई करें।



फसल चक्र और मिश्रित खेती अपनाएं

फसल चक्र से मिट्टी की सेहत बनी रहती है और पोषक तत्वों का संतुलित बना रहता है।



असंतुलित उर्वरक उपयोग के दुष्परिणाम



मिट्टी की उर्वरता में कमी

केवल यूरिया के अधिक उपयोग से मिट्टी की उर्वरता घटती है।



उपज में कमी

पोषक तत्वों की कमी से फसल की वृद्धि और उपज कम होती है।



खर्च अधिक, लाभ कम

अधिक उर्वरक का उपयोग करने पर भी अपेक्षित उपज नहीं मिलती और लागत बढ़ जाती है।



मिट्टी की संरचना खराब होती है

मिट्टी सख्त, अम्लीय और कम उपजाऊ हो जाती है।



पर्यावरण को नुकसान

अतिरिक्त उर्वरक जल और वायु प्रदूषण का कारण बनते हैं तथा जलवायु परिवर्तन को बढ़ाते हैं।

मिट्टी की सेहत के लिए – हर किसान अपनाए हरी खाद (ग्रीन मैन्चोरिंग)

हरी खाद (ग्रीन मैन्चोरिंग) मिट्टी में जैविक पदार्थ, नाइट्रोजन और अन्य पोषक तत्वों की पूर्ति करती है, मिट्टी को भुरभुरी बनाती है और रासायनिक उर्वरकों की आवश्यकता कम करती है।

हरी खाद के लाभ

- मिट्टी की जैविक कार्बन में वृद्धि
- मिट्टी की संरचना में सुधार
- नाइट्रोजन की प्राकृतिक पूर्ति
- जल धारण क्षमता बढ़ती है।
- रासायनिक उर्वरकों की बचत
- उपज और गुणवत्ता में वृद्धि

हरी खाद के लिए उपयुक्त फसलें (प्रधान फसल से पहले उगाएं)



हैचा (Sesbania) सुनेपी (Sesbania) सोयिया (Cowpea) मूंग (Green Gram) बरसीम (सर्सी में)

हरी खाद की मात्रा (औसत)

45-50 दिन की हरी फसल को खेत में पलटने पर लगभग 40-50 टन प्रति हेक्टेयर हरा जैविक पदार्थ (ग्रीन बायोमास) प्राप्त होता है। इसे मिट्टी में मिलाने से 3-5 टन तक जैविक पदार्थ बनता है और लगभग 40-60 किग्रा नाइट्रोजन की प्राकृतिक उपलब्धता होती है।



हरी खाद को कैसे इस्तेमाल करें?

- 1 प्रधान फसल से 45-50 दिन पहले हरी खाद की फसल बोएं।
- 2 फसल 45-50 दिन की होने पर फूल आने से पहले काटें।
- 3 इसे खेत में पलट कर मिट्टी में मिला दें।
- 4 मिलाने के बाद हल्की सिंचाई करें।
- 5 15-20 दिन बाद प्रधान फसल की बुवाई करें।

अच्छी फसल के लिए संतुलित पोषण के साथ अपनाएं ये उपाय

जैविक खाद का प्रयोग करें

गोबर की खाद, कम्पोस्ट, वर्मी कम्पोस्ट का उपयोग करें।



फसल अवशेष न जलाएं

फसल अवशेषों को मिट्टी में मिलाएं, इससे मिट्टी की उर्वरता बढ़ती है।



सूक्ष्म पोषक तत्वों का प्रयोग करें

जिंक, आयरन, सल्फर, बोरोन जैसे सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी पूरी करें।



सिंचाई का प्रबंधन करें

सही समय पर सिंचाई करें, जल की बचत करें और उपज बढ़ाएं।



समेकित पोषक तत्व प्रबंधन अपनाएं

जैविक + रासायनिक + जैव उर्वरकों का समन्वित उपयोग करें।



स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक राजू सिंह गुर्जर द्वारा कंचन ऑफसेट, चिंतामणि शास्त्री की गली, सात भाई की गोठ, लक्कड़खाना, ग्वालियर, म.प्र.-474001 से मुद्रित एवं ई.एम.-120, कृशवाह मार्केट के पास, दीनदयाल नगर, ग्वालियर, म.प्र.-474005 से प्रकाशित। संपादक : राजू सिंह गुर्जर (मोबा. 9425101132, 0751-4070802)